मिथ्यातम ही महापाप है

(श्री राजमल पवंया)

मिथ्यातम ही महा पाप है, सब पापो का बाप है।
सब पापो से बड़ा पाप है, घोर जगत सताप है ॥टेक॥
हिंसादिक पाचो पापो से, महा भयकर दुखदाता।
सप्त व्यसन के पापो से भी, तीव्र पाप जग विख्याता ॥
है अनादि से अग्रहीत ही, शाश्वत शिव सुख का घाता।
वस्तु स्वरूप इसी के कारण, नहीं समझ मे आ पाता ॥
जिन वाणी सुनकर भी पागल, करता पर का जाप है।
मिथ्यातम ही महापाप है ॥१॥
सज्ञी पचेन्द्रिय होता है, तो ग्रहीत अपनाता है।
दो हजार सागर त्रस रहकर, फिर निगोद मे आता है।
पर मे आपा माना स्वय को, भूल महा दुख पाता है।
किन्तु न इस मिथ्यात्व मोह के, चक्कर से बचपाता है ॥
ऐसे महापाप से बचना, यह जिनकुल का माप है।
मिथ्यातम ही महापाप है ॥२॥
इससे बढकर महा शत्रु तो, नही जीव का कोई भी।
इससे बढकर महा दुष्ट भी, नही जगत मे कोई भी ॥
इसके नाश किए बिन होता, कभी नहीं व्रत कोई भी।
एकदेश या पूर्ण देशव्रत, कभी न होता कोई भी ॥
क्रिया काड उपदेश आदि सब, झूठा वृथा प्रलाप है।
मिथ्यातम ही महापाप है ॥३॥
यदि सच्चा सुख पाना है तो, तुम इसको सहार करो।
तत्क्षण सम्यक्दर्शन पाकर, यह भव सागर पार करो ॥
वस्तु स्वरूप समझने को अब, तत्वो का अभ्यास करो।
देह पृथक है, जीव पृथक है, यह निश्चय विश्वास करो ॥
स्वय अनादिअनत नाथ तू, स्वय सिद्ध प्रभु आप है।
मिथ्यातम ही महापाप है ॥४॥

जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था

"जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।"

[जैनदर्शन का सार]

स्व—(१) अमूर्तिक प्रदेशो का पुज (२) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी (३) अनादिनिधन (४) वस्तु आप है।

पर—(१) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यो का पिण्ड (२) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित (३) नवीन जिसका सयोग हुआ है ऐसे शरीरादि पुद्गल पर हैं। [मोक्षमार्गप्रकाशक]

सम्पूर्ण दुःखों का अभाव होकर सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति का उपाय

अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती। पर को परिणमित कराने का भाव मिथ्यादर्शन है।

[मोक्षमार्गप्रकाशक]

अपने-अपने सत्त्व कूं, सर्व वस्तु विलसाय।
ऐसे चितवै जीव तब, परतैं ममत न थाय॥

सत् द्रव्य लक्षणम्। उत्पाद व्यय ध्रौव्य युक्तं सत्।

[मोक्षशास्त्र]

"Permanancy with a Change"

[बदलने के साथ स्थायित्व]

NO SUBSTANCE IS EVER DESTROYED
IT CHANGES ITS FORM ONLY

[कोई वस्तु नष्ट नहीं होती, प्रत्येक वस्तु अपनी अवस्था बदलती है।]

प्रकाशकीय निवेदन

जगत के सब जीव सुख चाहते हैं अर्थात् दु ख से भयभीत है । सुख पाने के लिए यह जीव सर्व पदार्थों को अपने भावो के अनुसार पलटना चाहता है । परन्तु अन्य पदार्थो को बदलने का भाव मिथ्या है क्योकि पदार्थ तो स्वयमेव पलटते है और इस जीव का कार्य मात्र ज्ञाता-दृष्टा है ।

सुखी होने के लिए जिन वचनो को समझना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान मे जिन धर्म के रहस्य को बतलाने वाले अध्यात्म पुरुष श्री कान जी स्वामी थे । ऐसे सत्पुरुष के चरणो की शरण मे रहकर हमने जो कुछ सिखा पढा है उसके अनुसार प० कैलाश चन्द्र जी जैन द्वारा गुथित जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सातो भाग जिन-धर्म के रहस्य को अत्यन्त स्पष्ट करने वाले होने से चौथी बार प्रकाशित हो रहे है ।

इस प्रकाशन कार्य मे हम लोग अपने मडल के विवेकी और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र को पहचानने वाले स्वर्गीय श्री रूप चन्द्र जी, माज़रा वालो को स्मरण करते है जिनकी शुभप्रेरणा से इन ग्रन्थो का प्रकाशन कार्य प्रारम्भ हुआ था ।

हम बडे भक्ति भाव से और विनय पूर्वक ऐसी भावना करते हैं कि सच्चे सुख के अर्थी जीव जिन वचनो को समझकर सम्यग्दर्शन प्राप्त करे । ऐसी भावना से इन पुस्तको का चौथा प्रकाशन आपके हाथ मे है ।

इस तीसरे भाग मे भेद विज्ञान, विश्व, द्रव्य पर्याय का स्वरूप स्पष्टतारूप से सरल भाषा मे समझाया गया है ताकि पात्र जीव वस्तुस्वरूप को समझकर धर्म की प्राप्ति कर क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन सके ।

विनीत
श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु
देहरादून

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला
तीसरे भाग की विषय सूची

प्रारम्भ से पहले अशुद्धियों को शुद्ध कीजिये

पृष्ठ सख्या	पक्ति	अशुद्धि	शुद्ध
४	२६	दोर्व	दीर्घ
६	२४	दानो	दोनो
१६	५	जन	जैन
१६	६	सामथ्यता	सामर्थ्यता
२०	१८	घरशुभ्रसागर	घोरशुभ्रसागर
२६	१	जनना	जानना
२७	८	रोग	राग
३०	१७	औदायक	औदयिक
३१	२८	वियोग	त्रियोग
४२	११	मिलाने	मिलने
४६	७	वीवराग	वीतराग
६६	१०	०	५०
८४	१६	सवथा	सर्वथा
६१	चार्ट ३	अर्घ	अधर्म
१४५	८	सम्हालता	सम्भालता
१५१	२५	मै	मे
१५२	१२	तो	जो
१५२	२६	शुभ-शुभ	शुभाशुभ
१५३	१	शभाशभ	शुभाशुभ
१५२	५	भी	की

१७२	१५	मौ	मां
१७५	१४	अनुमयो	आपको
१७७	२	है	हैं
१८१	८	रा	हरा
१८८	१२	सम्यग्दर्शन	सम्यग्दर्शन
१९०	१	केवल	केवली
२०४	११	गा	गी
२१८	१८	अगा	आगा
२३१	३	पाणी	पाता
२३५	१६	हादानी	भद्दानी
२८६	६	नाता	नहीं
३१७	६	३०	३०२
३२२	७	अननार	अनुगार
३४५	१४	नियापादिता	निपापाविनयित
३५२	१४	उनयचंग	उनयचप
३५४	१	भा	भी
३५६	११	है	है
३६१	७	मंत्र	सर्वंत्र

❦ ❦ ❦

जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था

"जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।"

[जैनदर्शन का सार]

स्व – (१) अमूर्तिक प्रदेशो का पुज (२) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो का धारी (३) अनादिनिधन (४) वस्तु आप है।

पर—(१) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यो का पिण्ड (२) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित (३) नवीन जिसका सयोग हुआ है (४) ऐसे शरीरादि पुद्गल पर हैं। [मोक्षमार्गप्रकाशक]

सम्पूर्ण दुःखों का अभाव होकर सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति का उपाय

अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती। पर को परिणमित कराने का भाव मिथ्यादर्शन है।

[मोक्षमार्गप्रकाशक]

अपने-अपने सत्व कूं, सर्व वस्तु विलसाय।
ऐसे चितवै जीव तब, परतैं ममत न थाय॥

सत् द्रव्य लक्षणम्। उत्पाद व्यय ध्रौव्य युक्तं सत्।

[मोक्षशास्त्र]

"Permanancy with a Change"

[बदलने के साथ स्थायित्व]

NO SUBSTANCE IS EVER DESTROYED
IT CHANGES ITS FORM ONLY

[कोई वस्तु नष्ट नहीं होती, प्रत्येक वस्तु अपनी अवस्था बदलती है।]

ॐ

लेखक की भूमिका

अनादिकाल से परमगुरु सर्वज्ञदेव, अपरगुरु गणधरादि ने जिस वस्तुस्वरूप का वर्णन किया है, वही वस्तुस्वरूप पूज्य श्री कानजी स्वामी बतला रहे थे। उसी वस्तुस्वरूप का ज्ञान जो मेरे ज्ञान मे आया, उसे मैं सदैव प्रश्नोत्तरो के रूप मे लेखबद्ध करता रहा था। धीरे-धीरे सरल प्रश्नोत्तरो के रूप मे समस्त जैन-शासन का सार लेखबद्ध हो गया। मेरे विचार मे सत्य बात समझ मे न आने का मुख्य कारण जिनेन्द्रदेव की आज्ञा का पता न होना और जिनागम का रहस्य दृष्टि मे न आने से अपनी मिथ्या मान्यताओ के अनुसार शास्त्रो का अभ्यास करना है। जिसके फलस्वरूप अज्ञानी जीव स्वय की मिथ्याबुद्धि से ससार मार्ग का श्रद्धान-ज्ञान-आचरण करते हैं। वस्तुत किसी भी अनुयोग के जैन शास्त्र का स्वाध्याय करने से पूर्व यदि निम्न प्रश्नोत्तरो का मनन कर लिया जाय तो शास्त्रो का सही अर्थ समझने मे सुविधा रहेगी तथा ससार मार्ग से बचने का अवकाश रहेगा।

प्रश्न १—प्रत्येक वाक्य मे से चार बातें कौन-कौनसी निकालने से रहस्य स्पष्ट समझ मे आ सकता है ?

उत्तर—(१) जिन, जिनवर और जिनवरवृषभ क्या कहते हैं ? (२) जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो के कथन को सुनकर ज्ञानी क्या जानते हैं और क्या करते हैं ? (३) जिन-जिनवर और जिनवर-वृषभो के कथन को सुनकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि पात्र भव्य जीव क्या जानते हैं और क्या करते हैं ? (४) जिन-जिनवर और

जिनवरवृषभो के कथन को सुनकर दीर्घ ससारी मिथ्यादृष्टि क्या जानते हैं और क्या करते है ?

प्रश्न २—जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो ने पदार्थ का स्वरूप कैसा और क्या बताया है ? जिसके श्रद्धान से सर्व दु:ख दूर हो जाता है ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।" जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो ने बताया है कि पदार्थों का ऐसा श्रद्धान करने से सर्व-दु ख दूर हो जाता है।

प्रश्न ३—जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो के ऐसे कथन को सुनकर ज्ञानी क्या जानते हैं और क्या करते हैं ?

उत्तर—केवली के समान पदार्थों के स्वरूप का ज्ञान हो गया है, मात्र प्रत्यक्ष और परोक्ष का अन्तर रहता है। ज्ञानी अपने त्रिकाली ज्ञायक स्वभाव मे विशेष स्थिरता करके श्रेणी मांडकर सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेते हैं।

प्रश्न ४—जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो के कथन को सुनकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि पात्र भव्य जीव क्या जानते हैं और क्या करते हैं ?

उत्तर—अहो-अहो ! जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो का कथन महान उपकारी है तथा प्रत्येक पदार्थ की स्वतन्त्रता ध्यान मे आ जाती है। अपने त्रिकाली ज्ञायक स्वभाव का आश्रय लेकर ज्ञानी बनकर ज्ञानी की तरह निज-स्वभाव मे विशेष एकाग्रता करके श्रेणी माडकर सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेते है।

प्रश्न ५—जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो के कथन को सुनकर दीर्घ संसारी मिथ्यादृष्टि क्या जानते हैं और क्या करते हैं ?

उत्तर—जिन-जिनवर और जिनवरवृषभो के कथन का विरो

करते हैं तथा मिथ्यात्व को पुष्टि करके चारो गतियो मे घूमते हुए निगोद चले जाते हैं।

प्रश्न ६—प्रथम किन-किन पांच बातो का निर्णय करके शास्त्राभ्यास करे तो कल्याण का अवकाश है ?

उत्तर—(१) व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसका पर्याय मे ही होता है, दो द्रव्यो मे व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध कभी भी नही होता है। (२) अज्ञानी का व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध शुभाशुभ विकारीभावो के साथ कहो तो कहो, परन्तु पर द्रव्यो के साथ तथा द्रव्यकर्मों के साथ तो व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध किसी भी अपेक्षा नही है। (३) ज्ञानी का शुद्ध भावो के साथ व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। (४) मैं आत्मा व्यापक और शुद्धभाव मेरा व्याप्य है। ऐसे विकल्पो मे भी रहेगा तो धर्म की प्राप्ति नही होगी। (५) मैं अनादिअनन्त ज्ञायक एकरूप भगवान हूँ और मेरी पर्याय मे मेरी मूर्खता के कारण एक-एक समय का बहिरात्मपना चला आ रहा है ऐसा जाने-माने तो तुरन्त बहिरात्मपने का अभाव होकर अन्तरात्मा बन जाता है। इन पाँच बातो का निर्णय करके शास्त्राभ्यास करे तो कल्याण का अवकाश है।

प्रश्न ७—आगम के प्रत्येक वाक्य का मर्म जानने के लिए क्या-क्या जानकर स्वाध्याय करें ?

उत्तर—चारो अनुयोगो के प्रत्येक वाक्य मे (१) शब्दार्थ, (२) नयार्थ, (३ मतार्थ, (४) आगमार्थ और (५) भावार्थ निकालकर स्वाध्याय करने से जैनधर्म के रहस्य का मर्मी बन जाता है।

प्रश्न ८—शब्दार्थ क्या है ?

उत्तर—प्रकरण अनुसार वाक्य या शब्द का योग्य अर्थ समझना शब्दार्थ है।

प्रश्न ९—नयार्थ क्या है ?

उत्तर—किस नयका वाक्य है ? उसमे भेद-निमित्तादि का उपचार बताने वाले व्यवहारनय का कथन है या वस्तुस्वरूप बतलाने वाले

निश्चयनय का कथन है—उसका निर्णय करके अर्थ करना वह नयार्थ है।

प्रश्न १०—मतार्थ क्या है?

उत्तर—वस्तुस्वरूप से विपरीत ऐसे किस मत का (सांख्य-बौद्धादिक) का खण्डन करता है। और स्याद्वाद मत का मण्डन करता है—इस प्रकार शास्त्र का कथन समझना वह मतार्थ है।

प्रश्न ११—आगमार्थ क्या है?

उत्तर—सिद्धान्त अनुसार जो अर्थ प्रसिद्ध हो तदनुसार अर्थ करना वह आगमार्थ है।

प्रश्न १२—भावार्थ क्या है?

उत्तर—शास्त्र कथन का तात्पर्य—साराश, हेय उपादेयरूप प्रयोजन क्या है? उसे जो बतलाये वह भावार्थ है। जैसे—निरजन ज्ञानमयी निज परमात्म द्रव्य ही उपादेय है, इसके सिवाय निमित्त अथवा किसी भी प्रकार का राग उपादेय नही है। यह कथन का भावार्थ है।

प्रश्न १३—पदार्थो का स्वरूप सीदे-सादे शब्दो मे क्या है, जिनके श्रद्धान-ज्ञान से सम्पूर्ण दु.ख का अभाव हो जाता है?

उत्तर—"जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोक प्रमाण असँख्यात काल द्रव्य है। प्रत्येक द्रव्य मे अनन्त-अनन्त गुण है। प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण मे एक ही समय मे एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद और गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण मे हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।" इसके श्रद्धान-ज्ञान से सम्पूर्ण दु.ख का अभाव जिनागम मे बताया है।

प्रश्न १४—किसके समागम मे रहकर तत्त्व का अभ्यास करना चाहिए और किसके समागम में रहकर तत्त्व का अभ्यास कभी नहीं करना चाहिए?

उत्तर—ज्ञानियो के समागम मे रहकर ही तत्त्व अभ्यास करना चाहिए और अज्ञानियो के समागम मे रहकर तत्त्व अभ्यास कभी भी नही करना चाहिए।

प्रश्न १५—मोक्ष मार्ग प्रकाशक में 'ज्ञानियो के समागम मे तत्त्व अभ्यास करना और अज्ञानियो के समागम मे रहकर तत्त्व अभ्यास नहीं करना'' ऐसा कहीं लिखा है ?

उत्तर—प्रथम अध्याय पृष्ठ १७ मे लिखा है कि "विशेष गुणो के धारी वक्ता का सयोग मिले तो बहुत भला है ही और न मिले तो श्रद्धानादिक गुणो के धारी वक्ताओ के मुख से ही शास्त्र सुनना। इस प्रकार के गुणो के धारक मुनि अथवा श्रावक सम्यग्दृष्टि उनके मुख से तो शास्त्र सुनना योग्य है और पद्धति बुद्धि से अथवा शास्त्र सुनने के लोभ से श्रद्धानादि गुण रहित पापी पुरुषो के मुख से शास्त्र सुनना उचित नही है।"

प्रश्न १६—पाहुड़ दोहा मे "किसका सहवास नहीं करना चाहिए" ऐसा कहां लिखा है ?

उत्तर—पाहुड दोहा बीस मे लिखा है कि "विष भला, विषधर सर्प भला, अग्नि या बनवास का सेवन भी भला, परन्तु जिनधर्म से विमुख ऐसे मिथ्यात्वियो का सहवास भला नही।"

प्रश्न १७—अपना भला चाहने वाले को कौन-कौन सी सात बातो का निर्णय करना चाहिये ?

उत्तर—(२) सम्यग्दर्शन से ही धर्म का प्रारम्भ होता है। (२) सम्यग्दर्शन प्राप्त किए बिना किसी भी जीव को सच्चे व्रत, सामायिक प्रतिक्रमण, तप, प्रत्याख्यानादि नही होते, क्योकि वह क्रिया प्रथम पाचवें गुणस्थान मे शुभभावरूप से होती है। (३) शुभभाव ज्ञानी और अज्ञानी दोनो को होते है। किन्तु अज्ञानी उससे धर्म होगा, हित होगा ऐसा मानता है। ज्ञानी की दृष्टि मे हेय होने से वह उससे कदापि हितरूप धर्म का होना नही मानता है। (४) ऐसा नही

समझना कि धर्मी को शुभभाव होता ही नही, किन्तु वह शुभभाव को धर्म अथवा उससे क्रमश धर्म होगा—ऐसा नही मानता, क्योकि अनन्त वीतराग देवो ने उसे बन्ध का कारण कहा है। (५) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ कर नही सकता, उसे परिणमित नही कर सकता, प्रेरणा नही कर सकता, लाभ-हानि नही कर सकता; उस पर प्रभाव नही डाल सकता, उसकी सहायता या उपकार नही कर सकता, उसे मार-जिला नही सकता, ऐसी प्रत्येक द्रव्य-गुण-पर्याय की सम्पूर्ण स्वतन्त्रता अनन्त ज्ञानियो ने पुकार-पुकार कर कही है। (६) जिन-मत मे तो ऐसा परिपाटी है कि प्रथम सम्यक्त्व और फिर व्रतादि होते है। वह सम्यक्त्व स्व-परका श्रद्धान होने पर होता है तथा वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग का अभ्यास करने से होता है। इसलिए प्रथम द्रव्यानुयोग के अनुसार श्रद्धान करके सम्यग्दृष्टि बनना चाहिए। (७) पहले गुणस्थान मे जिज्ञासु जीवो को शास्त्राभ्यास, अध्ययन-मनन, ज्ञानी पुरुषो का धर्मोपदेश-श्रवण, निरन्तर उनका समागम, देवदर्शन, पूजा, भक्तिदान आदि शुभभाव होते हैं। किन्तु पहले गुणस्थान मे सच्चे व्रत, तप आदि नही होते हैं।

प्रश्न १८—उभयाभासी के दोनों नयो का ग्रहण भी मिथ्या बतला दिया तो वह क्या करे? (दोनो नयों को किस प्रकार समझें?)

उत्तर—निश्चयनय से जो निरुपण किया हो उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अगीकार करना और व्यवहारनय से जो निरु-पण किया हो उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोडना।

प्रश्न १९—व्यवहारनय का त्याग करके निश्चयनय को अंगीकार करने का आदेश कहीं भगवान अमृतचन्द्राचार्य ने दिया है?

उत्तर—हा, दिया है। समयसार कलश १७३ मे आदेश दिया है कि "सर्व ही हिसादि व अहिसादि मे अध्यवसाय है सो समस्त ही छोडना—ऐसा जिनदेवो ने कहा है। अमृतचन्द्राचार्य कहते हैं कि—इसलिये मैं ऐसा मानता हू कि जो पराश्रित व्यवहार है सो सर्व ही

छुड़ाया है तो फिर सन्तपुरुष एक परम त्रिकाली ज्ञायक निश्चय ही को अगीकार करके शुद्धज्ञानघनरूप निज महिमा मे स्थिति क्यो नहीं करते ? ऐसा कहकर आचार्य भगवान ने खेद प्रकट किया है।

प्रश्न २०—निश्चयनय को अगीकार करने और व्यवहारनय के त्याग के विषय मे भगवान कुन्द-कुन्द आचार्य ने मोक्षप्राभृत गाथा ३१ मे क्या कहा है ?

उत्तर—जो व्यवहार की श्रद्धा छोडता है वह योगी अपने आत्म कार्य मे जागता है तथा जो व्यवहार मे जागता है वह अपने कार्य मे सोता है। इसलिए व्यवहारनय का श्रद्धान छोडकर निश्चयनय का श्रद्धान करना योग्य है। यही वात समाधितन्त्र गाथा ७८ मे भगवान पूज्यपाद आचार्य ने वताई है।

प्रश्न २१—व्यवहारनय का श्रद्धान छोड़कर निश्चयनय का श्रद्धान करना क्यो योग्य है ?

उत्तर—व्यवहारनय (१) स्वद्रव्य, परद्रव्य को (२) तथा उनके भावों को (३) तथा कारण-कार्यादि को, किसी को किसी मे मिला कर निरूपण करता है। सो ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है इसलिए उसका त्याग करना चाहिए और निश्चयनय उन्ही का यथा-वत निरूपण करता है। तथा किसी को किसी मे नही मिलाता और ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है। इसलिये उसका श्रद्धान करना चाहिए।

प्रश्न २२—आप कहते हो कि व्यवहारनय के श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है इसलिए उसका त्याग करना और निश्चयनय के श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है इसलिए उसका श्रद्धान करना। परन्तु जिनमार्ग में दोनों नयो का ग्रहण करना कहा है। उसका क्या कारण है ?

उत्तर—जिनमार्ग मे कही तो निश्चयनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे तो सत्यार्थ ऐसे ही है'—ऐसा जानना तथा कही

व्यवहारनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है। उसे "ऐसे है नही, निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है"—ऐसा जानना। इस प्रकार जानने का नाम ही दोनो नयो का ग्रहण है।

प्रश्न २३—कुछ मनीषी ऐसा कहते हैं कि "ऐसे भी है और ऐसे भी है" इस प्रकार दोनो नयों का ग्रहण करना चाहिये; क्या उन महानुभावो का कहना गलत है ?

उत्तर—हा, बिल्कुल गलत है, क्योकि उन्हे जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा का पता नही है तथा दोनो नयो के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर "ऐसे भी है और ऐसे भी है" इस प्रकार भ्रमरूप प्रवर्त्तन से तो दोनो नयो का ग्रहण करना नही कहा है।

प्रश्न २४—व्यवहारनय असत्यार्थ है। तो उसका उपदेश जिनमार्ग मे किसलिये दिया ? एक मात्र निश्चयनय ही का निरूपण करना था।

उत्तर—ऐसा ही तर्क समयसार मे किया है। वहाँ यह उत्तर दिया है—जिस प्रकार म्लेच्छ को म्लेच्छ भाषा बिना अर्थ ग्रहण कराने मे कोई समर्थ नही है, उसी प्रकार व्यवहार के बिना (ससार मे ससारी भाषा बिना) परमार्थ का उपदेश अशक्य है। इस लिये व्यवहार का उपदेश है। इस प्रकार निश्चय का ज्ञान कराने के लिये व्यवहार द्वारा उपदेश देते हैं। व्यवहारनय है, उसका विषय भी है, परन्तु वह अगीकार करने योग्य नही है।

प्रश्न २५—व्यवहार बिना निश्चय का उपदेश कैसे नही होता है। इसके पहले प्रकार को समझाइए ?

उत्तर—निश्चय से आत्मा पर द्रव्यो से भिन्न स्वभावो से अभिन्न स्वयसिद्ध वस्तु है। उसे जो नही पहचानते उनसे इसी प्रकार कहते रहे तब तो वे समझ नही पाये। इसलिये उनको व्यवहारनय से शरीरादिक पर-द्रव्यो की सापेक्षता द्वारा नर-नारक

पृथ्वीकायादिकरूप जीव के विशेष किये, तब मनुष्य जीव है, नारको जीव है। इत्यादि प्रकार सहित उन्हे जीव की पहचान हुई। इस प्रकार व्यवहार बिना (शरीर के सयोग बिना) निश्चय के (आत्मा के) उपदेश का न होना जानना।

प्रश्न २६—प्रश्न २५ मे व्यवहारनय से शरीरादिक सहित जीव की पहचान कराई तब ऐसे व्यवहारनय को कैसे अंगीकार नहीं करना चाहिए ? सो समझाइए।

उत्तर—व्यवहारनय से नर-नारक आदि पर्याय ही को जीव कहा सो पर्याय ही को जीव नही मान लेना। वर्तमान पर्याय तो जीव-पुद्गल के सयोगरूप है। वहां निश्चय से जीव द्रव्य भिन्न है—उस ही को जीव मानना। जीव के सयोग से शरीरादिक को भी उपचार से जीव कहा सो कथनमात्र ही है। परमार्थ से शरीरादिक जीव होते नही, ऐसा ही श्रद्धान करना। इस प्रकार व्यवहारनय (शरीरादि वाला जीव) अगीकार करने योग्य नही है।

प्रश्न २७—व्यवहार बिना (भेद बिना) निश्चय का (अभेद आत्मा का) उपदेश कैसे नहीं होता ? इस दूसरे प्रकार को समझाइये।

उत्तर—निश्चय से आत्मा अभेद वस्तु है। उसे जो नही पहचानते उनसे इसी प्रकार कहते रहे तो वे समझ नही पाये। तब उनको अभेद वस्तु मे भेद उत्पन्न करके ज्ञान-दर्शनादि गुण-पर्यायरूप जीव के विशेष किये। तब जानने वाला जीव है, देखने वाला जीव है। इत्यादि प्रकार सहित जीव की पहचान हुई। इस प्रकार भेद बिना अभेद के उपदेश का न होना जानना।

प्रश्न २८—प्रश्न २७ मे व्यवहारनय से ज्ञान-दर्शन भेद द्वारा जीव की पहचान कराई। तब ऐसे भेदरूप व्यवहारनय को कैसे अंगीकार नहीं करना चाहिये ? सो समझाइये।

उत्तर—अभेद आत्मा मे ज्ञान-दर्शनादि भेद किये सो उन्हे भेद

रूप ही नही मान लेना क्योकि भेद तो समझाने के अर्थ किये हैं। निश्चय से आत्मा अभेद ही है। उस ही को जीववस्तु मानना। सज्ञा-सख्या-लक्षण आदि से भेद कहे सो कथन मात्र ही है। परमार्थ से द्रव्यगुण भिन्न-भिन्न नही है, ऐसा ही श्रद्धान करना। इस प्रकार भेदरूप व्यवहारनय अगीकार करने योग्य नही है।

प्रश्न २९—व्यवहार बिना निश्चय का उपदेश कैसे नहीं होता ? इसके तीसरे प्रकार को समझाइये।

उत्तर—निश्चय से वीतराग भाव मोक्षमार्ग है। उसे जो नही पहचानते उनको ऐसे ही कहते रहे तो वे समझ नही पाये। तब उनको तत्त्व श्रद्धान ज्ञानपूर्वक, परद्रव्य के निमित्त मिटने की सापेक्षता द्वारा व्यवहारनय से व्रत-शील-सयमादि को वीतराग भाव के विशेष बतलाये तब उन्हे वीतरागभाव की पहचान हुई। इस प्रकार व्यवहार बिना निश्चय मोक्ष मार्ग के उपदेश का न होना जानना।

प्रश्न ३०—प्रश्न २९ मे व्यवहारनय से मोक्ष मार्ग की पहचान कराई। तब ऐसे व्यवहारनय को कैसे अंगीकार नहीं करना चाहिये ? सो समझाइए।

उत्तर—परद्रव्य का निमित्त मिलने की अपेक्षा से व्रत-शील-सयमादिक को मोक्षमार्ग कहा। सो इन्ही को मोक्षमार्ग नही मान लेना, क्योकि (१) परद्रव्य का ग्रहण-त्याग आत्मा के हो तो आत्मा परद्रव्य का कर्ता-हर्ता हो जावे। परन्तु कोई द्रव्य किसी द्रव्य के आधीन नही है। (२) इसलिए आत्मा अपने भाव जो रागादिक है, उन्हे छोडकर वीतरागी होता है। (३) इसलिए निश्चय से वीतराग भाव ही मोक्षमार्ग है। (४) वीतराग भावो के और व्रतादिक के कदाचित कार्य-कारणपना (निमित्त-नैमित्तकपना) है, इसलिए, व्रतादि को मोक्षमार्ग कहे सो कथनमात्र ही है। परमार्थ से बाह्यक्रिया

मोक्षमार्ग नही है—ऐसा ही श्रद्धान करना। इस प्रकार व्यवहारनय अगीकार करने योग्य नही है, ऐसा जानना।

प्रश्न ३१—जो जीव व्यवहारनय के कथन को ही सच्चा मान लेता है उसे जिनवाणी मे किन-किन नामो से सम्बोधन किया है ?

उत्तर—(१) पुरुषार्थ सिद्धयुपाय गाथा ६ मे कहा है कि "तस्य देशना नास्ति"। (२) समयसार कलश ५५ में कहा है कि "अज्ञान-मोह अन्धकार है उसका सुलटना दुर्निवार है"। (३) प्रवचनसार गाथा ५५ मे कहा है कि "वह पद-पद पर धोखा खाता है"। (४) आत्मावलोकन मे कहा है कि "यह उसका हरामजादीपना है"। इत्यादि सब शास्त्रो मे मूर्ख आदि नामो से सम्बोधन किया है।

प्रश्न ३२—परमागम के अमूल्य ११ सिद्धान्त क्या-क्या हैं, जो मोक्षार्थी को सदा स्मरण रखना चाहिए और वे जिनवाणी मे कहाँ कहाँ बतलाये हैं ?

उत्तर—(१) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श नही करता है, [समयसार गाथा ३] (२) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है। [समयसार गाथा ३०८ से ३११ तक] (३) उत्पाद, उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नही है। [प्रवचनसार गाथा १०१] (४ प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण मे ही होती है। [प्रवचनसार गाथ १०२] (५) उत्पाद अपने षटकारक के परिणमन से ही होता [पचास्तिकाय गाथा ६२] (६) पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न-भिन्न हैं [समयसार गाथा १८१ से १८३ तक] (७) भाव शक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी पडती नही। [समयसार ३३वी शक्ति (८) निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है [समयसार गाथा ११] (९) चारो अनुयोगो का तात्पर्य मात्र वीत रागता है। [पंचास्तिकाय गाथा १७२] (१०) स्वद्रव्य मे भी द्रव्य गुण-पर्याय का भेद विचारना वह अन्यवशपणा है। [नियमस

१४५] (११) ध्रुव का आलम्बन है वेदन नही है और पर्याय का वेदन है, परन्तु आलम्बन नही है।

प्रश्न ३३—पर्याय का सच्चा कारण कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—पर्याय का कारण उस समय पर्याय की योग्यता है। वास्तव मे पर्याय की एक समय की सत्ता ही पर्याय का सच्चा कारण है। [अ] पर्याय का कारण पर तो हो ही नही सकता है, क्योंकि परका तो द्रव्य क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक हैं। [आ] पर्याय का कारण त्रिकाली द्रव्य भी नही हो सकता है क्योंकि पर्याय एक समय की है यदि त्रिकाली कारण हो तो पर्याय भी त्रिकाल होनी चाहिए सो है नही। [इ] पर्याय का कारण अनन्तर पूर्व क्षणवर्ती पर्याय भी नही हो सकती है क्योंकि अभाव मे से भाव की उत्पत्ति नही हो सकती है। इसलिए यह सिद्ध होता है कि पर्याय का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न ३४—मुझ निज आत्मा का स्वद्रव्य-परद्रव्य क्या-क्या है, जिसके जानने-मानने से चारो गतियो का अभाव हो जावे?

उत्तर—(१) स्वद्रव्य अर्थात निर्विकल्प मात्र वस्तु परद्रव्य अर्थात सविकल्प भेद कल्पना, (२) स्वक्षेत्र अर्थात आधार मात्र वस्तु का प्रदेश, पर क्षेत्र अर्थात प्रदेशो मे भेद पडना (३) स्वकाल अर्थात वस्तुमात्र की मूल अवस्था, परकाल अर्थात एक समय की पर्याय, (४) स्वभाव अर्थात वस्तु के मूल की सहज शक्ति, परभाव अर्थात गुणभेद करना। [समयसार कलश २५२]

प्रश्न ३५—किस कारण से सम्यक्त्व का अधिकारी बन सकता है और किस कारण से सम्यक्त्व का अधिकारी नहीं बन सकता?

उत्तर—देखो! तत्त्व विचार की महिमा! तत्त्व विचार रहित देवादिक की प्रतीति करे, बहुत शास्त्रो का अभ्यास करे, व्रतादि पाले, तत्पश्चरणादि करे, उसको तो सम्यक्त्व होने का अधिकार नही और

तत्त्व विचार वाला इनके बिना भी सम्यक्त्व का अधिकारी होता है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २६०]

प्रश्न ३६—जीव का कर्तव्य क्या है ?

उत्तर—जीव का कर्तव्य तो तत्त्व निर्णय का अभ्यास ही है इसी से दर्शन मोह का उपशम तो स्वमेव होता है उसमे (दर्शनमोह के उपशम मे) जीव का कर्त्तव्य कुछ नही है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३१४]

प्रश्न ३७—जिनधर्म की परिपाटी क्या है ?

उत्तर—जिनमत मे तो ऐसी परिपाटी है कि प्रथम सम्यक्त्व होता है फिर व्रतादि होते है। सम्यक्त्व तो स्व-पर का श्रद्धान होने पर होता है, तथा वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग का अभ्यास करने से होता है। इसलिए प्रथम द्रव्य-गुण पर्याय का अभ्यास करके सम्यग्दृष्टि बनना प्रत्येक भव्य जीव का परम कर्तव्य है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २९३]

प्रश्न ३८—किन-किन ग्रन्थों का अभ्यास करे तो एक भूतार्थ स्वभाव का आश्रय बन सके ?

उत्तर—मोक्षमार्ग प्रकाशक व जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सात भागो का सूक्ष्मरीति से अभ्यास करें तो भूतार्थ स्वभाव का आश्रय लेना बने।

प्रश्न ३९—मोक्ष मार्ग प्रकाशक व जैन सिद्धांत प्रवेश रत्नमाला में क्या-क्या विषय बताया है ?

उत्तर—छह द्रव्य, सात तत्त्व, छह सामान्य गुण, चार अभाव, छह कारक, द्रव्य-गुण पर्याय की स्वतन्त्रता, उपादान-उपादेय, निमित्त नैमित्तिक, योग्यता, निमित्त, समयसार सौवी गाथा के चार बोल, औपशमकादि पाच भाव, त्यागने योग्य मिथ्यादर्शनादि का स्वरूप तथा प्रगट करने योग्य सम्यग्दर्शनादि का स्वरूप तथा एक निज भूतार्थ के आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति हो सकती है, आदि विषयो का सूक्ष्म

रीति से वर्णन किया है ताकि जीव निज स्वभाव का आश्रय लेकर मोक्ष का पथिक बने।

प्रश्न ४०—क्या जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सातभाग आपने बनाये है ?

उत्तर—जन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सात भाग तो आहार वर्गणा का कार्य है। व्यवहारनय से निरूपण किया जाता है कि मैंने बनाये हैं। अरे भाई। चारो अनुयोगो के ग्रन्थो मे से परमागम का मूल निकालकर थोड़े मे सग्रह कर दिया है। ताकि पात्र भव्य जीव सुगमता से धर्म की प्राप्ति के योग्य हो सके। इन सात भागो का एक मात्र उद्देश्य मिथ्यात्वादि का अभाव करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति कर क्रमश मोक्ष का पथिक बनना ही है। भवदीय

कैलाश चन्द्र जैन

बन्ध और मोक्ष के कारण

परद्रव्य का चिन्तन ही बन्ध का कारण है और केवल विशुद्ध स्वद्रव्य का चिन्तन ही मोक्ष का कारण है।

[तत्वज्ञानतरगिणी १५-१६]

सम्यक्त्वी सर्वत्र सुखी

सम्यग्दर्शन सहित जीव का नरकवास भी श्रेष्ठ है, परन्तु सम्यग्दर्शन रहित जीव का स्वर्ग मे रहना भी शोभा नही देता; क्योंकि आत्मज्ञान बिना स्वर्ग मे भी वह दुःखी है। जहाँ आत्मज्ञान है वहीं सच्चा सुख है।

[सारसमुच्चय-३९]

॥ श्री वीतरागायनम ॥

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

तीसरा भाग

मंगलाचरण

मंगलं भगवान् वीरो, मंगल गौतमो गणी।
मंगल कुन्दकुन्दार्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥१॥
तत्प्रति प्रीति चित्तेन येन वार्तापि हि श्रुता।
निश्चितं स भवेद्भव्यो, भावि निर्वाण भाजनम् ॥२॥
तातै जिनवर-कथित तत्त्व अभ्यास करीजे।
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपो लख लीजे ॥३॥
तास ज्ञान को कारण, स्व-पर विवेक बखानौ।
कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनौ ॥४॥
लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दद-फंद, नित आतम ध्याओ ॥५॥
देव गुरु दोनो खडे, किसके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरुदेव की, भगवन दियो बताय ॥६॥
करुणानिधि गुरुदेव श्री, दिया सत्य उपदेश।
ज्ञानी माने परख कर, करे मूढ सक्लेश ॥७॥



वस्तु स्वरूप समझने

पाच बोल	नौ पदार्थ	काल	पाच भाव	सुखदायक दु.खदायक'	हेय, ज्ञेय उपादेय
१-सयोग जडसार	अजीवतत्व	अनादि-अनन्त	×	×	ज्ञेय
२-सयोगी भाव द्रव्यसार	आस्रव-बध पुण्य-पाप	अनादि सात	औदयिक भाव	दु खदायक	हेय
३-स्वभाव त्रिकाली परमसार	जीवतत्व	अनादि-अनन्त	पारिणामिक भाव	परम सुखदायक	परम उपादेय (आश्रय करने योग्य)
४-स्वभाव के साधन एकदेश भावसार	सवर-निजरा	सादिसात	औपशमिक, धर्म का क्षायोपशमिक श्रद्धा-चारित्र का क्षायिक-भाव	एकदेश सुखदायक	एकदेश उपादेय (प्रकट करने योग्य)
५-सिद्धत्व पूर्णभाव सार	मोक्ष	सादिअनन्त	पूर्ण क्षायिक भाव	पूर्ण सुखदायक	पूर्ण उपादेय (प्रकट करने योग्य)

समझाने का सरल उपाय

उत्तम क्षमा	ईर्या समिति	वचन गुप्ति	क्षुधा-परिषह जय	नमस्कार	सयोग की पृथकता आदि तीन बोल
जड उत्तमक्षमा	जड ईर्या समिति	जड वचन गुप्ति	जड क्षुधा परिषह जय	जड नमस्कार	सयोग की पृथक्ता
द्रव्य उत्तमक्षमा	द्रव्य ईर्या समिति	द्रव्य वचन गुप्ति	द्रव्य क्षुधा परिषह जय	द्रव्य नमस्कार	विभाव की विपरीतता
शक्तिरूप उत्तमक्षमा	शक्तिरूप ईर्या समिति	शक्तिरूप वचन गुप्ति	शक्तिरूप क्षुधा परिषह जय	शक्तिरूप नमस्कार	परम स्वभाव की सामर्थ्यता
एकदेश भाव उत्तमक्षमा	एकदेशभाव ईर्या समिति	एकदेशभाव वचन गुप्ति	एकदेश भाव क्षुधा परिषह जय	एकदेश भाव-नमस्कार	एकदेश स्वभाव की सामर्थ्यता
पूर्ण भाव उत्तमक्षमा	पूर्ण भाव ईर्या समिति	पूर्ण भाव वचन गुप्ति	पूर्ण भाव क्षुधा परिषह जय	पूर्ण भाव नमस्कार	पूर्ण स्वभाव की सामर्थ्यता

छहढाला

पहली ढाल

कविवर पं० दौलतरामजीकृत

✽ मंगलाचरण ✽

सोरठा—तीन-भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुं त्रियोग-सम्हारिकैं॥

चौपई—जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुखतैं भयवन्त।
तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणाधार॥१॥

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्यान।
मोहमहामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत वादि॥२॥

तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूं कही मुनि यथा।
काल अनन्त निगोद मंझार, बीत्यो एकेन्द्री तनधार॥३॥

एक स्वास में अठदस वार, जन्म्यो, मरयो भरयो दुखभार।
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पतिथयो॥४॥

दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी, त्यों पर्याय लही त्रसतणी।
लट-पिपोलि-अलि आदि शरीर, धर धर मरयो सही बहु पीर॥५॥

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन-विन-निपट अज्ञानी थयो।
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशू हति खाये भूर॥६॥

कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अतिदीन।
छेदन भेदन भूख पियास, भार-वहन हिम-आतप-त्रास॥७॥

वध बंधन आदिक दुख घनें, कोटि जीभतैं जात न भनैं।
अतिसंक्लेशभावतैं मरयो, घरशुभ्रसागर में परयो॥८॥

तहाँ भूमि परसत दुख इसो, बीछू सहस डसै नहिं तिसो।
तहाँ राध-श्रोणित वाहिनी, कृमिकुलकलितदेहदाहिनी ॥९॥

सेमरतरु जुत-दल असिपत्र, असि ज्यौं देह विदारैं तत्र।
मेरुसमान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ॥१०॥

तिल तिल करैं देह के खंड, असुर भिडावैं दुष्ट प्रचंड।
सिंधु नीरतें प्यास न जाय, तो पण एक न बूंद लहाय ॥११॥

तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख, कणा न लहाय।
ये दुख बहु सागरलौं सहै, करमजोगतें नरगति लहै ॥१२॥

जननी उदर बस्यौ नव मास, अंगसकुचतें पाई त्रास।
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवै ओर ॥१३॥

बालपने मे ज्ञान न लह्यौ, तरुण समय तरुणी रत रह्यौ।
अर्द्धमृतक सम बूढापनो, कैसे रूप लखै आपनो ॥१४॥

कभी अकामनिर्जरा करै, भवनत्रिक मे सुरतन धरै।
विषयचाह-दावानल दह्यौ, मरत विलाप करत दुख सह्यौ ॥१५॥

जो विमानवासी हू थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुख पाय।
तहँ तैं चय थावर-तन धरै, यो परिवर्तन पूरे करै ॥१६॥

सम्यक्त्व सिद्धि—सुख का दाता है !

प्रज्ञा, मंत्री, समता, करुणा तथा क्षमा—इन सबका सेवन यदि सम्यक्त्व सहित किया जाये तो वह सिद्धिसुख को देने वाले हैं।

[सार समुच्चय]

पाठ १

छहढाला की प्रथम ढाल के ऊपर से भेद विज्ञान

प्रश्न १—छहढाला मे मंगलाचरण का क्या अर्थ किया है ?

उत्तर—वीतराग विज्ञानता ऊर्ध्व, मध्य और अधो—इन तीन लोक मे उत्तम, आनन्दस्वरूप तथा मोक्षदायक है इसलिये मैं मन, वचन एव काय तीन योग से सावधानी पूर्वक नमस्कार करता हूँ।

प्रश्न २—तीन लोक मे वीतराग विज्ञानता उत्तम सार वस्तु है, वह कितने प्रकार की हैं ?

उत्तर—दो प्रकार की है (१) निश्चय से वीतराग विज्ञानतारूप अपनी निज आत्मा और (२) व्यवहारनय से वीतराग विज्ञानतारूप पचपरमेष्ठी, यह दो ही उत्तम है।

प्रश्न ३—निश्चय से अपनी आत्मा और व्यवहारनय से पच-परमेष्ठी ही उत्तम हैं ऐसा जिनवाणी मे कहाँ लिखा है ?

उत्तर—"शुद्धातम अरुपंचगुरु, जगमे सरनो दोय,
मोह उदय जियके वृथा, आन कल्पना होय ॥"

अर्थ—इस विश्व मे दो ही शरण हैं। निश्चय से निज शुद्धात्मा ही शरण है और व्यवहारनय से पचपरमेष्ठी, परन्तु मोह के कारण (अपने आपको न जानने के कारण) अज्ञानी अन्य पदार्थों को शरण मानता है। [अशरण भावना पं० जयचन्द्र जी कृत]

प्रश्न ४—निमित्तरूप पचपरमेष्ठी को उत्तम क्यो कहा है ?

उत्तर—निमित्तरूप जो पचपरमेष्ठी को उत्तम मानता है उसी का भला हो सकता है और जो अन्य कुदेवादिक को मानता है उसका भला

नही हो सकता है। इसलिए पहले आज्ञादि से या किसी परीक्षा से कुदेवादिक की मान्यता छोडकर अरहन्त देवादिक का श्रद्धान करना चाहिए, क्योंकि इनके श्रद्धान होने पर ग्रहीतमिथ्यात्व का अभाव होता है तथा मोक्षमार्ग मे विघ्न करने वाले कुदेवादिक का निमित्त दूर होता है। मोक्षमार्ग के उपदेशक अरहन्तादिक का निमित्त मिलता है। इसलिए निमित्तरूप पचपरमेष्ठी को उत्तम कहा है। [मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृ० ३३१]

प्रश्न ५—निमित्तरूप वीतराग-विज्ञानतारूप पचपरमेष्ठी का उपदेश क्या है ?

उत्तर—एक मात्र वीतराग-विज्ञानतारूप अपना त्रिकाली आत्मा ही उत्तम है। उसी के आश्रय से पर्याय मे सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है, पर पदार्थ या विकारी भावो के आश्रय से नही यह पच परमेष्ठी का उपदेश है।

प्रश्न ६—वीतराग-विज्ञानतारूप अपनी त्रिकाली आत्मा को उत्तम करने से क्या होता है ?

उत्तर—पर्याय मे छह प्रकार की वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ७—पर्याय मे छह प्रकार की वीतराग-विज्ञानता के नाम क्या-क्या हैं ?

उत्तर—(१) चौथे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, (२) पाँचवे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, (३) छठवें-सातवे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, (४) बारहवे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, (५) तेरहवें-चौदहवें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, (६) सिद्ध-दशा की वीतराग-विज्ञानता। यह छह प्रकार की पर्याय मे वीतराग-विज्ञानता के नाम हैं।

प्रश्न ८—पर्याय मे छह प्रकार की वीतराग-विज्ञानता किसके

आश्रय से प्राप्त होती है और किसके आश्रय से कभी भी प्राप्त नहीं होती है ?

उत्तर—एकमात्र वीतराग-विज्ञानतारूप अपनी आत्मा के आश्रय से ही पर्याय मे छह प्रकार की वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होती है और किसी पर के, विकारी भावो के आश्रय से कभी भी प्राप्त नही होती है।

प्रश्न ९—पर्याय मे जो छह प्रकार की वीतराग-विज्ञानता है उसमे कुछ अन्तर है या समान है ?

उत्तर—जातिभेद की अपेक्षा वीतराग-विज्ञानता एक ही प्रकार की है। परन्तु जैसे बकरी का दूध, गाय का दूध और भैंस के दूध के चिकनाहट मे भेद है, वैसे ही पर्याय मे प्रकट अल्प शुद्धता, बहुत शुद्धता उससे बहुत शुद्धता, ऐसा थोड़ा-बहुतरूप भेद की अपेक्षा अनेक भेद है। इस प्रकार पर्याय मे जहाँ तक वीतराग-विज्ञानता सर्वोत्कृष्ट है, वहाँ तक वीतराग-विज्ञानता के अनन्त भेद हैं। जब सर्वथा वीतराग-विज्ञानता हो तब सिद्धदशा होती है। तात्पर्य यह है कि जातिभेद की अपेक्षा चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक की शुद्धता और सम्यग्ज्ञान मे कुछ भी अन्तर नही है परन्तु मात्रा मे एकदेश, सर्वदेश का भेद होने से समानपना नही है। [समयसार कलश टीका कलश १०६]

प्रश्न १०—कुल वीतराग-विज्ञानता कितने प्रकार की हुई ?

उत्तर—आठ प्रकार की हुई—(१) त्रिकाली उपादानरूप वीतराग-विज्ञानता। (२) निमित्तरूप पचपरमेष्ठी रूप वीतराग विज्ञनता। और (३) पर्याय मे छह प्रकार की प्रगटरूप वीतराग-विज्ञानता।

प्रश्न ११—वीतराग-विज्ञानता के आठ प्रकार आपने कहाँ से निकाले हैं ?

उत्तर—चारो अनुयोगो मे ये आठ भेद आये हैं। परन्तु मुख्यरूप से मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ चार मे 'पूज्यत्व का कारण" प्रकरण मे वीतराग-विज्ञानता के आठ प्रकारो का वर्णन किया है।

प्रश्न १२—वीतराग विज्ञानता का एक नाम क्या है ?

उत्तर—शुद्धोपयोग है ।

प्रश्न १३—वीतराग विज्ञानता के दो नाम क्या हैं ?

उत्तर—सम्यक्चारित्र और सम्यग्ज्ञान है ।

प्रश्न १४—वीतराग विज्ञानता के तीन नाम क्या हैं ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र हैं ।

प्रश्न १५—वीतराग विज्ञानता के चार नाम क्या हैं ?

उत्तर—दर्शन, ज्ञान, चारित्र ओर तप चार आराधना हैं ।

प्रश्न १६—वीतराग विज्ञानता के पाँच नाम क्या हैं ?

उत्तर—ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, वीर्याचार, तपाचार यह सब एक शुद्धदशा के पाँच नाम हैं ।

प्रश्न १७—वीतराग का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उत्तर—वीत कहता चला गया है, राग कहता रजित होना; अर्थात् बीत गया है राग जिसका वह वीतराग है ।

प्रश्न १८—बीत गया है राग जिसका वह वीतराग है तो इसका तात्पर्य द्वेष रह गया है, क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर—अरे भाई यह बात ठीक नही है, क्योकि नौवे गुणस्थान मे क्रोध, मान, माया का अभाव हो जाता है और दसवें मे लोभ का अभाव होता है । क्रोध-मान को द्वेष कहते हैं और माया-लोभ को राग कहते हैं। बीत गया है राग जिसका वह वीतराग है, यह सज्वलन क्रोधादि की अपेक्षा कथन है ।

प्रश्न १९—बीत गया है राग जिसका वह वीतराग है—इसके पीछे क्या रहस्य है ?

उत्तर—(१) स्वरूपाचरण चारित्र (२) देश चारित्र (३) सकल चारित्र (४) यथाख्यात चारित्र—इन चारो प्रकार की वीतरागता का ज्ञान कराना – यह रहस्य है ।

प्रश्न २०—चारों प्रकार की वीतरागता का ज्ञान करने के लिए

क्या-क्या जनना आवश्यक है ?

उत्तर—(१) कषाय किसे कहते है। (२) क्रोधादि की परिभाषा क्या-क्या है। (३) क्रोधादि कितने-कितने प्रकार के है।

प्रश्न २१—कषाय किसे कहते हैं ?

उत्तर—कष्=ससार, आय=लाभ, जिस भाव से ससार का लाभ हो अर्थात् जिस भाव से चारो गतियो का परिभ्रमण हो उसे कषाय कहते है।

प्रश्न २२—कषाय के कितने भेद हैं ?

उत्तर—चार भेद हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ।

प्रश्न २३—क्रोधादि कितने-कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर—क्रोधादि के चार-चार प्रकार है—(१) अनन्तानुबधी क्रोधादि। (२) अप्रत्याख्यान क्रोधादि। (३) प्रत्याख्यान क्रोधादि। (४) सज्वलन क्रोधादि।

प्रश्न २४—अनतानुबधी क्रोधादि का स्वरूप क्या-क्या हैं ?

उत्तर—(१) क्रोध—अपने स्वरूप की अरुचि और परद्रव्यो पर-भावो की रुचि। (२) मान—परवस्तुओ से, शुभभावो से अपने को बडा मानना तथा सबसे बडा मान यह है कि परद्रव्य की क्रिया मैं कर सकता हूँ ऐसी मान्यता। (३) माया—अपने स्वरूप की आड़मारना। पचमकाल है इस समय किसी को मोक्ष की प्राप्ति तो होती नही है। इसलिए वर्तमान मे शुभभाव करो और शुभभाव करते-करते धर्म की प्राप्ति हो जावेगी—यह मायाचारी है। (४) लोभ—पुण्य की सग्रह-बुद्धि व क्षयोपशम ज्ञान के उघाड की रुचि।

प्रश्न २५—अनतानुबधी क्रोधादि किसको होती हैं और किसको नहीं होती हैं ?

उत्तर—(१) निगोद से लगाकर चारो गतियो के मिथ्यादृष्टियो को एक ही समय मे एक ही साथ चारो कषाये होती है। (२) सम्यग्दृष्टि चाहे लडाई मे खडा हो, तीर पर तीर चला रहा हो, ९६

हजार स्त्रियो के वृन्द मे बैठा हो उसे अनन्तानुबधी क्रोधादि मे से एक भी नही होती हैं। (३) क्योंकि तीव्र-मद की अपेक्षा अनन्तानुबधी आदि भेद नही है, सम्यक्त्वादि का घात करने का अपेक्षा यह भेद हैं

[मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ ४०]

प्रश्न २६—क्रोध-मान को क्या कहते हैं ?

उत्तर—क्रोध-मान को द्वेष कहते हैं।

प्रश्न २७—माया और लोभ को क्या कहते हैं ?

उत्तर—माया-लोभ को राग कहते हैं।

प्रश्न २८—अनतानुबधी क्रोधादि का अभाव कब होता है ?

उत्तर—चौथे गुणस्थान मे प्रथम सम्यक्त्व प्राप्त होते ही अनतानुबधी क्रोध, मानरूप द्वेष का और माया, लोभरूप राग का अभाव एक साथ होकर स्वरूपाचरण चारित्र की प्राप्ति होती है।

प्रश्न २९—अप्रत्याख्यान क्रोधादि का अभाव कब होता है ?

उत्तर पाँचवे गुणस्थान मे देशचारित्र श्रावकपना होते ही अप्रत्याख्यान क्रोधादि राग-द्वेष का एक साथ अभाव हो जाता है।

प्रश्न ३०—प्रत्याख्यान क्रोधादि का अभाव कब होता है ?

उत्तर—छठवें सातवें गुणस्थान मे सकल चारित्र मुनिदशा होते ही प्रत्याख्यान क्रोधादि राग-द्वेष का एक साथ अभाव हो जाता है।

प्रश्न ३१—सज्वलन क्रोधादि का अभाव कब होता है ?

उत्तर—श्रेणी मे आरूढ वालो को नौवे गुणस्थान मे प्रथम सज्वलन क्रोध, मान, आदि द्वेप का अभाव होता है और दसवे गुण-स्थान मे सज्वलन लोभ राग का अभाव होने पर बारहवे गुणस्थान मे यथाख्यात चारित्र प्रगट हो जाता हैं।

प्रश्न ३२—वीतरागता के कितने अर्थ हुए ?

उत्तर—चार अर्थ हुए—स्वरूपाचरणचारित्र, देशचारित्र, सकल चारित्र और यथाख्यातचारित्र।

प्रश्न ३३—स्वरूपाचरण चारित्र आदि क्या हैं ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चारित्र गुण की स्वभाव अर्थ पर्याये हैं।

प्रश्न ३४—विज्ञानता का क्या अर्थ है ?

उत्तर—सम्यग्ज्ञान है।

प्रश्न ३५—सम्यग्ज्ञान के कितने प्रकार हैं ?

उत्तर—पाँच प्रकार हैं। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन-पर्ययज्ञान और केवलज्ञान।

प्रश्न ३६—मतिज्ञानादि क्या हैं ?

उत्तर—जीव द्रव्य के ज्ञान गुण की स्वभाव अर्थपर्याये हैं।

प्रश्न ३७—चौथे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—स्वरूपाचरणचारित्र तथा भावश्रुतज्ञान।

प्रश्न ३८ पाँचवें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—देशचारित्र तथा भावश्रुतज्ञान।

प्रश्न ३९—छठवें-सातवें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—सकलचारित्र तथा भावश्रुतज्ञान।

प्रश्न ४०—१२वें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—यथाख्यातचारित्र तथा भावश्रुतज्ञान।

प्रश्न ४१—१३वें, १४वें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—यथाख्यातचारित्र तथा केवलज्ञान।

प्रश्न ४२—सिद्ध दशा की वीतराग-विज्ञानता क्या है ?

उत्तर—आत्मा के सम्पूर्ण गुणो मे क्षायिकदशा—यह सिद्ध दशा की वीतराग-विज्ञानता है।

प्रश्न ४३—मतिज्ञानादि पाँच भेदो के पीछे क्या रहस्य है ?

उत्तर—मति श्रुत अवधि-मन, केवल सबहि एक ही पद जु है।
वो ज्ञानपद परमार्थ है, जो पाय जीव मुक्ति लहे ॥२०४॥

अर्थ—मतिज्ञान, श्रुतज्ञानादि यह ज्ञान के समस्त भेद ज्ञान ही है। शुद्धनय का विषयभूत ज्ञान सामान्य ही यह परमार्थ है। जिसे प्राप्त करके आत्मा निर्वाण को प्राप्त करता है। [समयसार गा० २०४ का अर्थ]

प्रश्न ४४—ज्ञान सामान्य को ही परमार्थ क्यो कहा है ?

उत्तर—जिसमे समस्त भेद दूर हुए हैं। ऐसे आत्म-स्वभावभूत एक ज्ञान का ही अवलम्बन करना चाहिए। ज्ञान-सामान्य के अवलम्बन से ही (वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा के अवलम्बन से ही) (१) निजपद की प्राप्ति होती है, (२) भ्राँति का नाश होता है, (३) जीवतत्त्व का लाभ होता है, (४) अनात्मा (अजीवतत्त्व) का परिहार सिद्ध होता है, (५) द्रव्यकर्म, नोकर्म भावकर्म बलवान नही होते, (६) राग-द्वेष मोह उत्पन्न नही होते अर्थात् आस्रव उत्पन्न नही होता, (७) राग-द्वेष मोह के बिना पुन कर्मास्रव नही होता अर्थात् सवर उत्पन्न होता है, (८) कर्मबध नही होता अर्थात् बध का अभाव होता है, (९) पूर्वबद्ध कर्म भुक्त होकर निर्जरा को प्राप्त हो जाते है, (१०) फिर समस्त कर्मों का अभाव होने से साक्षात् मोक्ष होता है। इसीलिए ज्ञान सामान्य को परमार्थ कहा है। [समयसार गा० २०४ की टीका से]

प्रश्न ४५—'सार' शब्द का अस्ति और नास्ति से क्या अर्थ है ?

उत्तर—'सार' शब्द का अस्ति से (१) परमसार (२) एकदेश भाव सार, (३) पूर्ण भाव सार होता है। और नास्ति से द्रव्यकर्म, नोकर्म भावकर्म रहित होता है। द्रव्यकर्म, नोकर्म मे (४) जडसार और भावकर्म मे (५) द्रव्यसार आता है।

प्रश्न ४६—परमसार आदि पाँच बोलों का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर—बडे से बडा पापी भी जिस समय अपने परमसार जो अपना ज्ञायक स्वभाव है, उसका आश्रय ले तो एकदेश भाव सार वीतरागता की प्राप्ति होती है। एकदेश भावसार के साथ ज्ञानियो को भूमिकानुसार राग आता है, उसे द्रव्यसार कहते हैं। जो बध का

कारण है। द्रव्यसार राग का और द्रव्यकर्म, नोकर्म की क्रिया का निमित्त-नैमित्तिक सम्वन्ध है। द्रव्यकर्म, नोकर्म मे जडसार आ गया। ज्ञानी अपने परमसार का परिपूर्ण आश्रय करता है तो पर्याय मे पूर्ण भाव सार मोक्ष दशा की प्राप्ति होती है। यह परमसार आदि पाँच वोल वताने का तात्पर्य है।

प्रश्न ४७—परमसारादि मे सात तत्त्व उतारकर बताओ ?

उत्तर—परमसार मे जीवतत्त्व आया। एकदेश भावसार मे सवर-निर्जरा तत्त्व आये। द्रव्यसार मे आस्रव-वधतत्त्व आए। जडसार मे अजीव तत्त्व आया। पूर्ण भाव सार मे मोक्ष तत्त्व आया।

प्रश्न ४८—परमसार आदि मे चार काल उतारकर बताओ ?

उत्तर—परमसार= अनादिअनन्त। एकदेश भाव सार=सादि-सान्त। द्रव्यसार=अनादिसान्त। जडसार=अनादिअनन्त। पूर्ण भाव सार=सादिअनन्त।

प्रश्न ४९—परमसार आदि मे पाँच भाव उतारकर बताओ ?

उत्तर—परमसार=पारिणामिक भाव। एकदेश भावसार= औपशमिक भाव, धर्म का क्षायोपशमिक भाव, श्रद्धा का क्षायिकभाव द्रव्यसार=औदयिक भाव। जडसार=कोई अपना भाव नही है। पूर्ण भावसार=पूर्ण क्षायिक भाव।

प्रश्न ५०—परमसार आदि मे सुखदायक-दु.खदायक उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ४७ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५१—परमसार आदि मे देवगुरु-धर्म उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ४७ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५२—परमसार आदि मे हेय-ज्ञेय-उपादेय उतारकर बताओ ?

उत्तर—परमसार=परम उपादेय। एकदेश भावसार=प्रकट करने योग्य एकदेश उपादेय। द्रव्यसार=हेय। जडसार=ज्ञेय। पूर्ण भाव

सार=पूर्ण प्रगट करके योग्य उपादेय।

प्रश्न ५३—परमसार आदि मे उत्तम क्षमा उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५४—परमसार आदि मे ईर्यासमिति उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५५—परमसार आदि मे वचनगुप्ति उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५६—परमसार आदि में क्षुधापरिषह जय उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५७—परमसार आदि मे नमस्कार उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५८—परमसार आदि मे चारित्र उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५९—परमसार आदि मे प्रतिक्रमण उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६०—परमसार आदि मे आलोचना उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६१—परमसार आदि मे सामायिक उतारकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्न ५२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६२—वीतराग विज्ञानता कैसी है ?

उत्तर—शिवस्वरूप और मोक्ष प्राप्त कराने वाली है।

प्रश्न ६३—'नमहुँ त्रियोग सम्हारिके'' का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—(१) राग से भिन्न होना और शुद्ध स्वभावी आत्मा के सन्मुख होना निश्चय सावधानी है। (२) निमित्त की अपेक्षा से मन-वचन-काय की सावधानी कहने मे आती है।

प्रश्न ६४—आत्मा के सन्मुख होना "नमहुँ त्रियोग सम्हारिके" का अर्थ है यह आपने कहाँ से निकाला ?

उत्तर—भगवान उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र के प्रारम्भ मे "वन्दे तद्गुण लब्धये" अर्थात् भगवान जैसे अपने गुणो की प्राप्ति के लिए मैं वन्दन करता हूँ इसमे से यह अर्थ निकाला है।

प्रश्न ६५—क्या जीव मन-वचन-काय की सावधानी नहीं कर सकता ?

उत्तर—बिल्कुल नही कर सकता, क्योकि मन-वचन-काय जड का कार्य है और आत्मा चेतन है दोनो मे अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न ६६—मन-वचन-काय का कर्ता कौन-कौन हैं ?

उत्तर—मन का कर्ता मनोवर्गणा है। वचन का कर्ता भाषावर्गणा है। काय का कर्ता आहारवर्गणा है।

प्रश्न ६७—मन-वचन-काय का जो जीव आत्मा को कर्ता मानता है उसे शास्त्रो मे किन-किन नामो से कहा है ?

उत्तर—(१) समयसार कलश ५५ मे कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका अज्ञान मोह अधकार है।' (२) प्रवचनसार गाथा ५५ मे कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (३) पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय गा० ६ मे कहा है कि "तस्य देशना नास्ति" (४) आत्मावलोकन मे कहा है कि यह उनका हरामजादीपना है।

प्रश्न ६८—'नमहुँ' का अर्थ क्या है ?

उत्तर—नमना-झुकना-नमस्कार है।

प्रश्न ६९—नमस्कार कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर—पाँच प्रकार के हैं शक्तिरूप नमस्कार का आश्रय लेने से एकदेश भाव नमस्कार की प्राप्ति होती है उसके साथ जो-जो भगवान मोक्ष पधारे हैं उनके प्रति आदर का भाव द्रव्य नमस्कार पुण्य बध का कारण है। द्रव्य नमस्कार और जड नमस्कार का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है। अपने शक्तिरूप नमस्कार का पूर्ण आश्रय लेना पूर्ण भाव नमस्कार यह मोक्ष स्वरूप है।

प्रश्न ७०—तुम कौन हो ?

उत्तर—मैं ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा हूँ।

प्रश्न ७१—तुम कौन नहीं हो ?

उत्तर—अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख, नाक, शरीर, मन वाणी; आठ कर्म तथा शुभाशुभ विकारी भाव मैं नही हूँ।

प्रश्न ७२—तुम कब से हो ?

उत्तर—मैं अनादिअनन्त ज्ञायक स्वभावी सदा से हूँ।

प्रश्न ७३—जन्म-मरण तो होता है फिर सदा से कैसे हो ?

उत्तर—जन्म-मरण शरीर की अपेक्षा कहा जाता है। जीव जन्मादिरहित नित्य ही है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ४३]

प्रश्न ७४—तुम्हारा कार्य क्या है ?

उत्तर—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है।

प्रश्न ७५—तुम दुःखी क्यो हो ?

उत्तर—अनादिअनन्त ज्ञायक स्वभावी निज आत्मा को न जानने से ही दु खी हूँ, पर पदार्थो के कारण दु खी नही हूँ।

प्रश्न ७६—तीनलोक में कितने जीव हैं ?

उत्तर—'जे त्रिभुवन मे जीव अनन्त' अर्थात् तीन लोक मे अनन्त जीव हैं।

प्रश्न ७७—तीन लोक के अनन्त जीव क्या चाहते हैं और क्या नहीं चाहते हैं ?

उत्तर—'सुख चाहैं दु ख तै भयवन्त' सुख चाहते हैं और दु.ख नही चाहते हैं।

प्रश्न ७८—सुख किसे कहते हैं ?

उत्तर—आकुलता रहित, चिन्ता रहित; क्लेश रहित; झंझट रहित, वस्तुस्वरूप की सच्ची समझ को सुख कहते हैं।

प्रश्न ७९—दुख किसे कहते हैं ?

उत्तर—आकुलता, चिन्ता, क्लेश; झंझट, वस्तुस्वरूप की

उल्टी समझ को दु ख कहते हैं।

प्रश्न ८०—क्या श्रद्धान-ज्ञान करे तो दुःख का अभाव सुख की प्राप्ति होवे ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधीन नही हैं, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।" ऐसा श्रद्धान-ज्ञान करे तो तुरन्त दु ख का अभाव सुख की प्राप्ति होवे।

प्रश्न ८१—पर पदार्थों में मेरी-तेरी मान्यता को छहढाला की पहली ढाल में क्या कहा है ?

उत्तर—"मोह महामद पियो अनादि भूल आपको भरमत वादि।

अर्थ—इस ससार मे अज्ञानी जीव अनादिकाल से मोह मे फँसकर अपने आत्मस्वरूप को भूलकर चारो गतियो मे जन्म-मरण धारण करके व्यर्थ भटक रहा है। किन्ही पर पदार्थों के कारण या कर्मों के कारण नही भटक रहा है।

प्रश्न ८२—अनादिकाल की मोहरूपी शराब क्या है ?

उत्तर—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थों मे व विकारी भावो मे एकत्व बुद्धि ही अनादिकाल की मोह रूपी शराब है।

प्रश्न ८३—मोहरूपी शराब को स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर—(१) मैं सुबह उठा, (२) मैं प० कैलाशचन्द्र हूँ, (३) मैं मुँह धोता हूँ, (४) मैं चाय पीता हूँ, (५) मैं रोटी खाता हूँ, (६) मैं व्यापार करता हूँ, (७) मेरी धर्मपत्नी है, (८) मेरा धन है, (९) मैं पडित हूँ, (१०) मैं क्षुल्लक हूँ, (११) मैं मुनि हूँ (१२) मैं पर को जिलाता हूँ, (१३) मैं सत्य बोलता हूँ, (१४) मैं पहले चोरी करता था अब मैं चोरी नही करता हूँ, (१५) मैं ब्रह्मचर्य से रहता हूँ, (१६) मैं मनुष्य हूँ, (१७) मैं बहू हूँ, (१८) मैं माँ हूँ, (१९) मैं बाप हूँ, (२०) मैं काला हूँ; (२१) मैं लम्बा हूँ,

(२२) मैं ठिगना हूँ, (२३) मैं सोता हूँ, (२४) मै बूढा हूँ आदि वाक्यो मे वीतराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थों मे, विकारी भावो मे एकत्वपना पाया जाने से यह मोहरूपी शराब के दृष्टान्त हैं। अनादिकाल से एक-एक समय करके मोहरूपी शराब के नशे मे अज्ञानी अपने को इसी प्रकार ही मानता है—जानता है और आचरण करता है।

प्रश्न ८४—वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थों मे, विकारी भावो मे अनादिकाल से एक-एक समय करके एकत्वबुद्धि रूप जो मोहरूपी शराब है, उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—"तीन भुवन मे सार, वीतराग-विज्ञानता" भावार्थ—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा ही एक मात्र आश्रय करने योग्य उत्तम है, पर पदार्थ, विकारी भाव उत्तम नही है। ऐसा जान कर वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो तुरन्त चौथे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति हो, फिर क्रम से पाँचवें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, ६-७ वे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, १२वे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता, १३-१४वें गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता और अन्त मे सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार अनादिकाल से एक-एक समय करके चली आ रही मोहरूपी शराब का अभाव हो जाता है।

प्रश्न ८५—मैं सुबह उठा—इस वाक्य मे मोहरूपी शराब किस प्रकार है ?

उत्तर—तराजू के एक पलडे मे वीतराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा, तराजू के दूसरे पलडे मे शरीर के उठने रूप अनन्त पुद्गल परमाणु, इन सबमे 'मैं सुबह उठा' ऐसी एकत्वबुद्धि यह मोहरूपी शराब है।

प्रश्न ८६—'मैं सुबह उठा'-इस खोटी मान्यतारूप मोहरूपी

शराब का फल छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद 'मैं सुवह उठा' इस खोटी मान्यता का फल वताया हे।

प्रश्न ८७—'मै सुवह उठा' इस खोटी मान्यतारूप मोहरूपी शराब के अभाव का उपाय छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—'तीन भुवन मे सार, वीतराग-विज्ञानता' भावार्थ—तीन लोक मे एकमात्र वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा ही आश्रय करने योग्य उत्तम है। शरीर के उठने रूप अनन्त पुद्गल परमाणुओ से मेरा कोई भी सम्वन्ध नही है। शरीर के उठने से 'मैं उठा' यह खोटी मान्यता एक समय की पर्याय मे है—ऐसा जानकर वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले, तो खोटी मान्यता रूप मोहरूपी शराब का अभाव तुरन्त हो जाता है—ऐसा छहढाला की प्रथम ढाल मे बताया है।

प्रश्न ८८—'मै सुवह उठा' ऐसी मान्यता को आपने मोहरूपी शराब बताया। परन्तु जो अपने को ज्ञानी कहते हैं वह भी 'मैं सुबह उठा'—ऐसा कहते, सुने-देखे जाते हैं; क्या ज्ञानियो में भी मोहरूपी शराब पाई जाती है ?

उत्तर—बिल्कुल नही पाई जाती है। (१) क्योकि जिन जिनवर और जिनवरवृषभो ने शरीर के उठने को—मैं सुवह उठा—ऐसी खोटी मान्यता को मोहरूपी शराब कहा है। परन्तु ऐसे कथन को नही कहा है। (२) ज्ञानी जो बनते हैं वे मोहरूपी शराब का अभाव करके ही बनते हैं (३) ज्ञानियो को हेय-ज्ञेय-उपादेय का ज्ञान वर्तता है (४) शरीर के उठने मे 'मैं सुवह उठा' ज्ञानियो के ऐसे कथन को आगम मे अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय कहा है।

प्रश्न ८९—मै प० कैलाशचन्द्र हूं—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९०—मै मुह धोता हू—मोहरूपी शराव का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९१—मै चाय पीता हू—मोहरूपी शराव का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९२—मै व्यापार करता हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९३—मेरी धर्मपत्नी है—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९४—मेरा धन है—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९५—मैं पंडित हूं—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९६—मैं पर को जिलाता हूं—मोहरूपी शराव का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९७—मैं सत्य बोलता हू—मोहरूपी शराव का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९८—मैं चोरी नहीं करता हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९९—मैं ब्रह्मचर्य से रहता हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १००—मैं मनुष्य हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०१—मैं काला हू-मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०२—मुझे कर्म चक्कर कटाता है—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०३—मैं लम्बा हूं-मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०४—मैं ठिगना हू-मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०५—मैं वृद्ध हू-मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०६—मैं नवयुवक हू-मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०७—मैं बीमार हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०८—मैं चार हाथ जमीन देखकर चलता हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न १०९—मैं मन को वश मे रखता हू—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो ?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११०—मैने उद्दिष्ट आहार का त्याग कर दिया है—मोहरूपी शराब का स्पष्टीकरण करो?

उत्तर—प्रश्न ८५ से ८८ तक के अनुसार उत्तर दो।'

प्रश्न १११—भविष्य की आयु का बंध कब और कैसे होता है?

उत्तर—मनुष्यों के लिए यह नियम है कि जितनी भोगने वाली आयु की स्थिति होगी उसके दो तिहाई बीत जाने पर पहली दफे अन्तर्मुहूर्त के लिए आगामी भव की आयु का बंध होता है। फिर दो तिहाई बीतने पर दूसरी दफे, फिर दो तिहाई बीतने पर तीसरी दफे, इस तरह दो तिहाई समय के पीछे आठ दफे ऐसा अवसर आता है। यदि इनमे भी नही बँधे तो मरने के अन्तर्मुहूर्त पहले तो आयु बँधती ही है। यदि अपने परिणामो मे कुछ सुधार-बिगाड हो जावे तो पहली बँधी हुई आयु की स्थिति कम व अधिक हो सकती है। जैसे—किसी की आयु मानो ८१ वर्ष की हो तो (१) ५४ वर्ष बीतने पर=२७ वर्ष शेष रहने पर, (२) ७२ वर्ष बीतने पर=९ वर्ष शेष रहने पर, (३) ७८ वर्ष बीतने पर=३ वर्ष शेष रहने पर, (४) ८० वर्ष बीतने पर=१ वर्ष शेष रहने पर, (५) ८० वर्ष ८ मास बीतने पर=४ मास शेष रहने पर, (६) ८० वर्ष १० मास २० दिन बीतने पर=४० दिन शेष रहने पर, (७) ८० वर्ष ११ मास १६ दिन १६ घंटे बीतने पर=१३ दिन ८ घंटे शेष रहने पर, (८) ८० वर्ष ११ मास २५ दिन १३ घंटे २० मिनट बीतने पर=४ दिन १० घंटे ४० मिनट शेष रहने पर आयु का बंध होता है। इस प्रकार आयु बंध का वर्णन भगवान की वाणी मे आया है।

प्रश्न ११२—छहढाला मे निगोद के दुःखो के विषय में क्या बताया है?

उत्तर—(१) संसार मे जन्म-मरण धारण करने की कथा बहुत बडी है। तथापि जिस प्रकार पूर्वाचार्यों ने अपने अन्य ग्रन्थो मे कहो

है, तदनुसार मैं भी इस ग्रन्थ मे थोडी सी कहता हूँ। (२) इस जीव ने अनादिकाल से अपने आपको ना पहिचान कर नरक से भी निकृष्ट निगोद मे एकेन्द्रिय जीव के शरीर धारण किये। (३) निगोद मे एक श्वास मात्र समय मे अठारह बार जन्म-मरण करके नरक से भी भयकर दु ख सहन किये। (४) निगोद के दु खो को स्वय जाने या केवली जाने। ऐसा छहढाला मे निगोद के दु खो का वर्णन किया है।

प्रश्न ११३ – छहढाला में निगोद के दुःखो का वर्णन क्यों किया है ?

उत्तर- मनुष्यभव व जैन कुल मिलने पर भी यह जीव शरीर से भिन्न वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को नही समझा—तो मनुष्यभव छोडकर निगोद मे जा सकता है।

प्रश्न ११४—मनुष्यभव होने पर भी क्या यह जीव निगोद मे जाने का भाव कर सकता है ?

उत्तर—हाँ कर सकता है, क्योकि "जैसी मति वैसी गति" अर्थात् जिस समय जो जीव जैसा भाव करता है। वह उस समय वह ही है। और उस आयु मे पहुँचने पर "जैसी गति वैसी मति" अर्थात् जैसे साँप की आयु मे पहुँचने पर साँप को फूँ-फाँ का ही भाव आता रहेगा, उसी प्रकार निगोद की आयु मे पहुँचने पर निगोदिया जीवो को निगोद के दु खो का भाव आता रहेगा और दु खी होता रहेगा।

प्रश्न ११५—"जैसी मति वैसी गति और जैसी गति वैसी मति" को स्पष्ट समझाइए ?

उत्तर– मनुष्यभव होने पर कोई जीव निगोदिया जीव जैसे भाव करता है तो वह उस समय निगोदिया जीव ही है, क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है। और यदि उस समय आयु का बध हो गया तो उस जीव को निगोदिया की आयु मे जाना पडेगा। जहाँ पर चौबीसो घटो एक श्वास मे अठारह बार जन्म-

मरण के दु खो को भोगना पडेगा क्योकि तब "जैसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे कहा जाता है।

प्रश्न ११६—मनुष्यभव होने पर निगोदिया जीव कहलाने का और मनुष्य आयु को छोडकर निगोदिया मे जाने का भाव कौन-कौन-सा है ? जरा स्पष्ट समझाइये।

उत्तर—(१) वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर मैं मनुष्य हूँ, स्त्री हूँ, लडका हूँ, अम्मा हूँ, पिताजी हूँ, सेठ हूँ, राष्ट्रपति हूँ आदि नामरूप अनन्त पुद्गलो के स्कध मे अपनेपने की मान्यता। (२) ज्ञानगुण मे मे ज्ञान आता है, इसे भूलकर ज्ञेय से, कर्म के क्षयोपशम से, आँख से ज्ञान होता है। सुख आत्मा के सुख गुण मे से आता है, इसे भूलकर पाचो इन्द्रियो के भोगो मे से सुख आता है ऐसी मान्यता। (३) आत्मा का कार्य ज्ञप्ति क्रिया है—इसे भूलकर परद्रव्यो की क्रिया मैं करता हूँ। शुभाशुभ विकारीभाव मैं करता हू, ऐसी मान्यता। (४) देवगुरु-शास्त्र की विराधना का भाव। (५) नये-नये भेषो मे अपनेपने की मान्यता। इस-इस प्रकार की मान्यताये मनुष्यभव होने पर भी निगोदिया जीव कहलाने का और ऐसी मान्यताओ के समय आयु का बध हो जावे तो इसे निगोदिया की योनि मे जाना पडेगा।

प्रश्न ११७—मनुष्यभव होने पर हमे निगोदिया की योनि मे ना जाना पड़े और सम्यग्यदर्शनादि की प्राप्ति करके क्रमश मोक्ष की प्राप्ति हो इसके लिए छहढाला मे क्या कोई उपाय बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। यदि यह जीव पाँच प्रकार की विपरीत मान्यताओ को छोडकर वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो पर्याय मे तत्काल चौथे गुणस्थान की वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करके क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होती है यह उपाय छहढाला से बताया है।

प्रश्न ११८—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय

लेना कैसे बने ?

उत्तर—द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म से भिन्न मैं वीतराग-विज्ञानता-रूप निज शुद्ध आत्मा हूँ—ऐसा जाने-माने तो वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा पर स्वयमेव दृष्टि आ जाती है तब निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लिया कहा जा सकता है।

प्रश्न ११९—पृथ्वीकायिक के दुःखो के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—पृथ्वीकायिक जीवो के कषाय बहुत और शक्तिहीन होने से महादु खी है। उनके दु ख को वे ही भोगते हैं या केवली जानते हैं ?

प्रश्न १२०—पृथ्वीकायिक के दुःखो का वर्णन जिनवाणी मे क्यो किया है ?

उत्तर—मनुष्यभव व जैनकुल मिलाने पर भी यह जीव औदारिक आदि शरीरो से सर्वथा भिन्न अस्पर्श स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को नही समझा तो मनुष्यभव छोडकर पृथ्वीकायिक मे जा सकता है। ऐसा इसे ज्ञान कराने के लिए जिनवाणी मे पृथ्वी-कायिक जीवो के दु खो का वर्णन किया है।

प्रश्न १२१—क्या मनुष्यभव होने पर भी यह जीव पृथ्वीकायिक मे जाने का भाव कर सकता है ?

उत्तर—हा, कर सकता है। क्योकि "जैसी मति वैसी गति जैसी गति वैसी मति" होती है।

प्रश्न १२२—"जैसी मति वैसी गति—जैसी गति वैसी मति" को स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर—मनुष्यभव होने पर यदि कोई जीव पृथ्वीकायिक जैसे जीव का भाव करता है तो वह उस समय पृथ्वीकायिक ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है। और पृथ्वीकायिक जैसे भावो के समय आयु का बध हो गया तो उस जीव को पृथ्वीकायिक मे जाना पडेगा। जहाँ पर प्रत्येक समय सब तुझे दबायेगे और तू एक शब्द भी उच्चारण ना कर सकेगा। इसलिए "जैसी गति वैसी मति"

ऐसा जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १२३—मनुष्यभव होने पर पृथ्वीकायिक जीव कहलाने का और मनुष्य आयु को छोडकर पृथ्वीकायिक जीव मे जाने का भाव कौन सा भाव है ? स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर—जैसे हम पृथ्वीकायिक पर चलते है, दबने से जो वह दुख का अनुभव करता है लेकिन वह कुछ कह नही सकता है, उसी प्रकार मनुष्यभव होने पर भी मैं सबको दबाऊ और वे कोई मेरे सामने एक शब्द का भी उच्चारण ना कर सके—ऐसे भाव के समय वह मनुष्यभव होने पर भी पृथ्वीकायिक ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" होती है और ऐसे भावो के समय यदि आयु का बंध हो गया तो पृथ्वीकायिक की योनि मे ही जाना पडेगा। जहाँ तुझे सब दबायेगे और तू एक शब्द भी उच्चारण ना कर सकेगा क्योकि "जैसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १२४—मनुष्यभव होने पर हमें पृथ्वीकायिक की योनि मे ना जाना पडे और सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रमश मोक्ष की प्राप्ति हो। छहढाला मे इसके लिए क्या कोई उपाय बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। दूसरो के दबाने आदि के भावो रहित अस्पर्श स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो पर्याय मे तत्काल चौथे गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर क्रमश सिद्धदशा रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति हो। यह उपाय छहढाला मे बताया है।

प्रश्न १२५—अस्पर्श स्वभावी वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म से भिन्न वीतराग-विज्ञानता-रूप निज शुद्ध आत्मा ही आश्रय करने योग्य उपादेय है। ऐसा माने-जाने तो वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न १२६—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेने से क्या-क्या लाभ होता है ?

उत्तर—प्रथम चौथे गुणस्थान वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर, फिर पचम गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छठवे-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर बारहवें गुणस्थानरूप-वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वें-१४वें गुण-स्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होना—यह वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय का ही फल है।

प्रश्न १२७—छहढाला मे जलकायिक के दु खो के विषय मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर ११९ से १२६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर दो या लिखो।

प्रश्न १२८—छहढाला मे अग्निकायिक के दुखो के विषय मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर ११९ से १२६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर दो या लिखो।

प्रश्न १२९—छहढाला मे (१) वायुकायिक, (२) वनस्पति-कायिक के दु:खो के विषय मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—वायुकायिक और वनस्पतिकायिक दोनो के अलग-अलग रूप से प्रश्नोत्तर ११९ से १२६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर दो या लिखो।

प्रश्न १३०—छहढाला में दो इन्द्रिय आदि जीवो के दु:खो के विषय में क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(१) जिस प्रकार चिन्तामणि रत्न बडी कठिनाई से प्राप्त होता है, उसी प्रकार इस जीव ने त्रस की पर्याय बडी कठिनता से प्राप्त की, (२) उस त्रस पर्याय मे भी लट आदि दो इन्द्रिय जीव,

चीटी आदि तीन इन्द्रिय जीव और भँवरा आदि चार इन्द्रिय जीव के शरीर धारण करके मरा और अनेक दु ख सहन किये।

१३१—छहढाला में दो इन्द्रियादि जीवो के दुःखों का वर्णन क्यों किया है?

उत्तर—मनुष्यभव व जैनकुल मिलने पर भी दो इन्द्रियादि के औदारिक आदि शरीरो से भिन्न अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानता-रूप निज शुद्ध आत्मा को नही समझा तो मनुष्य आयु छोडकर दो इन्द्रियादि जीवो के शरीरो मे जा सकता है। यह ज्ञान कराने के लिए दो इन्द्रियादि जीवो के दु खो का वर्णन किया गया है।

प्रश्न १३२—मनुष्यभव होने पर भी क्या यह जीव दो इन्द्रियादि जीवो में जाने का भाव कर सकता है?

उत्तर—हाँ, कर सकता हैं, क्योकि "जैसी मति वैसी गति—जैसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे आया है।

प्रश्न १३३—"जैसी मति वैसी गति—जैसी गति वैसी मति" को स्पष्ट समझाइये?

उत्तर—मनुष्य आयु होने पर भी यदि कोई जीव दो इन्द्रिय जीव जैसे भाव करता है तो वह उस समय दो इन्द्रिय जीव ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है, और दो इन्द्रिय जीव के भावो के समय आदि आयु का बन्ध हो गया तो दो इन्द्रिय जीव की आयु मे जाना पडेगा। जहा पर प्रत्येक समय रसना इन्द्रिय के स्वाद मे ही पागल बना रहेगा क्योकि "जैसो गति वैसी मति" जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १३४—मनुष्यभव होने पर दो इन्द्रिय जीव कहलाने का और मनुष्य आयु को छोडकर दो इन्द्रिय जीवो में जाने का भाव कौन सा है? जरा स्पष्ट समझाइये?

उत्तर—जैसे सीप, शख, कौडी, केंचुआ, लट आदि रसना इन्द्रिय के स्वाद मे मग्न हैं, उसी प्रकार मनुष्यभव होने पर भी जो जीव रसना

इन्द्रिय की लोलुपता मे पागल है। वह उस समय दो इन्द्रिय जीव ही है। क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है, और रसना इन्द्रिय लोलुपता से भावो के समय यदि आयु का वन्ध हो गया तो दो इन्द्रियादि जीवो की योनि मे ही जाना पडेगा। जहा प्रत्येक समय रस के स्वाद मे पागल बना रहेगा क्योकि "जैसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १३५—मनुष्यभव होने पर हमे दो इन्द्रिय जीव की योनि मे न जाना पड़े और सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रमशः मोक्ष की प्राप्ति हो। छहढाला में इसके लिए क्या कोई उपाय बताया है?

उत्तर—हाँ, वताया है। रसना इन्द्रिय के स्वाद रहित अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो पर्याय मे तत्काल चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करके क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होवे, यह उपाय छहढाला मे वताया है।

प्रश्न १३६—अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने?

उत्तर—रसरूप पुद्गलो के कार्यों से सर्वथा भिन्न, मैं अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा हूँ—ऐसा जाने-माने तो अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न १३७—अरस स्वभावी वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेने से क्या-क्या लाभ होता है? स्पष्ट समझाइये?

उत्तर—प्रथम चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर, फिर पचम गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छठवें-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर बारहवें गुणस्थानरूप वीतराग विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वे-१४वे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होना—यह अरस स्वभावी वीतराग-

विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय का ही फल है।

प्रश्न १३८—छहढाला मे तीन इन्द्रिय जीवो के दुःखों के विषय मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १३० से १३७ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १३९—छहढाला में चार इन्द्रिय जीवो के तथा असैनी पंचेन्द्रिय जीवो के दु खों के विषय मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—चार इन्द्रिय जीवो तथा असैनी पचेन्द्रिय जीवो के विषय मे प्रश्नोत्तर १३० से १३७ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर दोनो को अलग-अलग समझाइये या लिखिए।

प्रश्न १४०—छहढाला में संज्ञी-असंज्ञी तिर्यंचो के दु खो के विषय में क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(१) यह जीव कभी पचेन्द्रिय असज्ञी पशु भी हुआ तो मन रहित होने से अत्यन्त अज्ञानी रहा और कभी सज्ञी हुआ तो सिंह आदि क्रूर-निर्दय होकर, अनेक निर्बल जीवो को मार-मार कर खाया तथा घोर अज्ञानी हुआ। (२) जब यह जीव तिर्यंच गति मे किसी समय निर्बल पशु हुआ तो स्वय असमर्थ होने के कारण अपने से बलवान प्राणियो द्वारा खाया गया। (३) उस तिर्यंच गति मे छेदा जाना, भेदा जाना, भूख-प्यास, बोझा ढोना, ठण्ड-गर्मी आदि के दु ख भी सहन किये। (४) इस जीव मे तिर्यंच गति मे मारा जाना, बधना आदि अनेक दु ख सहन किये, जो करोडो जीभो से भी नही कहे जा सकते हैं। (५) अन्त मे इतने बुरे आर्त्तध्यान परिणामो से मरा कि जिसे बडी कठिनता से पार किया जा सके, ऐसे समुद्र समान घोर नरक मे जा पहुँचा।

प्रश्न १४१—मनुष्यभव होने पर भी क्या यह जीव सॉप कहला सकता है ?

उत्तर—हाँ, कहला सकता है। जैसे साँप फूं-फाँ ही करता रहता

है, उसी प्रकार मनुष्यभव होने पर भी जैसे हमारे घर मे वहुत से आदमी हैं। यदि हम फूं-फाँ ना करे तो वे सब बिगड जावेगे— ऐसा मानकर जो जीव बच्चो पर, स्त्री पर, नौकरो पर फूं-फाँ करता रहता है। वह जीव उस समय साँप ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १४२—मनुष्य आयु को छोड़कर यह जीव साँप की योनि में क्यो जाता है ?

उत्तर—बच्चो पर, स्त्री पर, नौकरो पर फूं-फाँ का भाव करते समय यदि आयु का बध हो जावे तो साँप की योनि मे जाना पडेगा —जहाँ पर फूं-फाँ मे ही जीवन बीतेगा।

प्रश्न १४३—मनुष्यभव होने पर हमें साँप की योनि में ना जाना पडे। छहढाला में इसका क्या कोई उपाय बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। यदि यह जीव फूं-फाँ रहित अशब्द स्वभावी वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो साँप की योनि मे ना जाना पडेगा, परन्तु तत्काल चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करके क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करेगा ऐसा छहढाला मे बताया है।

प्रश्न १४४—फूं-फाँ रहित अशब्द स्वभावी वीतराग-विज्ञानता-रूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म, भाषा, मन व फूं-फाँ से भिन्न अशब्द स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा मैं हूँ—ऐसा जाने-माने तो निज शुद्ध आत्मा से भिन्न अपना और पराया कोई भासित ही नही होवेगा, तो फूं-फाँ का भाव किस पर करेगा ? तब दृष्टि स्वयमेव अशब्द स्वभावी वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा पर आजावेगी—इस प्रकार निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बन जाता है।

प्रश्न १४५—अशब्द स्वभावी वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध

आत्मा का आश्रय लेने से क्या-क्या लाभ होता है ?

उत्तर—प्रथम चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर, फिर पचम गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छठवे-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर बारहवें गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वे-१४वे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता को प्राप्ति होना—यह अशब्द स्वभावी वीवराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय का ही फल है।

प्रश्न १४६—क्या मनूष्यभव होने पर गधा कहला सकता है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १४० से १४५ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १४७—क्या मनुष्यभव होने पर सिह कहला सकता है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १४० से १४५ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १४८—क्या मनुष्यभव होने पर कुत्ता कहला सकता है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १४० से १४५ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १४९—क्या मनुष्यभव होने पर बकरा कहला सकता है ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १४० से १४५ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर समझाइये या लिखिए।

प्रश्न १५०—छहढाला मे नरक गति के दु खो के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—(१) उन नरको की भूमि का स्पर्श मात्र करने से नारकियो को इतनी वेदना होती है कि हजारो बिच्छू एक साथ डक मारे तब भी उतनी वेदना न हो। (२) तथा उस नरक मे रक्त, मवाद और छोटे-छोटे कीडो से भरी हुई, शरीर मे दाह उत्पन्न करने वाली एक वैतरणी नदी है। जिसमे शान्ति लाभ की इच्छा से नारकी

जीव कूदते हैं, किन्तु वहाँ भी उनकी पीडा अधिक भयकर हो जाती है। (३) उन नरको मे अनेक सेमल के वृक्ष हैं, जिनके पत्ते तलवार की धार के समान तीक्ष्ण होते है। जब दु खी नारकी छाया मिलने की आशा लेकर उस वृक्ष के नीचे जाता है, तब उस वृक्ष के पत्ते गिरकर उसके शरीर को चीर देते हैं। (४) उन नरको मे इतनी गर्मी होती है कि एक लाख योजन ऊँचे सुमेरुपर्वत के बराबर लोहे का पिण्ड भी पिघल जाता है। (५) उन नरको मे इतनी ठण्ड पडती है कि सुमेरु के समान लोहे का गोला भी गल जाता है। जिस प्रकार लोक मे कहा जाता है कि ठण्ड के मारे हाथ अकड गये, हिम गिरने से वृक्ष या अनाज जल गया आदि। अर्थात अतिशय प्रचड ठण्ड के कारण लोहे मे चिकनाहट कम हो जाने से उसका स्कध बिखर जाता है। (६) उन नरको मे नारकी एक दूसरे को दु ख देते रहते है अर्थात कुत्तो की भाति हमेशा आपस मे लडते रहते हैं। वे एक दूसरे के शरीर के टुकडे टुकडे कर डालते है तथापि उनके शरीर बारम्बार पारे की भाँति बिखर कर फिर जुड जाते हैं। (७) सक्लिष्ट परिणाम वाले अम्बरीष आदि जाति के असुरकुमार देव पहले से लेकर तीसरे नरक तक जाकर वहाँ की तीव्र यातनाओ मे पडे हुए नारकियो को अपने अवधिज्ञान द्वारा परस्पर वैर बतलाकर आपस मे लडाते है और स्वय आनन्दित होते है। (८) उन नारकी जीवो को इतनी प्यास लगती है कि यदि मिल जावे तो पूरे महासागर का जल भी पी जावे तथापि तृषा शाँत ना हो, किन्तु पीने के लिये जल की एक बूंद भी नही मिलती है। (९) उन नरको मे इतनी तीव्र भूख लगती है यदि मिल जावे तो तीन लोक का अनाज एक साथ खा जावे तथापि क्षुधा शात ना हो परन्तु वहाँ खाने के लिये एक दाना भी नही मिलता है। (१०) उन नरको मे यह जीव ऐसे अपार दु ख कम मे कम दस हजार वर्ष और अधिक से अधिक तेतीस सागरोपम काल तक भोगता है।

प्रश्न १५१—छहढाला में ऐसे नरकों के दुःखो का वर्णन क्यो किया है ?

उत्तर—मनुष्यभव व जैनकुल मिलने पर भी यह जीव द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म से भिन्न वीतराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को नही समझा तो मनुष्यभव छोडकर नरकायु मे जा सकता है इसका ज्ञान कराने के लिये छहढाला मे नरको के दु खो का वर्णन किया है।

प्रश्न १५२ मनुष्यभव होने पर भी क्या यह जीव नरकायु में जाने के योग्य भाव कर सकता है ?

उत्तर—हाँ, कर सकता है, क्योंकि मनुष्यभव होने पर यह जीव यदि नारकी जैसे भाव करता है तो वह उस समय नारकी ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे आया है।

प्रश्न १५३—मनुष्य आयु को छोड़कर यह जीव नरक आयु मे क्यो जाता है ?

उत्तर—नारकी जैसे भावो के समय यदि आयु का बध हो गया तो जीव को नरकायु मे जाना पडेगा वहाँ पर निरन्तर नारको के दु खो को भोगना पडेगा—क्योकि "जैसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे आया है।

प्रश्न १५४—मनुष्यभव को छोडकर हमे नरकायु में ना जाना पड़े—उसका कोई उपाय क्या छहढाला में बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। अरे भाई, नरक मे नही जाना हो तो नारकी जैन भावो को मतकर और नरक के दु खो के भावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो मनुष्यभव छोडकर नरक मे न जाना पडेगा। बलिक तुरन्त चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होगी।

प्रश्न १५५—नारकी के भावो से रहित वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म से भिन्न मैं वीतराग विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा हूँ—ऐसा जाने माने तो मुझ निज आत्मा के अलावा अपना पराया कोई दृष्टि मे ही नही आवेगा तब नारकी जैसे भाव भी उत्पन्न नही होगे तब सहजरूप से दृष्टि वीतराग-विज्ञानता-रूप निज शुद्ध आत्मा पर आ जावेगी—इस प्रकार निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बन सकता है।

प्रश्न १५६—नारकी के भावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय लेने से क्या-क्या लाभ प्रगट होते हैं ?

उत्तर—प्रथम तत्काल चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर, फिर पचम गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छठवे-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति; फिर बारहवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वें-१४वें गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशारूप वीत-राग विज्ञानता की प्राप्ति होना—यह वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेने के लाभ हैं।

प्रश्न १५७ - छहढाला में मनुष्यगति के दुःखों के विषय में क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(१) मनुष्यगति मे भी यह जीव नौ महीने तक माता के पेट मे रहा। वहाँ शरीर को सिकोडकर रहने से तीव्र वेदना सहन की जिसका वर्णन नही किया जा सकता है। कभी-कभी तो माता के पेट से निकलते समय माता का अथवा पुत्र का या दोनो का मरण भी हो जाता है। (२) मनुष्यगति मे भी यह जीव बाल्य अवस्था मे विशेष ज्ञान प्राप्त नही कर पाया, यौवन अवस्था मे ज्ञान तो प्राप्त किया, किन्तु विषयभोगो मे भूला रहा और वृद्ध अवस्था मे मरण पर्यन्त पहुँचे ऐसा कोई रोग लग गया कि जिससे अधमरा जैसे पडा रहा। (३) इस प्रकार यह जीव तीनो अवस्थाओ मे आत्मस्वरूप का दर्शन न कर सका। जबकि मनुष्यभव चारो गतियो के अभाव के लिए मिली है।

प्रश्न १५८—छहढाला में मनुष्यभव के दु खो का वर्णन क्यों किया है ?

उत्तर—मनुष्यभव व जैनकुल मिलने पर भी अपना आत्मकल्याण न किया तो जैसे तीनो अवस्थाये व्यर्थ मे खोई-ऐसे ही खोता रहेगा। ऐसा ज्ञान कराने के लिए मनुष्यगति के दु खो का वर्णन किया है।

प्रश्न १५९—मनुष्यभव होने पर भी क्या फिर मनुष्यभव हो सकता है ?

उत्तर—हाँ, हो सकता है। मनुष्यभव होने पर भी जो जीव कभी मन्द कपायरूप शुभभावो मे कभी तीव्र कषायरूप अशुभ भावो मे पागल बना रहता है वह उस समय मनुष्य ही है क्योकि "जैसी मति वैसी गति" जिनवाणी मे कहा है। और यदि ऐसे शुभाशुभ भावो के समय आयु का बन्ध हो गया तो फिर मनुष्यभव में ही जाना पडेगा क्योकि "जैसी गति वैसी मति" जिनवाणी मे कहा है।

प्रश्न १६०—मनुष्यभव को छोड़कर हमें मनुष्यभव में ना जाना पड़े परन्तु धर्म की प्राप्ति करके मोक्ष की प्राप्ति होवे—छहढाला में इसके लिए क्या उपाय बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। यदि यह जीव शुभाशुभ विकारी भावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेवे तो तत्काल चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करके क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करे—यह उपाय छहढाला मे बताया है।

प्रश्न १६१—शुभाशुभ विकारी भावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भाव अशुचि, जडस्वभावी दु खरूप व बधस्वरूप है। और वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा शुचि, चैतन्यस्वभावी सुखरूप व अबन्धस्वरूप है—ऐसा जानकर अपनी प्रज्ञा-रूपी छैनी को वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा की ओर डाल

दे तो वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न १६२—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय लेने के क्या-क्या लाभ छहढाला में बताये हैं?

उत्तर—प्रथम चौथे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर, फिर पचम गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छटवें-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर बारहवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वें-१४वें गुण स्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होना—ये सब वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय के ही लाभ हैं।

प्रश्न १६३—छहढाला मे देवगति के दु खो के विषय मे क्या-क्या बताया है?

उत्तर—(१) जब कभी इस जीव ने अकाम निर्जरा की तब मरकर भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवो मे से किसी एक का शरीर धारण किया। (२) वहाँ भी अन्य देवो का वैभव देखकर पचेन्द्रियो के विषयो की इच्छा रूप अग्नि मे जलता रहा। (३) मदार माला मुरझाते देखकर अपना मृत्युकाल निकट है—ऐसा अवधिज्ञान द्वारा जानकर "हाय-हाय! अब यह भोग मुझे भोगने को नही मिलेंगे ऐसे विचार से रो-रोकर अनेक दु ख सहन किए। (४) यह जीव वैमानिक देवो मे भी उत्पन्न हुआ किन्तु वहाँ इसने सम्यग्दर्शन के विना दु ख उठाए और वहाँ से भी मरकर पृथ्वीकायिक आदि के शरीर धारण किए। इस प्रकार यह जीव अनादिकाल से सम्यग्दर्शन के विना ससार मे भटक रहा है।

प्रश्न १६४—छहढाला मे सम्यग्दर्शन रहित देवगति के दु खो का वर्णन क्यो किया है?

उत्तर—मनुष्यभव व जैनकुल होने पर भी यदि इसने सम्यग्दर्शन प्राप्त न किया तो इस जीव का ससार परिभ्रमण कभी भी समाप्त न

होगा यह ज्ञान कराने के लिए सम्यग्दर्शन रहित देवगति के दु:खो का वर्णन किया है।

प्रश्न १६५—ऐसा उत्तम मनुष्यभव होने पर भी क्या सम्यग्दर्शन रहित देव हो सकता है ?

उत्तर—हाँ, हो सकता है। मनुष्य गति चारो गतियो के अभाव के लिए है। यदि इस जीव ने सम्यग्दर्शन प्राप्त न किया और शुभभावो मे शान्ति मानता रहा तो यह जीव उस समय देव ही है। क्योकि "जैसी मति वैसी गति" ऐसा जिनवाणी मे बताया है और शुभभावो मे शान्ति मानने के समय यदि आयु का बध हो गया तो इसे सम्यग्दर्शन रहित देवायु मे ही जाना पडेगा—वहाँ पर शुभभावो मे मग्न रहेगा। क्योकि "जसी गति वैसी मति" ऐसा जिनवाणी मे आया है।

प्रश्न १६६—मनुष्यभव को छोडकर सम्यग्दर्शन रहित देव के भव मे ना जाना पडे—छहढाला मे क्या इसका कोई उपाय बताया है ?

उत्तर—हाँ, बताया है। शुभभावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा है, उसका आश्रय लेवे तो सम्यग्दर्शन रहित देव के भव मे न जाना पडेगा बल्कि तत्काल चौथे गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति करके क्रमश सिद्धदशारूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होवे—यह उपाय छहढाला मे बताया है।

प्रश्न १६७—देवगति के योग्य शुभभावो मे रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—शुभभाव विरुद्ध स्वभावी, अध्रुव, अनित्य, अशरण, वर्तमान मे दु खरूप और भविष्य मे भी दु खस्वरूप है और वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा अविरुद्ध स्वभावी, ध्रुव, नित्य, शरण रूप, वर्तमान मे सुखरूप और भविष्य मे भी सुख-स्वरूप है—ऐसा

जाने माने तो वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न १६८—शुभभावो से रहित वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय के क्या-क्या लाभ छहढाला मे बतलाए हैं ?

उत्तर—प्रथम चौथे गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर फिर पचम गुणस्थानरूप वीतराग विज्ञानता की प्राप्ति, फिर छटवें-सातवे गुणस्थानरूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर बारहवे गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति, फिर १३वें-१४वे गुणस्थान रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होकर सिद्धदशा रूप वीतराग-विज्ञानता की प्राप्ति होना, ये सब वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा के आश्रय के ही लाभ है।

प्रश्न १६९—प्रथम ढाल के अनुसार मिथ्यादर्शन किसे कहते है ?

उत्तर—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थों व विकारी भावो मे एकत्वपने के श्रद्धान को मिथ्यादर्शन कहते हैं।

प्रश्न १७०—प्रथम ढाल के अनुसार मिथ्याज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर—वीतराग विज्ञानता निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थो व विकारी भावो मे एकत्वपने के ज्ञान को मिथ्याज्ञान कहते हैं।

प्रश्न १७१—प्रथम ढाल के अनुसार मिथ्याचारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—वीतराग-विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर पर पदार्थो व विकारी भावो मे एकत्वपने के आचरण को मिथ्याचारित्र कहते हैं।

प्रश्न १७२—प्रथम ढाल के अनुसार सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर पदार्थों व विकारी भावो से भिन्न वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं।

प्रश्न १७३—प्रथम ढाल के अनुसार सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर पदार्थों व विकारी भावो से भिन्न वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा के ज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते है।

प्रश्न १७४—प्रथम ढाल के अनुसार सम्यक्चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर पदार्थो व विकारी भावो से भिन्न वीतराग-विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा के आचरण को सम्यक्चारित्र कहते हैं।

प्रश्न १७५—अज्ञानी जीव एकमात्र मोहरूपी शराब मे ही फंस-कर ससार मे घूम रहा है, किसी पर द्रव्य या द्रव्यकर्म के कारण नहीं; जरा इसे स्पष्ट समझाइए ?

उत्तर—(१) समयसार गाथा २३७ से २४२ तक मे एकमात्र रागादि को ही वध का कारण कहा है। बहु कर्म योग्य पुद्गलो से भरा लोक, मन-वचन-काय की क्रियारूप योग, अनेक प्रकार के कारण है, और चेतन-अचेतन के घात को बध का कारण नही कहा है। इस-लिए यह निश्चय है कि वध के कारण रागादिक ही हैं। (२) मैं भूल स्वय के वैभव को, पर ममता मे अटकाया हू—ऐसा पूजा मे भी आया है। (३) जैसे—तोता नलनी को पकडकर ऐसा मानता है कि इसने मुझे पकडा है, वैसे ही अज्ञानी मात्र अपनी मूर्खता से मानता है कि स्त्री-पुत्रादि ने मुझे पकडा है। (४) जैसे—बन्दर ने चने के लिए घडे मे हाथ डाला, मुट्ठी स्वय वन्द करने पर न निकलने पर इसने मुझे पकडा है, वैसे ही अज्ञानी मानता है कर्मों ने मुझे पकडा है। इसलिए यह सिद्ध हुआ एकमात्र एकत्व बुद्धि-भ्रम बुद्धि ही ससार का कारण है पर या द्रव्यकर्म नही है।

प्रश्न १७६—चिद्विलास मे दुःख का कारण किसे बताया है ?

उत्तर—(१) कुत्ते की उलझन इतनी है कि वह व्यर्थ मे भोकता है, वैसे ही अज्ञानी व्यर्थ मे चौबीसो घन्टे भो-भाँ करता रहने से दुःखी है। (२) तीन मोडे वाली रस्सी मे साँप मानता है, उसी प्रकार अज्ञानी पर के कार्यो मे अपनापना मानता है इसी से वह दुःखी

रहता है। (३) मृग मरीचिका मे जल मानकर दौडता है फिर महान दु खी होता है, उसी प्रकार अज्ञानी पर वस्तुओ मे सुख मानकर दौडा दौड करता है फिर महान दु खी होता है। (४) एक स्त्री ने काठ की पुतली बनवाकर अपने महल मे अलकार और वस्त्र पहिनाकर सेज पर सुला दिया और कपडे से ढक दिया। उस स्त्री का पति आया और उसने समझा कि यह मेरी धर्म-पत्नी है, सो रही है, यह समझकर वह उसे हिलाने लगा और फिर हवा करने लगा। फिर भी जब वह ना बोली तो उसने सारी रात उसकी बहुत सेवा की और सवेरा होने पर जब उसने समझा कि यह तो काठ की पुतली है तब वह पछताया कि मैंने झूठी सेवा की है, उसी प्रकार अनादिकाल से एक-एक समय करके अज्ञानी पर अचेतन की सेवा व्यर्थ कर रहा है। परन्तु अपना ज्ञान होने पर जब वह जानता है कि यह तो जड का कार्य है मेरा नही है तब वह उससे प्रेम त्याग देता है और स्वरूपानदी होकर सुख प्राप्त करता है। इसस यह सिद्ध हुआ कि एकमात्र पर पदार्थो मे अपनेपने-एकत्वबुद्धि-भ्रमबुद्धि ही ससार का कारण है, पर द्रव्य, द्रव्यकर्म ससार का कारण नही है।

— प्रथम ढाल भेदविज्ञान समाप्त —

सम्यग्दर्शन की महानता

यह सम्यग्दर्शन महा रत्न है; सर्वलोक के एक भूषणरूप है अर्थात् सम्यग्दर्शन सर्व लोक मे अत्यन्त शोभायमान है और वही मोक्षपर्यंत सुख देने मे समर्थ है।

[ज्ञानार्णव अ० ६ गा० ५३]

दूसरी ढाल

संसार परिभ्रमण के कारण —

पद्धडी छन्द

ऐसे मिथ्या-दृगज्ञानचर्ण,—वश भ्रमत भरत दुख जन्म मर्ण।
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान ॥१॥

अग्रहीतमिथ्यादर्शन और जीवतत्व का स्वरूप —

जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिनमांहि विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप, विनमूरति चिनमूरति अनूप ॥२॥

जीवतत्व का विपरीत-श्रद्धान —

पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।
ताकों न जान विपरीत मान,-करि करैं देह में निज पिछान ॥३॥

मिथ्यादृष्टि का शरीर आदि पर पदार्थ के प्रति विचार —

मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥

अजीवतत्व और आश्रवतत्व का विपरीत श्रद्धान —

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रगट ये दुख दैन, तिनही को सेवत गिनत चैन ॥५॥

बन्धतत्व और संवरतत्व का विपरीत श्रद्धान —

शुभ-अशुभ बंधके फल मंझार, रति अरति करै निजपद बिसार।
आतमहित हेतुविराग ज्ञान, ते लखैं आपकौं कष्टदान ॥६॥

निर्जरा मोक्ष तत्व का विपरीत श्रद्धान, अगृहीत मिथ्याज्ञान का स्वरूप —

रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय।
याही प्रतीतिजुत कछुकज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥

अगृहीत-मिथ्याचारित्र का लक्षण .—

इन जुत विषयनि मे जो प्रवृत्त, ताकौं जानो मिथ्याचरित्त।
यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अव जे गृहीत सुनिये सुतेह ॥८॥

गृहीतमिथ्यादर्शन और कुगुरु का स्वरूप —

जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषैं चिर दर्शन मोह एव।
अंतर रागादिक धरं जेह, वाहर धन अंवरतं सनेह ॥९॥
धारे कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्म-जल-उपलनाव।

कुदेव का स्वरूप —

जे रागद्वेषमलकरि मलोन, वनिता-गदादिजुत चिन्ह चीन्ह ॥१०॥
ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भव-भ्रमण छेव।

कुधर्म और गृहीतमिथ्यादर्शन का लक्षण —

रागादि भावहिंसासमेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत ॥११॥
जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म।
याकूं गृहीतमिथ्यात जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान ॥१२॥

गृहीतमिथ्याज्ञान का लक्षण —

एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त।
कपिलादिरचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥

गृहीतमिथ्याचारित्र का स्वरूप .—

जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह, धरि करत विविध विध देहदाह।
आतम अनातम के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन ॥१४॥

मिथ्याचरित्र और ससार के त्याग का उपदेश —

ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित-पथ लाग।
जगजाल-भ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत निज आतम सुपाग ॥१५॥

❦

दूसरी ढाल के ऊपर से भेदविज्ञान

प्रश्न १७७—पर पदार्थों व विकारी भावो मे तेरी-मेरी मान्यता को छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या कहा है ?

उत्तर—'ऐसे मिथ्यादृग-ज्ञान चरण वश, भ्रमत भरत दु ख जन्म-मरण ।' अर्थात् अज्ञानी मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र के वश मे होकर जन्म-मरण के दु खो को भोगता हुआ चारो गतियो मे भटकता फिरता है ।

प्रश्न १७८—जिनेन्द्र भगवान ने सबसे बड़ा पाप किसे कहा है ?

उत्तर—मिथ्यात्वादि को सप्त व्यसनादि से भी भयकर महापाप कहा है ।

प्रश्न १७९—मिथ्यात्वादि को सप्त व्यसनादि से भी भयकर महापाप किस जगह कहा है ?

उत्तर—अरे भाई, चारो अनुयोगो मे कहा है ।

प्रश्न १८०—क्या मोक्षमार्गप्रकाशक मे मिथ्यात्वादि को सप्त-व्यसनादि से भी भयंकर पाप कहीं बताया है ?

उत्तर—हाँ बताया है । पृष्ठ १९१ मे लिखा है "हे भव्य! किंचित मात्र लोभ व भय से भी कुदेवादि का सेवन न कर, कारण कि इससे अनन्त काल तक महान दु ख सहना पडता है, इसलिए मिथ्यात्व भाव करना योग्य नही है । जैन धर्म मे तो ऐसी आम्नाय है—पहले बडा पाप छुडाकर पीछे छोटा पाप छुडाया है । इसलिए मिथ्यात्व को सप्त व्यवसनादि से भी महान पाप जान पहले छडाया है ।"

प्रश्न १८१—मिथ्यादर्शनादि कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—अगृहीत-गृहीत के भेद से मिथ्यादर्शनादि दो-दो प्रकार के हैं ।

प्रश्न १८२—छहढाला की दूसरी ढाल मे अगृहीत मिथ्यादर्शनादि और ग्रहीत मिथ्यादर्शनादि का स्वरूप क्या-क्या बताया है?

उत्तर—"जीवादि प्रयोजनभूत तत्व" जीवादि सात तत्व प्रयोजन भूत किस प्रकार है ? (१) जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन हो वह जीवतत्व है, वह जीवतत्व एकमात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (२) जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नही है वे अजीव तत्त्व है, मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव द्रव्य, अनतानत पुद्गल द्रव्य, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक द्रव्य, लोकप्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं, ये सब द्रव्य जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (३) शुभाशुभ-विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है आस्रव तत्त्व छोडने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (४) शुभाशुभ विकारी भावो मे अटकना बध तत्त्व है, बध तत्त्व छोडने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (५) शुद्धि का प्रगट होना सवर तत्त्व है, सवर तत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है (६) शुद्धि को वृद्धि होना निर्जरा तत्त्व है, निर्जरा तत्त्व एकदेश प्रगट करने योग्य प्रयाजनभूत तत्त्व है। (७) सपूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्त्व है, मोक्ष तत्त्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्त्वो का अनादिकाल से उल्टा श्रद्धान **अगृहीत मिथ्या दर्शन** है ॥१॥ इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्त्वो का अनादिकाल से उल्टा ज्ञान **अगृहीत मिथ्या ज्ञान** है—२॥ ‥ इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो का अनादिकाल से उल्टा आचरण **अगृहीत मिथ्या चारित्र** है ॥३॥ ‥ इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्त्वो का दूसरे के कहने से उल्टा श्रद्धान **गृहीत मिथ्या दर्शन** है ॥४॥ ‥ इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्त्वो का दूसरे के कहने से उल्टा ज्ञान **गृहीत मिथ्या ज्ञान** हैं ॥५॥ ‥‥ इस प्रकार प्रयोजन-भूत सात तत्त्वो का दूसरे के कहने से उल्टा आचरण **गृहीत मिथ्याचारित्र** है ॥६॥

[मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३२०]

प्रश्न १८३—निज जीवतत्व का स्वरूप अस्ति-नास्ति से छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(१) [चेतन को है उपयोग रूप] मैं ज्ञान-दर्शन उपयोग-मयो जीवतत्व हूँ। (२) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। (३) [बिनमूरत] आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है। (४) [चिन्मूरत] चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है (५) [अनूप] सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है। [पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतें न्यारी है जीव चाल] (६) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य हैं। इन अनन्त जीवों से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। (७) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। इन अनन्ता-नत पुद्गल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। (८) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एक धर्म-द्रव्य और एक अधर्म द्रव्य है। इन धर्म-अधर्म द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। (९) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य है। इस आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। (१०) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे एक प्रदेशी लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। इन काल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। अर्थात् विश्व मे मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव द्रव्यो से, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यो से, एक-एक धर्म-अधर्म आकाश द्रव्य से और लोक-प्रमाण असख्यात काल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है, क्योकि इन सब द्रव्यो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ। ऐसा निज जीव-तत्त्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल मे बताया है।

ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व पर १४ प्रश्नोत्तर द्वारा स्पष्टीकरण

प्रश्न १८४—चेतन को है उपयोग रूप अर्थात् मै ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ। इस वाक्य पर जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण करियेगा ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ,	कैलाश चन्द्र नामरूप अनन्त पुद्गल द्रव्यो मे अपनापना मानकरि,	कैलाशचन्द्र नामरूप अनन्त पुद्गल द्रव्यो से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आतम मे निज पिछान	इसका फल
मे ज्ञान-दर्शन-उपयोगमयी जीवतत्व हू,	कैलाशचन्द्र नामरूप अनन्त पुदगल द्रव्यो से भिन्न ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व मे अपनापना मान करि	ज्ञान-दर्शन उपयोग मयी निज जीवतत्व से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष हैं।

प्रश्न १८५—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का भूलकर मैं प० कैलाशचन्द्र हूँ। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' को समझाइए ?

उत्तर—मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ—इस बात को भूलकर (ताको न जान) मैं प० कैलाशचन्द्र हूँ। इस प्रकार नामरूप

अनन्त पुद्गल द्रव्यो मे अपनेपने की मान्यता विपरीत मान्यता है।
—[विपरीतमान]

प्रश्न १८६—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व को भूलकर मैं पं० कैलाशचन्द्र हूँ। इस विपरीत मान्यता का फल क्या है?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न १८७—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व को भूलकर मैं प० कैलाशचन्द्र हूँ। इस विपरीत मान्यतारूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो?

उत्तर—प० कैलाशचन्द्र नाम पुद्गलो का है। प० कैलाशचन्द्र नामरूप पुद्गलो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि प० कैलाशचन्द्र नामरूप पुद्गलो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो, तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मैं प० कैलाशचन्द्र हूँ—ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १८८—प० कैलाशचन्द्र नामरूप अनन्त पुद्गलों से भिन्न ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय लेना कैसे बने?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुए भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधीन नही हैं, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती हैं।" ऐसा जाने-माने तो तत्काल प० कैशालचन्द्र नामरूप पुद्गलो से भिन्न ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय लेना बने।

प्रश्न १८९—मै ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ, इस बात को भूलकर मैं प० कैलाशचन्द्र हूं। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्या-दर्शनादि को समझाइये?

उत्तर—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व को भूलकर पं० कैलाशचन्द्र हूँ। ऐसा अनादि काल का श्रद्धान यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। ...... ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है। ......ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न १९०—मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ, इस बात को भूलकर मै पं० कैलाशचन्द्र हू। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि को समझाइये ?

उत्तर—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व को भूलकर दूसरों के कहने से मैं ० कैलाशचन्द्र हूँ।.... ऐसा दृढ विपरीत श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है। .. ऐसा दृढ विपरीत ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।.. .. ऐसा दृढ विपरीत आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न १९१—मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ, इस बात को भूलकर मै पं० कैलाशचन्द्र हू, इस वाक्य पर सम्यग्दर्शनादि को समझाइये ?

उत्तर—पं० कैलाशचन्द्र नामरूप पुद्गलो से सर्वथा भिन्न मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। . ऐसा श्रद्धान-सम्यग्दर्शन है। .. ऐसा ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।.. ऐसा आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न १९२—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व को भूलकर मै सेठ हूं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' के प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १८४ से १९१ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १९३—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व को भूलकर मैं सेठानी हूं। इस वाक्य पर—'ताकों न जान—विपरीत मान' के प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १८४ से १९१ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

१९४—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज तत्त्व को भूलकर मै नेमचंद्र हूं। इस वाक्य पर 'ताकों न जान—विपरीत मान' के १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १८४ से १९१ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न १९५—ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज तत्व को भूलकर मैं जवान हू। इस वाक्य पर 'ताको न जान—विपरीत मान' के १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १८४ से १९१ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

सर्व दुःखों की परम-औषधि

जो प्राणी कषाय के आताप से तप्त हैं, इन्द्रिय विषयरूपी रोग से मूर्च्छित हैं, और इष्टवियोग तथा अनिष्टसंयोग से खेदखिन्न हैं—उन सबके लिये सम्यक्त्व परम हितकारी औषधि है। [सारसमुच्चय—३८]

मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। इस पर १४ प्रश्नोत्तरो द्वारा स्पष्टीकरण

प्रश्न १६६—चेतन को है उपयोगरूप अर्थात् मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण कीजिएगा ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है,	उठना-चलना-बोलना आदि शरीर के कार्यों मे अपना-पना मानकरि,	उठना-चलना आदि शरीर के कार्यों मे अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान	इसका फल
मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है,	उठना-चलना आदि शरीर के कार्यों से भिन्न ज्ञाता-दृष्टा काय मे अपनापना मानकरि,	ज्ञाता-दृष्टा कार्य से ही अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न १६७—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं सुबह उठता हूं। इस वाक्य पर 'ताको न जान—विपरीत मान' को समझाइये ?

उत्तर—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर (ताको न जान) शरीर के उठने को आत्मा का उठना मानना। यह विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न १९८—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर शरीर की उठनेरूप क्रिया को आत्मा की क्रिया मानने रूप विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न १९९—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर शरीर की उठने रूप क्रिया को आत्मा की क्रिया मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—शरीर के उठने रूप पुद्गलो के कार्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य के कार्यों का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक है। ऐसा जानकर ज्ञाता-दृष्टा उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो शरीर के उठने रूप क्रिया को आत्मा की क्रिया मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मैं सुबह उठता हूँ—ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २००—सुबह उठना आदि पुद्गलो के कार्यों से भिन्न ज्ञाता-दृष्टा उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुए भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।" ऐसा जाने-माने तो सुबह उठना आदि पुद्गलो के कार्यों से सर्वथा भिन्न तत्काल ज्ञाता-दृष्टा उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २०१—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मै सुबह उठता हूँ। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं सुबह

उठता हूँ; 'मैं रोटी खाता हूँ आदि शरीर के कार्यों मे··· अनादिकाल से अपने कार्य का श्रद्धान यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। · अनादिकाल से अपने कार्य का ज्ञान यह अगृहीत मिथ्या ज्ञान है। अनादिकाल से अपने कार्य का आचरण यह अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २०२—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं सुबह उठता हूँ। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं सुबह उठता हू, मैं रोटी खाता हू आदि शरीर के कार्यों मे दूसरे के कहने से अपने कार्य का दृढ मिथ्या श्रद्धान-गृहीत मिथ्यादर्शन है। ··· दृढ मिथ्या-ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है। ···· दृढ मिथ्या-आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २०३—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं सुबह उठता हूँ। इस वाक्य पर सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—सुबह उठना-खाना-बोलना आदि शरीर के कार्यो से सर्वथा भिन्न मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। ऐसा जानकर निज ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। ·· निज ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ·· निज ज्ञाता-दृष्टास्वभाव का आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २०४—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं प्रवचन करता हूं। इस वाक्य पर "ताकों न जान—विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर प्रश्नोत्तर १९६ से २०३ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये ?

प्रश्न २०५—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मै कपड़े की दुकान करता हू। इस वाक्य पर "ताको न जान-विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १९६ से २०३ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २०६—मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है, इस बात को भूलकर मैं साबुन से नहाता हूं। इस वाक्य पर "ताको न जान—विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर १९६ से २०३ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

बिन मूरत पर १४ प्रश्नोत्तरों का स्पष्टीकरण

प्रश्न २०७—बिनमूरत अर्थात् आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नहीं है; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण करिए।

उत्तर—

ताकों न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
आँख-कान-नाक औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नही है,	आँख-कान-नाक औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति है—ऐसा मान करि,	आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज-पिछान	इसका फल
आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नही है,	अतीन्द्रिय मेरी मूर्ति है—ऐसा मान करि,	अतीन्द्रिय आत्मा से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २०८—विनमूरत अर्थात् आँख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मै आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो वाला हूं, इस वाक्य पर "ताको न जान—विपरीत मान" को समझाइये ?

उत्तर—विनमूरत अर्थात् आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो-रूप मेरी मूर्ति नही है, क्योकि मै तो ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी चैतन्य मूर्ति वाला हू । इस बात को भूलकर (ताको न जान) आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो वाला अपने को (आत्मा को) मानना यह विपरीत मान्यता है । (विपरीतमान)

प्रश्न २०९—विनमूरत अर्थात् आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मै आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो वाला हूं, इस विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है ।

प्रश्न २१०—बिनमूरत अर्थात् आँख-कान-नाक औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मैं आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो वाला हूं, इस निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप पुद्‌गलो की मूर्ति से मुझ चैतन्य अरूपी मूर्ति का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य की मूर्ति का द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव पृथक-पृथक है । ऐसा जानकर निज चैतन्य अरूपी मूर्ति का आश्रय ले तो आँख-नाक-कान औदारिक शरीरो वाला मैं हू ऐसी निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो, तब अनुपचरित असद्‌भूत व्यवहारनय से मैं आँख-नाक-कान औदारिक शरीरो वाला हू, ऐसा कहा जा सकता है । परन्तु ऐसा है नही ।

प्रश्न २११—आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरों से भिन्न निज चैतन्य अरूपी मूर्ति का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के अधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती हैं।" ऐसा जाने-माने तो आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो से भिन्न तत्काल निज चैतन्य अरूपी मूर्ति का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २१२—बिनमूरत पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—बिनमूरत अर्थात् आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो-रूप मेरी मूर्ति नही है, इस बात को भूलकर आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति है। ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है। ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है। ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्या चारित्र है।

प्रश्न २१३—बिनमूरत पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—बिन मूरत अर्थात् आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नही है, इस बात को भूलकर आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति है। दूसरे के कहने से ऐसा दृढ श्रद्धान-गृहीत मिथ्यादर्शन है। दूसरे के कहने से ऐसा दृढ ज्ञान-गृहीत मिथ्या ज्ञान है। दूसरे के कहने से ऐसा दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचरित्र है।

प्रश्न २१४—बिनमूरत पर सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नही है, क्योकि मैं तो चैतन्य अरूपी मूर्ति वाला हूँ—ऐसा श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। ऐसा ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ऐसा आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २१५—विन मूरत अर्थात् आंख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मैं दो हाथ और दो पांव वाला हूं। इस वाक्य पर "ताको न जान-विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २०७ से २१४ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २१६—विनमूरत अर्थात आंख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मैं दो आंख और दो कान वाला हूं। इस वाक्य पर "ताको न जान-विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २०७ से २१४ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २१७—विनमूरत अर्थात् आंख-नाक-कान औदारिक आदि शरीररूप मेरी मूर्ति नहीं है, इस बात को भूलकर मेरे हाथ-पैरो की बीस उंगलियां हैं। इस वाक्य पर "ताको न जान-विपरीत मान" आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २०७ से २१४ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

सर्व धर्मो का मूल

ज्ञान और चारित्र का बीज सम्यग्दर्शन है, यम और प्रशमभाव का जीवन सम्यग्दर्शन ही है और तप तथा स्वाध्याय का आधार भी सम्यग्दर्शन ही है—ऐसा आचार्यों ने कहा है।

(ज्ञानार्णव अ० ६ गाथा ५४)

चिन्मूरत पर १४ प्रश्नोत्तरों का स्पष्टीकरण

प्रश्न २१८—चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण।

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है	जडरूपी एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारो मे अपना-पना मान करि,	जडरूपी एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारो से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मानकरि	करै आत्म मे निज-पिछान	इसका फल
चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है	चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी आत्मा मे अपना-पना मान करि	चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक आत्मा से ही अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २१९—चिन्मूरत अर्थात् चैतन्यअरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है, इस बात को भूलकर जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारों मे, यह मेरा आकार है। इस वाक्य पर जान-विपरित मान' को समझाइये ?

उत्तर—जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो से मुझ चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक आकार का सर्वथा सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर (ताको न जान) जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो मे, यह मेरा आकार है—यह विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न २२०—चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है, इस बात को भूलकर जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारों मे—यह मेरा आकार है, इस विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर –चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न २२१—चिन्मूरत अर्थात् चैतन्यअरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है, इस बात को भूलकर जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो में आत्मा के आकार माननेरूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो से मुझ चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य के आकार का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव-पृथक-पृथक है। ऐसा जानकर चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार का आश्रय ले तो जडरूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो मे आत्मापने की मान्यतारूप निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहार से मैं जड़ रूपी एक प्रदेशी अनन्त आकारो वाला हू—ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २२२—जड़रूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारों से सर्वथा भिन्न चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक निज आकार का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुए भिन्न-भिन्न अपनी अपनी मर्यादा

सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।" ऐसा जाने-माने तो जडरूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो से सर्वथा भिन्न चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २२३—चिन्मूरत पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार को भूलकर जडरूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के अनन्त आकारो मे मैं प० कैलाशचन्द्र हू। ... ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है। . ऐसा अनादिकाल का ज्ञान-अगृहीत मिथ्याज्ञान है। .. ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २२४—चिन्मूरत पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार को भूलकर जडरूपी एकप्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो मे दूसरे के कहने से मैं प० कैलाशचन्द्र हू। . ऐसा दृढ श्रद्धान-गृहीत मिथ्यादर्शन है। ऐसा दृढ ज्ञान-गृहीत मिथ्याज्ञान है। ऐसा दृढ आचरण-गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २२५—चिन्मूरत पर सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—जडरूपी एक प्रदेशी अनन्त पुद्गलो के आकारो से सर्वथा भिन्न चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आकार वाला हू। . .. ऐसा श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। . .. ऐसा ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ... ऐसा आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २२६—चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक निज आकार को भूलकर मैं लम्बे-चौड़े आकार वाला हूँ। इस वाक्य पर 'ताकों न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—सर्वज्ञ स्वभावी मुझ निज आत्मा का रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों से सर्वथा सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर (ताको न जान) रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों को अनुपम मानना—यह विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न २३१—अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एक मात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों को अनुपम मानने रूप विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न २३२—अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एक मात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर रुपया पैसा आदि पर पदार्थों को अनुपम मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ निज आत्मा ही अनुपम है। रुपया-पैसा आदि पर पदार्थ अनुपम नही है, क्योकि रुपया पैसा आदि पर पदार्थों का और सर्वज्ञ स्वभावी मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर सर्वज्ञ-स्वभावी निज अनुपम आत्मा का आश्रय ले तो रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों को अनुपम मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से रुपया-पैसा आदि पर पदार्थ अनुपम हैं। ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २३३—रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों से सर्वथा भिन्न सर्वज्ञ स्वभावी निज अनुपम आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादि निधन वस्तुऐ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नही है, कोई किसी

के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।" ऐसा जाने-माने तो रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों से सर्वथा भिन्न सर्वज्ञ स्वभावी-निज अनुपम आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २३४—अनूप पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइए ?

उत्तर—अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एक मात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों को अनुपम मानने रूप · अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है। · अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है। · अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २३५—अनूप पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइए ?

उत्तर—अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एक मात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों को दूसरो के कहने से ···अनुपम मानने का दृढ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है। · अनुपम मानने का दृढ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है। ·· अनुपम मानने का दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २३६—अनूप पर सम्यग्दर्शनादि समझाइए ?

उत्तर—रुपया-पैसा आदि पर पदार्थों से सर्वथा भिन्न सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से निज आत्मा मे—अनुपमपने का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। · अनुपमपने का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ·····अनुपमपने का आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २३७—अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एकमात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर मेरा महल अनुपम है। इस वाक्य पर 'ताको' न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइए ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २२९ से २३६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

प्रश्न २३८—अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एकमात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर मेरी धर्म-पत्नी उत्तम है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइए ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २२६ से २३६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

प्रश्न २३९—अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से एक मात्र निज आत्मा ही अनुपम है, इस बात को भूलकर मेरा लड़का ही अनुपम है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २२६ से २३६ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिए।

परम रत्न

शंकादि दोषों से रहित ऐसा सम्यग्दर्शन वह परम रत्न है। और वह परमरत्न संसार-दुःखरूपी दरिद्रता का अवश्य नाश करता है।

[सार समुच्चय-४०]

मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव है। उन अनन्त जीवो से मेरा सम्बन्ध नहीं है। इस विषय पर १४ प्रश्नोत्तरो का स्पष्टीकरण

प्रश्न २४०—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं; इनसे न्यारी है मुझ जीवचाल, इस वाक्य पर जीव तत्व सबधी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण करिये ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
विश्व के अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है क्योकि उनकी चाल मुझ से भिन्न है,	यह मेरा बाप, यह मेरी माँ, यह मेरी धर्मपत्नी आदि पर जीवो मे अपनापना मान करि,	माँ-बाप-धर्मपत्नी-गुरु आदि दूसरे जीवो से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान	इसका फल
विश्व के अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि उनकी चाल मुझ से भिन्न है,	मा-बाप-गुरु आदि पर जीवो से भिन्न ज्ञान-दर्शनादि गुणो मे अपनापना मान करि,	ज्ञान दर्शन-चारित्र आदि अनन्त गुणो से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २४१—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव है। उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस वाक्य पर 'ताको न जान विपरीत मान' को समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवो से मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर (ताको न जान) माता-पिता मे अपनेपने की (निज आत्मपने की) खोटी बुद्धि यह विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न २४२—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं; उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न २४३—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवों से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व के अनन्त जीवो से व माता-पिता से मेरा सवथा सम्बन्ध नही है क्योकि मुझ निज आत्मा का तथा दूसरे अनन्त जीवो व माता-पिता का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय ले तो माता-पिता मे अपनेपने की निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से ये मेरे माता-पिता हैं ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २४४—माता-पिता से सर्वथा भिन्न ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुये भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा

सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के साधीन नही है, कोई किसो के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है। ऐसा जाने-माने तो माता-पितादि सर्वजीवो से सर्वथा भिन्न तत्काल ज्ञान-दर्शन उपयोग-मयी निज जीवतत्व का आश्रय लेना वने।

प्रश्न २४५—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनत जीव हैं। उन अनन्त जीवों से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस वात को भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्या-दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवो से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्वन्ध नही है, इस वात को भूलकर माता-पिता मे निज आत्मपने रूप अनादिकाल का विपरीत श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है। ... अनादिकाल का विपरीत ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है। .. अनादि-काल का विपरीत आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २४६—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं, उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव है। उन अनन्त जीवो से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नही है, इस बात को भूलकर माता-पिता मे निज आत्मपने की.. .. दूसरे के कहने से दृढ श्रद्धान गृहीत मिथ्या दर्शन है। . . दूसरे के कहने से दृढ ज्ञान-गृहीत मिथ्याज्ञान है।... . दूसरे के कहनें से दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

२४७—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं, उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात

भूलकर ये मेरे माता-पिता हैं। इस वाक्य पर सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं, उन अनन्त जीवो से व माता-पिता से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नही है।··· ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।····· ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। · ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व मे आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २४८—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर यह मेरा देव है। इस वाक्य मे 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २४० से २४७ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २४९—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवों से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे पति हैं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २४० से २४७ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २५०—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं। उन अनन्त जीवो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे गुरू हैं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २४० से २४७ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य है। उनसे मेरा सम्बन्ध नहीं है। इस विषय पर १४ प्रश्नोत्तरों का स्पष्टीकरण

प्रश्न २५१—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल समान जातीय द्रव्य पर्यायें हैं; इनतें न्यारी है मुझ जीव चाल। इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलों द्वारा स्पष्टीकरण ?

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह ने निज पिछान	इसका फल
विश्व मे समान जातीय अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य पर्यायें है, इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योंकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	सोने का हार, मोटर, मकान, दुकान आदि समान जातीय द्रव्य पर्यायो मे अपनापना मान करि,	यह मेरा सोने का हार, यह मेरा मकान आदि समान जातीय पुद्गल स्कन्धो से अपनी पहचान करता है,	निगोद हैं।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आतम मे निज पिछान**	**इसका फल**
विश्व मे समान जातीय अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य पर्यायें है, इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योंकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	सोने का हार, मोटर आदि समान जातीय द्रव्य पर्यायो से भिन्न ज्ञान-दर्शनादि अभेद आत्मा मे अपनापना मान करि,	ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि गुणो के अभेद ज्ञायक भगवान आत्मा से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष हैं।

प्रश्न २५२—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। पुद्गल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर यह मेरे हीरे-जवाहरात हैं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' को समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य है। इन पुद्गल द्रव्यो से मेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है, इस बात को भूलकर (ताको न जान) हीरे-जवाहरातो मे अपनेपने की बुद्धि—यह विपरीत मान्यता है (विपरीत मान)।

प्रश्न २५३—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। पुद्गल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सबध नहीं हैं इस बात को भूलकर ये मेरे हीरे-जवाहरात हैं—इस विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न २५४—हीरे जवाहरातो मे आत्मापने की निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। उन अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यरूप हीरे-जवाहरातो से मेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि मुझ निज आत्मा का और हीरे-जवाहरातोरूप पुद्गलो का द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो हीरे-जवाहरातो मे आत्मापने की निगोदबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब उपचरित असदभूत व्यवहारनय से ये हीरे-जवाहरात मेरे हैं। ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २५५ हीरे-जवाहरातों मे सर्वथा भिन्न ज्ञान-दर्शन उपयोग मयी निज तत्व का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—'अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है, कोई किसी के अधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है, ऐसा जाने-माने तो हीरे-जवाहरातो से सर्वथा भिन्न ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २५६—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल हीरे-जवाहरात आदि हैं। इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर मेरे हीरे-जवाहरात आदि है। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल हीरे-जवाहरात आदि हैं इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, इस बात को भूलकर हीरे-जवाहरातो आदि पुद्गल द्रव्यो मे · अपनेपने रूप अनादिकाल का श्रद्धान-अगृहीत मिथ्यादर्शन है।··· · अपनेपने रूप अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है। · ·· अपनेपने रूप अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २५७—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्तानन्त पुद्गल हीरे-जवाहरात आदि हैं। इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर मेरे हीरे-जवाहरात आदि हैं। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल हीरे-जवाहरात आदि हैं। इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, इस बात को भूलकर हीरे-जवाहरातादि पुद्गल द्रव्यो मे ··· दूसरे के कहने से अपनेपने का दृढ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है। · दूसरे के कहने से अपनेपने का दृढ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है। · दूसरे के कहने से अपनेपने का दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २५८—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्तानन्त पुद्गल हीरे-जवाहरात आदि हैं। इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, इस बात को भूलकर मेरे हीरे जवाहरात आदि हैं। इस वाक्य पर

सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—हीरे-जवाहरात आदि अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यो से सर्वथा भिन्न ज्ञान दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व मे · अपनेपने का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। ···· अपनेपने का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ···· अपनेपने का आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २५९—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरे सोने-चाँदी के बर्तन हैं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २५१ से २५८ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २६०—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरा संगमरमर का महल है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २५१ से २५८ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २६१—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्यो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर ये मेरा १०० तोले का सोने का हार है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २५१ से २५८ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

विश्व मे असंख्यात प्रदेशी एक धर्मद्रव्य और एक अधर्मद्रव्य है।

इस विषय पर १४ प्रश्नोत्तरो का स्पष्टीकरण

प्रश्न २६२—मुझ निज आतमा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एक धर्मद्रव्य, एक अधर्मद्रव्य है, इनतें न्यारी है मुझ जीव चाल; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान
विश्व मे असख्यात प्रदेशी एक धर्म द्रव्य और एक अधर्म द्रव्य है, इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है, ऐसा मान करि,	धर्म द्रव्य और अधर्म द्रव्यो से अपनी पहचान करता है, इसका फल निगोद है।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आत्म मे निज पिछान**
विश्व मे असख्यात प्रदेशी एक धर्म द्रव्य और एक अधर्म द्रव्य है इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	मैं अपनी क्रियावती शक्ति के गमनरूप परिणमन से क्षेत्रातर होता हूँ और स्थिर-रूप परिणमन से स्थिर होता हूँ ऐसा मान करि,	क्रियावती शक्ति ज्ञान-दर्शन आदि ज्ञायक स्वभावी आत्मा से अपनी पहचान करता है, इसका फल मोक्ष है।

२६३- मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे एक-एक धर्म-अधर्म नाम के द्रव्य हैं। धर्म-अधर्म द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' को समझाइये ?

उत्तर—जब जीव स्वय स्वत अपनी क्रियावती शक्ति के कारण गमन करता है तब धर्म द्रव्य निमित्त होता है और जब जीव स्वय स्वत अपनी क्रियावती शक्ति के कारण गमनरूप परिणमन से स्थिर होता है तब अधर्म द्रव्य निमित्त होता है। ऐसा स्वतन्त्र निमित्त, नैमित्तिक सम्बन्ध है। इस बात को भूलकर (ताको न जान) धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। यह खोटी बुद्धि विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न २६४—निज भगवान आत्मा की क्रियावती शक्ति को भूलकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस खोटी बुद्धि का क्या फल है ?

उत्तर - चारो गतियों मे घूमकर निगोद इस खोटी बुद्धि का फल है।

प्रश्न २६५—निज भगवान आत्मा की क्रियावती शक्ति को भूलकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एक-एक धर्म-अधर्म नाम के द्रव्य हैं। धर्म अधर्म द्रव्य से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का कर्त्ता, भोक्ता का सम्बन्ध नही है, क्योकि मुझ निज आत्मा का और धर्म-अधर्म द्रव्य का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव पृथक-पृथक हैं। ऐसा जानकर क्रियावती शक्तिरूप निज शुद्ध आत्मा का आश्रय ले तो धर्म अधर्म द्रव्य के विषय मे निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो, तब उपचरित असद्‌भूत

व्यवहारनय से धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २६६—धर्म-अधर्म द्रव्यो से सर्वथा भिन्न क्रियावती शक्ति रूप निज भगवान आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—'अनादि निधन वस्तुए भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के अधीन नही है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।' ऐसा जाने माने तो धर्म-अधर्म द्रव्यो से सर्वथा भिन्न क्रियावती शक्तिरूप निज भगवान आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २६७—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे धर्म-अधर्म द्रव्यों से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं हैं, इस बात को भूलकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—जीव और धर्म-अधर्म द्रव्यो के स्वतन्त्र निमित्त-नैमित्तिक सवध को न जानकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है· ऐसा अनादिकाल का खोटा श्रद्धान-अगृहीत मिथ्या दर्शन है। ऐसा अनादिकाल का खोटा ज्ञान अगृहीत मिथ्या ज्ञान है। ··ऐसा अनादिकाल का खोटा आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २६८—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे धर्म-अधर्म द्रव्यो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। इस बात को भूलकर धर्म द्रव्य मझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—जीव और धर्म, अधर्म द्रव्यो के स्वतन्त्र निमित्त-नैमित्तिक सवध को न जानकर धर्म द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है—ऐसा दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ श्रद्धान गृहीत मिथ्या-दर्शन है। दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है। · दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २६९—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे धर्म-अधर्म द्रव्यो से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। इस बात को भूलकर धर्म-द्रव्य मुझे चलाता है और अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है। इस वाक्य पर सम्यग्दर्शनादि समझाइए ?

उत्तर—जीव द्रव्य और धर्म, अधर्म द्रव्य का स्वतन्त्र निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है। जीव द्रव्य और धर्म-अधर्म द्रव्यो का द्रव्य, क्षेत्रकाल, भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर धर्म, अधर्म द्रव्यो से सर्वथा भिन्न क्रियावती शक्ति रूप निज ज्ञायक भगवान मैं हूँ।" ऐसा श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। ऐसा ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।–ऐसा आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न २७०—धर्म-अधर्म द्रव्यो से, शरीर से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। इस बात को भूलकर शरीर मुझे चलाता है। इस वाक्य पर 'ताको न जान विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइए ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६२ से २६९ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

प्रश्न २७१—धर्म-अधर्म द्रव्यो से, शरीर से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर शरीर मुझे ठहराता है इस वाक्य पर 'ताको न जान विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइए।

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६२ से २६९ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

❦

विश्व में एक आकाश द्रव्य है। उससे मेरा सम्बन्ध नहीं है। इस विषय पर १४ प्रश्नोत्तरों का स्पष्टीकरण

प्रश्न २७२—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्तप्रदेशी एक आकाश द्रव्य है, इनतै न्यारी है मुझ जीव चाल; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलों द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताकों न जान	विपरीत मान करि	करे देह मे निज पिछान
विश्व मे अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य है, इससे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योंकि इसकी चाल मुझसे भिन्न है,	आकाश द्रव्य को निमित्त मात्र ना मानकर आकाश द्रव्य मुझ अवकाश दान देता है ऐसा मान करि,	आकाश द्रव्य से अपनी आत्मा की पहचान करता है, इसका फल निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करे आतम मे निज पिछान
विश्व में अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य है, इससे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योकि इसकी चाल मुझसे भिन्न है,	मैं निज चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशो मे रहता हूँ ऐसा मान करि,	चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक अपनी आत्मा मे ही अपनी पहचान करता है, इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २७३—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे एक आकाश द्रव्य है। आकाश द्रव्य से मेरा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' को समझाइये ?

उत्तर—वास्तव मे प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने क्षेत्र मे ही रहता है, उसमे लोकाकाश निमित्त मात्र है, वैसे ही मैं अपने असख्यात प्रदेशो मे रहता हूँ, उसमे लोकाकाश निमित्तमात्र है, इस बात को भूलकर (ताको न जान) आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है—यह मिथ्याबुद्धि विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)

प्रश्न २७४—आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है इस बात को भूलकर आकाश-द्रव्य मुझे जगह देता है। इस विपरीत मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस विपरीत मान्यता का फल है।

प्रश्न २७५—आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा संबंध नहीं है, इस बात को भूलकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। इस निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—अनन्त प्रदेशी एक अखड अरूपी आकाश द्रव्य से मुझ चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है, क्योकि मुझ निज आत्मा का और आकाश द्रव्य का द्रव्य क्षेत्र काल भाव पृथक्-पृथक् हैं। ऐसा जानकर चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा का आश्रय ले तो आकाश द्रव्य के विषय मे निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २७६—आकाश द्रव्य से सर्वथा भिन्न चैतन्य असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है।" ऐसा जाने माने तो आकाश द्रव्य से सर्वथा भिन्न निज चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी निज आत्मा का आश्रय लेना बने।

प्रश्न २७७—मुझ निज आत्मा अपने असख्यात प्रदेशों मे रहता है, इस बात को भूलकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये!

उत्तर—समस्त जीवादि द्रव्य और लोकाकाश के स्वतन्त्र निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध को ना जानकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। ·· ऐसा अनादिकाल का खोटा श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है। ··· ऐसा अनादिकाल का खोटा ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।— ऐसा अनादिकाल का खोटा आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २७८—मुझ निज आत्मा अपने असख्यात प्रदेशो मे रहता है इस बात को भूलकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। इस वाक्य पर गृहीत मिथ्यादर्शनादि समझाइये?

उत्तर—समस्त जीवादि द्रव्य और लोकाकाश के स्वतन्त्र निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध को न जानकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। ऐसा दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है ···· ऐसा दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है। ··· ऐसा दूसरे के कहने से मिथ्या दृढ आचरण गृहीन मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २७९—मुझ निज आत्मा अपने असख्यात प्रदेशो मे रहता है इस बात को भूलकर आकाश द्रव्य मुझे जगह देता है। इस वाक्य पर सम्यग्दर्शनादि को समझाइये?

उत्तर—समस्त जीवादि द्रव्य और लोकाकाश का स्वतन्त्र निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है—ऐसे सच्चे सम्बन्ध को जानकर चैतन्य अरूपी

असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। · चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। ·· चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक निज आत्मा मे आचरण सम्यकचारित्र है।

प्रश्न २८० - मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य हैं। आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर मै लोकाकाश में रहता हूं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरों को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २७२ से २७९ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

प्रश्न २८१—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त प्रदेशी आकाश द्रव्य है। आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा संबध नहीं है, इस बात को भूलकर मैं शरीर मे रहता हूं। इस वाक्य पर 'ताकों न जान विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २७२ से २७९ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

प्रश्न २८२—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनत प्रदेशी एक आकाश द्रव्य हैं। आकाश द्रव्य से मुझ निज आत्मा का सर्वथा सबध नहीं है इस बात को भूलकर मैं अमेरिका मे रहता हू। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइयें ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २७२ से २७९ तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइए या लिखिए।

विश्व में लोकप्रमाण असंख्यात् कालद्रव्य है इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, इस विषय पर १४ प्रश्नोत्तरो द्वारा स्पष्टीकरण

प्रश्न २८३—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे लोकप्रमाण असख्यात एक-एक प्रदेशी काल द्रव्य हैं—इनतै न्यारी है मुझ जीव चाल; इस वाक्य पर जीवतत्व संबधी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान
विश्व मे लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं, इनसे मेरा आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है, क्योंकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	काल द्रव्य को निमित्त मात्र ना मानकर काल द्रव्य मुझे परिणमाता है ऐसा मान करि,	लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्यो मे अपनी पहचान करता है, इसका फल निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आतम मे निज पिछान
विश्व मे लोक प्रमाण असख्यात कालद्रव्य है, इससे मेरी आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है क्योकि इनकी चाल मुझसे भिन्न है,	मैं आत्मा स्वय स्वत अपने परिणमन स्वभाव के कारण परिणमन करता हूँ ऐसा मान करि,	निज परिणमन स्वभावी आत्मा से ही अपनी पहचान करता है, इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २८४—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में लोकप्रमाण असंख्यात, कालद्रव्य हैं। काल द्रव्यो से मेरी आत्मा के साथ सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, इस बात को भूलकर काल द्रव्य मुझे परिणमाता है। इस वाक्य पर "ताको न जान—विपरीत मान" को समझाइये ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे एक-एक प्रदेशी लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। इन काल द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का किसी भी अपेक्षा कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर (ताको न जान) कालद्रव्य मुझे परिणामता है ऐसी खोटी बुद्धि विपरीत मान्यता है। (विपरीत मान)।

प्रश्न २८५—काल द्रव्य मुझे परिणमाता है-इस खोटी मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतिया मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न २८६—काल द्रव्य मुझे परिणमाता है। इस खोटी निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य स्वय स्वत परिणमनशील है, उसमे काल द्रव्य निमित्त है। वास्तव मे काल द्रव्य किसी को परिणमाता नही है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य के परिणमन का द्रव्य क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर परम पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक भगवान का आश्रय ले तो काल द्रव्य मुझे परिणमाता है ऐसी खोटी निगोद बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तव उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से काल द्रव्य मुझे परिणमाता है—ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न २८७—काल द्रव्यो से सर्वथा भिन्न परम पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक भगवान का आश्रय लेना कैसे बने ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुऐं भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, काई किसी के अधीन नही है, कोई किसी के परिणमिन कराने से परिणमित नही होती है। ऐसा जाने-माने तो कालद्रव्यो से सर्वथा भिन्न परम पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक । भगवान का तत्काल आश्रय लेना बने।

प्रश्न २८८—निज आत्मा स्वय स्वत· कायम रहकर परिणमता है, उसमे काल द्रव्य निमित्तमात्र है। इस बात को भूलकर काल द्रव्य मुझे तथा सबको परिणमाता है। इस वाक्य पर अगृहीत मिथ्या-दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—अपनी-अपनी अवस्थारूप से स्वय स्वत परिणमते हुए जीवादिक द्रव्यो के परिणमन मे काल द्रव्य निमित्त होता है। इस स्वतन्त्र निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध को ना जानकर काल द्रव्य मुझे तथा सबको परिणमाता है। ··· ·ऐसा अनादिकाल का खोटा श्रद्धान-अगृहीत मिथ्यादर्शन है। · ऐसा अनादिकाल का खोटा ज्ञान-अगृहीत मिथ्याज्ञान है।· · ऐसा अनादिकाल का खोटा आचरण-अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न २८९—निज आत्मा स्वय स्वत कायम रहकर परिणमता है। उसमे काल द्रव्य निमित्त मात्र है। इस बात को भूलकर काल द्रव्य मुझे तथा सबको परिणमाता हे। इस वक्य पर गृहीत मिथ्या-दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—अपनी-अपनी अवस्थारूप से स्वय स्वत परिणमते हुए जीवादिक द्रव्यो के परिणमन मे काल द्रव्य निमित्त होता है। इस स्वतत्र निमित्त—नैमित्तिक सम्बन्ध को ना जानकर काल द्रव्य मुझे तथा सव द्रव्यो को परिणमाता है। ·· दूसरे के कहने से खोटा दृढ श्रदान-गृहीत मिथ्यादर्शन ।· दूसरे के कहने से खोटा दृढ ज्ञान-गृहीत मिथ्याज्ञान है।· दूसरे के कहने से खोटा दृढ आचरण-गृहीत मिथ्या चारित्र है।

प्रश्न २९०—निज आत्मा स्वयं स्वत· कायम रहकर परिणमता है। उसमे काल द्रव्य निमित्त मात्र है। इस बात को भूलकर काल द्रव्य मुझे तथा सब द्रव्यो को परिणमाता है। इस वक्य पर सम्यग्दर्शनादि समझाइये ?

उत्तर—अपनी-अपनी अवस्थारूप से स्वय स्वत परिणमते हुए जीवादिक द्रव्यो के परिणमन मे काल द्रव्य निमित्त है। ऐसा स्वतत्र निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध को जानकर काल द्रव्यो से सर्वथा भिन्न पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक आत्मा का श्रद्धान—सम्यग्दर्शन है। ···· काल द्रव्यो से सर्वथा भिन्न पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक आत्मा का ज्ञान—सम्यग्ज्ञान है। ·····काल द्रव्यो से भिन्न पारिणामिक भाव रूप निज ज्ञायक आत्मा मे आचरण—सम्यक्-चारित्र है।

प्रश्न २९१—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं। उनसे मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। इस बात को भूलकर मै अपने शिष्यो को परिणमाता हूं। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २८३ से २९० तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

प्रश्न २९२—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं। इनसे मुझ निज आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है। इस बात को भूलकर मै सबको पागल बना देता हू। इस वाक्य पर 'ताको न जान-विपरीत मान' आदि १४ प्रश्नोत्तरो को समझाइये।

उत्तर—प्रश्नोत्तर २८३ से २९० तक के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर समझाइये या लिखिये।

जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल का विशेष स्पष्टीकरण

प्रश्न २९३—शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दु खी; इस वाक्य पर जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—मैं सुखी-दुखी, मैं रक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव, मेरे सुत तिय मै सबल दीन, वेरूप सुभग मूरख प्रवीण ।। ताको न जान, विपरीत मान करि, करै देह मे निज पिछान ।।

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै आतम मे निज पिछान	इसका फल
शरीर की कोई अवस्था अनुकूल-प्रतिकूल नही है, एकमात्र ज्ञान का ज्ञेय है,	शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दु खी ऐसा मान करि,	शरीर की अनुकूलता मे सुखीपने मे और शरीर की प्रतिकूलता मे दु खीपने से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आतम मे निज-पिछान**	**इसका फल**
शरीर की कोई अवस्था अनुकूल-प्रतिकूल नही है, एकमात्र ज्ञान का ज्ञेय है,	शरीर की अनुकूलता-प्रतिकूलता को ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	सुखस्वरूप निज आत्मा मे प्रज्ञारूपी छैनी द्वारा अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २९४—निर्धन होने से मै दु:खी और राजा होने से मैं सुखी; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
निर्धन-राजापने मे दुखी-सुखी की कल्पना झूठी है, क्योकि निर्धन राजापना ज्ञान का ज्ञेय है,	निर्धन होने से मैं दु खी और राजा होने से मैं सुखी—ऐसा मान करि,	निर्धन होने मे दु खीपने से और राजा हाने मे सुखीपने से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आत्म में निज-पिछान**	**इसका फल**
निर्धन-राजापने मे दु खी-सुखी की कल्पना झूठी है, क्योकि निर्धन राजापना ज्ञान का ज्ञेय है,	निर्धन-राजापने को ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	सुखस्वरूप ज्ञान स्वरूप निज आत्मा मे प्रज्ञारूपी छैनी द्वारा अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २९५—धन-घर गाय-भैंस आदि के होन से मै सुखी और धन-घर' गाय, भैंस आदि के ना होने से मै दु खी, इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
धन-घर, गाय-भैंस आदि मे सुखी-दु खी की कल्पना झूठी है, क्योकि धन-घर, गाय-भ स आदि ज्ञान का ज्ञेय है,	धन-घर, गाय-भैंस आदि होने से मैं सुखी और ना होने से मैं दु खा—ऐसा मान करि,	धन-घर, गाय-भैंस आदि होने मे सुखी पने से और ना होने मे दु खीपने से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस वात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आत्म मे निज पिछान**	**इसका फल**
धन-घर, गाय-भैंस आदि में सुखी-दु खी की कल्पना झूठी है, क्योकि धन-घर, गाय-भैंस आदि ज्ञान का ज्ञेय है,	धन-घर, गाय-भैंस आदि को ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	सुख स्वरूप ज्ञान स्वरूप निज आत्मा मे प्रज्ञारूपी छैनी द्वारा अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २६६—देश-गाँव पर मेरा प्रभाव होने से मै सुखी और देश-गाँव पर मेरा प्रभाव ना होने से मै दुःखी; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ वोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान
देश-गाँव पर प्रभाव का होना या ना होना यह पूर्व पुण्य-पाप के अनु-सार है इनमे जीव की वतमान चतुराई जरा भी कायकारी नही है। इनमे सुखी-दुखी की कल्पना व्यर्थ है, क्योकि यह सव ज्ञान का ज्ञेय है,	देश-गाँव पर अपना प्रभाव होने से मैं सुखी और ना होने से मैं दुखी ऐसा मान करि,	देश-गाँव पर अपना प्रभाव होने मे सुखीपने से और अपना प्रभाव ना होने मे दुखीपने से मे अपनी पहचान करता है, इसका फल निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान
देश-गाँव पर प्रभाव का होना या ना होना यह पूर्व पुण्य-पाप के अनु-सार है। इनमे जीव की वर्तमान चतुराई जरा भी कायकारी नही है। इनमे सुखी-दुखी की कल्पना व्यर्थ है, क्योकि यह सव ज्ञान का ज्ञेय है।	देश-गाँव पर प्रभाव का होना या ना होना यह सव ज्ञान का ज्ञेय है ऐसा मान करि,	चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी अपना देश और अनन्त गुण वह अपना गाँव से अपनी पहचान करता है, इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २९७—पुत्र-पुत्रियाँ, धर्मपत्नी ना होने से मै दुःखी और पुत्र-पुत्रियाँ, धर्मपत्नी होने से मै सुखी; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
पुत्र-पुत्रियाँ, धर्म-पत्नी असमान जातीय द्रव्य पर्यायें हैं, इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, ये सब मात्र मेरे ज्ञान का ज्ञेय है,	पुत्र-पुत्रियाँ, धर्म-पत्नी ना होने से मैं दुखी और होने से मैं सुखी ऐसा मान करि,	पुत्र-पुत्रियाँ, धर्म-पत्नी आदि होने मे सुखीपने से और ना होने मे दुखीपने से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आतम मे निज पिछान	इसका फल
पुत्र-पुत्रियाँ धर्म-पत्नी असमान जातीय द्रव्य पर्यायें हैं, इनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है, ये सब मात्र ज्ञान का ज्ञेय है,	पुत्र-पुत्रियाँ, धर्म-पत्नी आदि समस्त असमान जातीय द्रव्य पर्यायो को ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	ज्ञान-दर्शनादि अनन्त गुणरूप पुत्र पुत्रिया व शुद्ध परिणति रूप धर्म-पत्नी से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २९८—बलवान, सुन्दर, चतुर होने से मैं सुखी और निर्बल, कुरूप, मूर्ख होने से मै दुखी; इस वाक्य पर जीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलो द्वारा स्पष्टीकरण ?

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
वलवान, सुन्दर चतुर आदि आहार वर्गणा के कार्यो मे सुखी-दुखी की कल्पना झूठी है क्योकि ये सब अवस्थाये ज्ञान का ज्ञेय हैं,	वलवान, सुन्दर चतुर होने से अपने को सुखी और निर्वल, कुरूप, मूर्ख होने से अपने को दुःखी मान करि,	वलवान, सुन्दर चतुरपने आदि मे सुखीपने से और निर्वल, कुरूप, मूर्ख होने मे दुःखीपने से अपनी पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आत्म मे निज पिछान**	**इसका फल**
वलवान, सुन्दर, चतुर आदि आहार वर्गणा के कार्यो मे सुखी-दुःखी की कल्पना झूठी है क्योकि ये सब अवस्थाये ज्ञान का ज्ञेय है,	वलवान, सुन्दर, चतुर और निर्वल कुरूप, मूर्ख आदि पुद्गल की अवस्थाओ को ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	वीर्य, सुख, ज्ञान आदि स्वभाव मे वलवानपने से चतुरपने की ओर सम्यग्दर्शनादि से सुन्दरपने की पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न २६६—मिथ्यादृष्टि शरीर तथा पर वस्तुओ के सम्बन्ध में कैसा-कैसा विचार करता है ?

उत्तर—'मैं सुखी-दु खी, मैं रक-राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव। मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीण ॥' अर्थ-मिथ्या-दृष्टि जीव मिथ्यादर्शनादि के कारण से ऐसा मानता है कि मैं सुखी, मैं दु खी, मैं निर्धन, मैं राजा, मेरा रुपया-पैसा, मेरा घर, मेरी गाय-भैस, मेरा बडप्पन, मैं निर्बल, मैं कुरूप, मैं सुन्दर, मैं मूरख, मैं चतुर, इस प्रकार मिथ्यादृष्टि जीव शरीर तथा पर वस्तुओ मे ऐसा विचार करता है, ऐसा ही ज्ञान करता है और ऐसा ही आचरण करता है।

प्रश्न ३००—अज्ञानी 'मै सुखी' किसे मानता है ?

उत्तर—शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मै सुखी ऐसा मानता है।

प्रश्न ३०० (क) शरीर की अनुकूल अवस्था मे "मैं सुखा" ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—'मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमतिवादि' अर्थात वीतराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मैं सुखी' ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरा-पान बताया है।

प्रश्न ३०० (ख) शरीर की अनुकूलता मे 'मै सुखो' ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान छहढाला की प्रथम ढाल मे क्यों बताया है ?

उत्तर—(१) स्वय वीतराग विज्ञानतारूप एक ज्ञायक शुद्ध आत्मा, (२) शरीर की अनुकूलता आहार वर्गणा का कार्य हैं। इन सब मे एकत्वबुद्धि होने से शरीर की अनुकूलता मे 'मैं सुखी' ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान कहा है।

प्रश्न ३०१—शरीर की अनुकूलता मे 'मै सुखी' ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है।

उत्तर—ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल चारो गतियो मे घूमकर निगोद बताया है।

प्रश्न ३०२—शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मै सुखी' ऐसी मान्यता का फल चारो गतियो मे घूमकर निगोद क्यों बताया है ?

उत्तर—सुख आत्मा के सुख गुण मे से आता है जड शरीरादि मे सुख का कोई गुण या पर्याय नही है और शरीर की अनुकूल अवस्था ज्ञान का ज्ञेय है। परन्तु अज्ञानी शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मैं सुखी' ऐसी खोटी मान्यता के कारण छहढाला की प्रथम ढाल मे चारो गतियो मे घूमकर निगोद बताया है।

प्रश्न ३०३—शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मै सुखी' ऐसी खोटी मान्यता को छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(१) शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मैं सुखी' की मान्यता को जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल बताया है। (२) अनादिकाल से एक-एक समय करके चली आ रही होने से ऐसी श्रद्धा को अगृहीत मिथ्यादर्शन, ऐसे ज्ञान को अगृहीत मिथ्याज्ञान, ऐसे आचरण को अगृहीत मिथ्याचारित्र बताया है। और (३) वर्तमान मे विशेष रूप से मनुष्यभव होने पर कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र का उपदेश मानने से शरीर की अनुकलता मे 'मैं सुखी' ऐसी अनादिकाल की श्रद्धा विशेष दृढ होने से ऐसी श्रद्धा को गृहीत मिथ्यादर्शन, ऐसे ज्ञान को गृहीत मिथ्याज्ञान, ऐसे आचरण को गृहीत मिथ्याचारित्र कहा है। ऐसा छहढाला की दूसरी ढाल मे बताया है।

प्रश्न ३०४—शरीर की अनुकूलता मे 'मैं सुखीरूप' जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर पूर्ण सुखीपना कैसे प्रगट होवे, इसका उपाय छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—'चेतन को है उपयोग रूप, विनमूरत चिन्मूरत अनूप। पुद्गल नभ धर्म-अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल ॥' (१) मै ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हू। (२) मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है। (३) आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही

है। (४) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है। (६) मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव द्रव्य है। (७) अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं। (८) असख्यात प्रदेशी एक-एक धर्म-अधर्म द्रव्य है। (९) अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य है। (१०) लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। इन सब द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है, क्योकि इन सब द्रव्यो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक है। ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय ले, तो शरीर की अनुकूलता मे 'मैं सुखीरूप' जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर पूर्ण अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति होवे। यह उपाय छहढाला की दूसरी ढाल मे बताया है।

प्रश्न ३०५—शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मै सुखी' ऐसी खोटी मान्यता को आपने जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि बताया, परन्तु शरीर की अनुकूल अवस्था मे मैं 'सुखी' ऐसा तो ज्ञानी भी कहते—सुने जाते हैं। तो क्या ज्ञानियों को भी जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल रूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि होते हैं ?

उत्तर—ज्ञानियो को बिल्कुल नही होते है। (१) क्योकि जिन, जिनवर और जिनवरवृषभो ने शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मैं सुखी' ऐसी खोटी मान्यता को जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि कहा है, परन्तु ऐसे कथन को नही कहा है। (२) ज्ञानी जो बनते हैं वे जीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव करके ही बनते हैं। (३) ज्ञानियो को हेय-ज्ञेय-उपादेय का ज्ञान वर्तता है। (४) शरीर की अनुकूल अवस्था मे 'मैं सुखी' ज्ञानी के ऐसे कथन को आगम मे अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय कहा है।

प्रश्न ३०६—अज्ञानी 'मै दु:खी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०७—अज्ञानी निर्धन होने से 'मै दु:खी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न ३०८—अज्ञानी 'राजा होने से मै सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न ३०९—अज्ञानी 'मेरा धन होने से मै सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न ३१०—अज्ञानी 'मेरा घर होने से मैं सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न ३११—अज्ञानी 'मेरा बड़प्पन होने से मैं सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१२—अज्ञानी 'मेरी स्त्री होने से मै सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१३—अज्ञानी 'बलवान होने से 'मैं सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—२९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१४—अज्ञानी 'निर्बल होने से 'मैं दु:खी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो ।

प्रश्न ३१५—अज्ञानी 'कुरूप होने से मैं दुःखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१६—अज्ञानी 'सुन्दर होने से मै सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१७ अज्ञानी 'उपदेशदाता होने से मैं सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१८—अज्ञानी 'ईर्या समिति पालने से मैं सुखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१९—अज्ञानी 'कायगुप्ति ना पालने से मैं दुःखी' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न २९३ से ३०५ तक के अनुसार उत्तर दो।

बन्ध—मोक्ष का कारण

परद्रव्यो का चिन्तन वह बन्धन का कारण है और केवल विशुद्ध स्व-द्रव्य का चिन्तन ही मोक्ष का कारण है।

[तत्त्वज्ञानतरंगिणी १५-१६

अजीवतत्त्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ३२०—अजीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ वोलो द्वारा स्पष्टीकरण।

उत्तर—तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।

उत्तर—

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
शरीर का सयोग-वियोग पुद्गलो के कार्य से आत्मा का सर्वथा सम्वन्ध नही है, आत्मा जन्म-मरण रहित अजर-अमर नित्य स्वभावी है,	शरीर का सयोग होने से मैं उत्पन्न हुआ और शरीर का वियोग होने से मैं मर जाऊँगा—ऐसा मान करि,	शरीर के सयोग से उत्पन्नपने की और शरीर के वियोग से मरणपने की पहचान करता है,	निगोद है।
इस वात को जान	अविपरीत मानकरि	करै आत्म में निज-पिछान	इसका फल
शरीर का सयोग-वियोग पुद्गलो के कार्य से आत्मा का सर्वथा सम्वन्ध नही है। आत्मा जन्म-मरण रहित अजर-अमर नित्य स्वभावी है,	शरीर का सयोग वियोग ज्ञान का ज्ञेय मान करि,	अशरीरी, जन्म-मरण रहित अस्पर्श स्वभावी निज ज्ञायक भगवान से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न ३२१—अजीव तत्व आपने किसे कहा है?

उत्तर—जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नही है उसे हमने अजीव तत्व कहा है।

प्रश्न ३२२—जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नहीं है, उसे आपने अजीव-तत्व कहा है, इस अपेक्षा अजीवतत्व मे कौन-कौन आया?

उत्तर—मुझ ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व के अलावा अनन्त जीव द्रव्य, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक द्रव्य और लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य, यह सब अजीवतत्व मे आये।

प्रश्न ३२३—मिथ्यादृष्टि शरीर तथा पर वस्तुओ के सम्बन्ध मे अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल मे क्या-क्या, कैसा-कैसा विचार करता है?

उत्तर—'तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।' भावार्थ—(१) मिथ्यादृष्टि जीव ऐसा मानता है कि शरीर की उत्पत्ति (सयोग) होने से मैं उत्पन्न हुआ और शरीर का नाश (वियोग) होने से मैं मर जाऊँगा। (आत्मा का मरण मानता है।) (२) धन, शरीरादि जड पदार्थों मे परिवर्तन होने से अपने मे इष्ट-अनिष्ट परिवर्तन मानता है। (३) शरीर मे क्षुधा-तृषा रूप अवस्था होने से मुझे क्षुधा-तृषादि होते हैं, शरीर कटने से मैं कट गया—इत्यादि जो अजीव की अवस्थाए हैं उन्हे अपनी मानता है। यह सब अजीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल है।

प्रश्न ३२४—अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल को स्पष्ट समझाइये?

उत्तर—(१) मैं उत्पन्न हुआ, (२) मैं मर गया, (३) मैं बालक हूँ, (४) मैं जवान हूँ, (५) मैं वृद्ध हूँ, (६) मैं हल्का हूँ, (७) मैं भारी हूँ, (८) मुझे बुखार हो गया है, (९) मुझे खाँसी हो गई है। (१०) मुझे लकवा हो गया है, (११) मेरा धन है, (१२) मेरा

मकान है, (१३) मेरा सब कुछ नष्ट हो गया है, (१४) मुझे भूख लगी है, (१५) मुझे तृषा लगी है, (१६) मुझे सर्दी लगती है, (१७) मुझे गर्मी लगती है, (१८) मैं गोरा हूँ, (१९) मुझे साँप ने काट खाया है, (२०) मेरी ऊगली कट गई है, (२१) मेरी नाक कट गई है, (२२) मुझे मच्छर काटते हैं, (२३) मै जोर शोर से बोलता हूँ, (२४) मैं चार हाथ जमीन देखकर चलता हूँ, (२५) मैं शुद्ध आहार ग्रहण करता हूँ, (२६) मैं मन को वश मे रखता हूँ, (२७) मैं पाँचो इन्द्रियो को वश मे रखता हूँ, (२८) मैं रुपयो का लोभ नही करता हूँ, (२९) मैं अष्ट द्रव्य से सिद्ध चक्र का पाठ करता हूँ, (३०) मैं कसरत करता हूँ, (३१) मैं प्रतिदिन घूमने जाता हूँ, (३२) मेरा बक्सा है, (३३) मुझे धर्म द्रव्य चलाता है, (३४) मुझे अधर्म द्रव्य ठहराता है, (३५) मुझे आकाश जगह देता है, (३६) मुझे काल द्रव्य परिणमन कराता है, (३७) मैं हीरो का व्यापारी हूँ, (३८) मैं कपडे धोता हूँ, इस प्रकार मिथ्यादृष्टि जीव शरीर और पर वस्तुओ मे ऐसा विचार करता है, ऐसा ही ज्ञान करता है और ऐसा ही आचरण करता है।

प्रश्न ३२५—अज्ञानी 'मैं उत्पन्न हुआ' किसे मानता है ?

उत्तर—जीव का शरीर के साथ सयोग होने से 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसा मानता है।

प्रश्न ३२५—(क) जीव का शरीर के साथ सयोग होने से 'मै उत्पन्न हुआ' ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—'मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमति वादि' अर्थात् वीतराग विज्ञानतारूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर शरीर के सयोग से 'मै उत्पन्न हुआ' ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान बताया है।

प्रश्न ३२५—(ख) जीव का शरीर के साथ सयोग होने से 'मैं

उत्पन्न हुआ' ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान छहढाला की प्रथम ढाल मे क्यो कहा है ?

उत्तर—(१) स्वय वीतराग विज्ञानतारूप एक ज्ञायक शुद्ध आत्मा; (२) शरीर अनन्त पुदगल परमाणुओ का स्कध, इन सब मे एकत्व बुद्धि हाने से 'मैं उत्पन्न हुआ ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान कहा है।

प्रश्न ३२६—जीव का शरीर के साथ संयोग होने से 'मै उत्पन्न हुआ' ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल छहढाला की प्रथम ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल चारो गतियो मे घूमकर निगोद बताया है।

प्रश्न ३२७—जीव का शरीर के साथ सयोग होने से 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी मोहरूपी महा मदिरापन का फल छहढाला की प्रथम ढाल मे चारो गतियो मे घूमकर निगोद क्यो बताया है ?

उत्तर—(१) स्वय वीतराग विज्ञानतारूप एक ज्ञायक शुद्ध आत्मा, (२) शरीर का सयोग व्यवहारनय से एक मात्र ज्ञान का ज्ञेय है। परन्तु अज्ञानी ऐसा न मानकर इन सब मे (आत्मा और शरीर मे) 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी खोटी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल मे चारो गतियो मे घूमकर निगोद बताया है।

प्रश्न ३२८—शरीर के सयोग मे 'मै उत्पन्न हुआ' इस खोटी मान्यता को छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या-क्या बताया है?

उत्तर—(१) शरीर के सयोग होने मे 'मैं उत्पन्न हुआ' इस मान्यता को अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूल बताया है। (२) अनादिकाल से एक-एक समय करके चली आ रही होने से ऐसी श्रद्धा को अगृहीत मिथ्यादर्शन, ऐसे ज्ञान को अगृहीत मिथ्याज्ञान, ऐसे आचरण को अगृहीत मिथ्याचारित्र बताया है और (३) वर्तमान मे विशेषरूप से मनुष्य भव होने पर कुदेव-कुगुरु कुशास्त्र का उपदेश

मानने से शरीर के सयोग मे 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी अनादिकाल की श्रद्धा विशेष दृढ होने से ऐसी श्रद्धा को गृहित मिथ्यादर्शन, ऐसे ज्ञान को गृहीत मिथ्याज्ञान; ऐसे आचरण को गृहीत मिथ्याचारित्र कहा है। ऐसा छहढाला की दूसरी ढाल मे बताया है।

प्रश्न ३२६—शरीर के संयोग मे 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी अजीव-तत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत—गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर पूर्ण सुखीपना कैसे प्रगट होवे? इसका उपाय छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या बताया है?

उत्तर—'चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप, पुद्गल नभ धर्म-अधर्म काल, इनतें न्यारी है जीव चाल।' (१) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ। (२) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा हैं। (३) आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरोरूप मेरी मूर्ति नही है। (४) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी निज आत्मा ही अनुपम है। (६) मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव द्रव्य हैं। (७) अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य है। (८) असख्यात प्रदेशी एक-एक धर्म-अधर्म द्रव्य है। (९) अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य है। (१०) लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य है। इन सब द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है क्योकि इन सब द्रव्यो का और मेरी निज आत्मा का द्रव्य क्षेत्र काल भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर ज्ञान दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय ले तो शरीर के सयोग मे 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी अजीवतत्व सम्बन्धी जीव भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर पूर्ण अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति होवे यह उपाय छहढाला की दूसरी ढाल मे बताया है।

प्रश्न ३३०—शरीरो के संयोग मे 'मै उत्पन्न हुआ' ऐसी खोटी मान्यता को अपने अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत गृहीत मिथ्यादर्शनादि बताया। परन्तु शरीरो के सयोग मे मैं उत्पन्न हुआ' ऐसा तो ज्ञानी भी कहते-सुने जाते हैं। तो क्या ज्ञानियो को भी अजीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्या-दर्शनादि होते हैं ?

उत्तर—ज्ञानियो को बिल्कुल नही होते है। (१) क्योकि जिन जिनवर और जिनवरवृषभो ने शरीर के सयोग से 'मैं उत्पन्न हुआ' ऐसी मान्यता को अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शनादि कहा है परन्तु ऐसे कथन को नही कहा है (२) ज्ञानी जो बनते हैं वे अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूलरूप अगृहीत गृहीत मिथ्यात्वादि का अभाव करके ही वनते हैं। (३) ज्ञानियो को हेय-ज्ञेय-उपादेय का ज्ञान वर्तता है। (४) शरीर के सयोग से मैं उत्पन्न हुआ' ज्ञानियो के ऐसे कथन को आगम मे अनुपचरित असद्-भूत व्यवहारनय कहा है।

प्रश्न ३३१—अज्ञानी 'मैं मर गया' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३२—अज्ञानी 'मै बालक हूँ' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरों स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३३—अज्ञानी 'मैं हल्का हूं' किसे मानता है प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३४—अज्ञानी 'मुझे बुखार आ गया' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३५—अज्ञानी 'मुझे लकवा हो गया' किसे मानता है आदि प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३६—अज्ञानी 'मेरा धन' किसे मानता है प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो।

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३७—अज्ञानी 'मुझे भूख लगी है, किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३८—अज्ञानी 'मुझे सर्दी लगती है' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३९—अज्ञानी 'मैं काला हूं' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४०—अज्ञानी 'मुझे सांप ने काट खाया है, किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४१—अज्ञानी 'मैं कसरत करता हूं' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४२—अज्ञानी 'मैं कपड़े धोता हूं' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४३—अज्ञानी 'मै चला' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४४—अज्ञानी 'मैं ठहरा' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरों को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४५—अज्ञानी 'मैं बोला' किसे मानता है, प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४६—अज्ञानी 'मै हंसा' किसे मानता है—आदि प्रश्नोत्तरो को स्पष्ट करो ?

उत्तर—प्रश्न ३२० से ३३० तक के अनुसार उत्तर दो।

अमृत पान करो !

श्री आचार्यदेव कहते हैं कि हे भव्य जीवो ! तुम इस सम्यग्दर्शनरूपी अमृत को पियो ! यह सम्यग्दर्शन अनुपम सुख का भंडार है—सर्व कल्याण का बीज है और ससार समुद्र से पार उतरने के लिए जहाज है; एक मात्र भव्य जीव ही उसे प्राप्त कर सकते हैं। पापरूपी वृक्ष को काटने के लिए यह कुल्हाड़ी के समान है। पवित्र तीर्थों मे यही एक पवित्र तीर्थ है और मिथ्यात्व का नाशक है।

[ज्ञानार्णव अ० ६ श्लोक ५९]

आस्रव तत्त्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ३४७—आस्रव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल को आठ बोलों द्वारा समझाइए ?

उत्तर—रागादि प्रगट ये दु ख देन, तिनही की सेवत गिनत चैन।

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै राग मे निज-पिछान	इसका फल
शुभाशुभ विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है आस्रव तत्त्व अशुचि, अपवित्र, जड स्वभावी, आकुलता को उत्पन्न करने वाले होने से दु ख के कारण हैं और भगवान आत्मा सदा ही अति निर्मल, शुचि, पवित्र, चैतन्य स्वभावी, निराकुल स्वभाव के कारण सुख स्वरूप है।	मिथ्यात्व, राग-द्वेषादि शुभाशुभ भाव प्रत्यक्ष दु.ख के देने वाले होने पर भी उन्हे हितकारी सुखदायक मान करि,	हिंसादि अशुभ-पाप भावो मे हेयपने से और अहिंसादि शुभ पुण्य पापो मे उपादेयपने से अपनी पहचान करता है,	ससार है।

इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान	इसका फल
शुभाशुभ विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है। आस्रव तत्त्व अशुचि, अपवित्र, जड स्वभावी, आकुलता को उत्पन्न करने वाले होने से दु ख के कारण हैं और भगवान आत्मा सदा ही अति निर्मल शुचि, पवित्र, चैतन्य स्वभावी निराकुल स्वभाव के कारण सुख स्वरूप है,	राग-द्वेषादि शुभाशुभ भावो से रहित निज ज्ञायक भगवान आत्मा पवित्र निराकुल स्वभावी सुख-स्वरूप है ऐसा मान करि,	निज परम पारिणामिक भाव के आलम्बन के बल से आस्रव भाव को दूर करने और वीतराग रूप शुद्ध दशा के प्रगटपने मे अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है ।

प्रश्न ३४८—आस्रव तत्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भावो के उत्पन्न होने को आस्रव-तत्त्व कहते हैं।

प्रश्न ३४९—आस्रव तत्त्व को प्रयोजनभूत क्यो कहा है ?

उत्तर—छोडने योग्य होने की अपेक्षा से आस्रव तत्त्व को प्रयोजन भूत कहा है।

प्रश्न ३५०—आस्रव तत्त्व का छूटना कैसे प्रारम्भ हो ?

उत्तर—अजीव तत्त्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व हैं और

आस्रव तत्त्व हेय है—ऐसा जानकर जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन है वह जीव तत्त्व मैं हूँ—ऐसा सच्चा ज्ञान होते ही आस्रव तत्त्व छूटना प्रारम्भ हो जाता है ।

प्रश्न ३५१ आस्रव तत्त्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—'राग-द्वेष-मोहादि प्रगटरूप से दुःख के देने वाले है—त्याज्य हैं—हेय हैं यह आस्रव तत्त्व का सच्चा श्रद्धान है ।

प्रश्न ३५२—आस्रव तत्त्व का उल्टा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—'रागादि प्रगट ये दुःख दैन, तिनही को सेवत गिनत चैन' अर्थ—राग-द्वेष-मोहादि जो प्रगट रूप से दुःख के देने वाले होने से त्याज्य हेय हैं । उनके सेवन मे सुख मानना—यह आस्रव तत्त्व का उल्टा श्रद्धान है ।

प्रश्न ३५३—आस्रव तत्त्व का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही आस्रव तत्त्व का सच्चा कर्ता है ।

प्रश्न ३५४—आस्रव तत्त्व का कर्ता द्रव्य कर्म को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—आस्रव तत्त्व और अजीव तत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

प्रश्न ३५५—आस्रव तत्व का कर्ता जीव को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—आस्रव तत्त्व और जीव तत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

प्रश्न ३५६—आस्रव तत्त्व सम्बन्धी भूल को किस प्रकार जाने-माने तो उसका अभाव हो ?

उत्तर—आस्रव तत्त्व को दुःखरूप हेय जानकर उसका सच्चा कर्ता उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही है । अजीव तत्त्व और जीव तत्त्व उसका कर्ता नही है—ऐसा मानते ही

दृष्टि अजीव तत्व से हटकर अपने सुख स्वरूपी ज्ञायक जीव तत्त्व पर आवे तो आस्रव तत्त्व सम्बन्धी भूल का अभाव हो।

प्रश्न ३५७—आस्रव तत्त्व के विषय मे तीसरी ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—'ये ही आतम को दु ख कारण तातैं इनको तजिये' अर्थ — यह मिथ्यात्वादि ही आत्मा को दु ख का कारण है पर पदार्थ दु ख का कारण नही है। इसलिये अपने दोषरूप विभावो का अभाव करना चाहिए।

प्रश्न ३५८—आस्रव भावना के विषय में छहढाला मे क्या बताया है ?

उत्तर—जो योगन की चपलाई, तातैं है आस्रव भाई, आस्रव दु खकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हैं निरवेरे॥ भावार्थ —(१) वास्तव मे शुभाशुभ भाव आत्मा को अहितकर है तथा वह आत्मा की क्षणिक अशुद्ध अवस्था है। (२) द्रव्य पुण्य-पाप तो परवस्तु है वे कही आत्मा का हित-अहित नही कर सकते—ऐसा निर्णय प्रत्येक ज्ञानी जीव को होता है। (३) इस प्रकार विचार करके सम्यग्दृष्टि जीव स्व द्रव्य के आश्रय के वल से जितने अश मे आस्रवभाव को दूर करता है उतने अश मे वीतरागता की वृद्धि होती है—उसे आस्रव भावना बताया है।

प्रश्न ३५९—समयसार गाथा ७२ मे आस्रव भावो को किन-किन नामो से सम्बोधन किया है ?

उत्तर—आस्रव भाव,को मल, मैल, अशुचि, अपवित्र, जडस्वभावी आकुलता को उत्पन्न करने वाला होने से दु ख का कारण है ऐसा बताया है।

प्रश्न ३६०—आस्रव भावो को अशुचि आदि तथा हेय-त्याज्य आदि नामो से क्यो सम्बोधन किया है ?

उत्तर—पर मे व्यापार न होने के कारण अपनी अर्थ क्रिया करने वाला नही होने से आस्रव भावो को अशुचि आदि नामो से सम्बोधन किया है क्योकि अध्यवसान मात्र अपने लिये ही हानि का कारण होता है पर का तो कुछ नही कर सकता है—ऐसा समयसार गाथा २६६ मे वताया है।

सम्यक्त्व की आराधना

ज्ञान-चारित्र और तप इन तीनो गुणों को उज्ज्वल करने वाली ऐसी यह सम्यक् श्रद्धा प्रधान आराधना है। शेष तीन आराधनाएँ एक सम्यक्त्व की विद्यमानता मे ही आराधक भाव से वर्तती हैं। इस प्रकार सम्यक्त्व की अकथ्य, अपूर्व महिमा जानकर उस पवित्र कल्याण मूर्तिरूप सम्यग्दर्शन को इस अनन्तानंत दुःखरूप—ऐसे अनादि संसार की जन्यंतिक निवृत्ति के अर्थ हे भव्यो! तुम भक्तिपूर्वक अंगीकार करो! प्रति समय आराधो।"

[आत्मानुशासन]

बंध तत्त्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ३६१—बधतत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल पर आठ बोलों द्वारा समझाइये ?

उत्तर—शुभ अशुभ बन्ध के फल मंझार, रति-अरति करै निजपद विसार ॥

ताकों न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान
शुभाशुभ भावो मे अटकना व ध तत्व है। बधतत्व विरुद्ध स्वभावी अध्रुव, अनित्य, अशरण, वर्तमान मे दुखरूप और भविष्य मे भी दुख फलरूप है। भगवान आत्मा अविरुद्ध स्वभावी ध्रुव नित्य, शरणरूप, वतमान मे सुखरूप और भविष्य मे भी सुखस्वरूप है,	अघाति कर्म के फल अनुसार पदार्थों की सयोग-वियोगरूप अवस्थाएँ होती हैं। उन्हें अनुकूल-प्रतिकूल, भला-बुरा है ऐसा मान करि	रोग, निन्दा, निर्धनता पुत्र वियोगादि मे अनिष्टपना मानकर अरति और धन स्त्री, पुत्रादि के सयोग मे इष्टपना मानकर रति करता है, इस प्रकार रति-अरतिपने से अपनी पहचान करता है, इसका फल निगोद है,

इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म में निज पिछान
शुभाशुभ भावो मे अटकना बधतत्व है। बधतत्व विरुद्ध स्वभावी अध्रुव, अनित्य, अशरण, वर्तमान मे दुखरूप भविष्य मे भी दुख फलरूप है। भगवान आत्मा अविरुद्ध स्वभावी ध्रुव, नित्य शरणरूप, वर्तमान मे सुखरूप और भविष्य मे भी सुख स्वरूप है,	पुण्य-पाप दोनो बन्धनकर्ता और अहितकर ही है निज भगवान आत्मा अबन्ध स्वभावी है ऐसा मान करि,	अबन्ध स्वभावी निज आत्मा की सम्यग्दर्शनादि से पहचान करता है, इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न ३६२—बधतत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भावो मे अटकने को बन्धतत्व कहते हैं।

प्रश्न ३६३—बंधतत्व को प्रयोजनभूत क्यों कहा है ?

उत्तर—छोडने योग्य होने की अपेक्षा से बधतत्त्व को प्रयोजनभूत कहा है।

प्रश्न ३६४—बंधतत्व का छूटना कैसे प्रारम्भ हो ?

उत्तर—अजीव तत्त्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है और आस्रव तत्त्व-बधतत्त्व हेय है—ऐसा जानकर जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन है वह जीव तत्व मैं हूँ—ऐसा सच्चा ज्ञान होते ही बधतत्त्व का छूटना प्रारम्भ हो जाता है।

प्रश्न ३६५—बंधतत्त्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—सयोग-वियोग अनुकूल-प्रतिकूल नही हैं। पुण्य-पाप दोनों अहितकर ही है—यह बधतत्त्व का सच्चा श्रद्धान है।

प्रश्न ३६६—बधतत्त्व का उल्टा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—'शुभ अशुभ बध के फल मभार, रति-अरति करै निजपद बिसार।' अर्थ —आत्मा के स्वरूप को भूलकर कर्मबध के कारण अच्छे फल मे प्रेम करना और कर्मबन्ध के बुरे फल मे द्वेप करना यह बध तत्त्व का उल्टा श्रद्धान है।

प्रश्न ३६७—बधतत्त्व का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही बधतत्त्व का सच्चा कर्ता है।

प्रश्न २६८—बधतत्त्व का कर्ता द्रव्य कर्म को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—बधतत्त्व और अजीव तत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ३६९—बधतत्त्व का कर्ता जीव तत्त्व को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—बधतत्त्व और जीव तत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ३७०—आस्रव के कारण बधतत्त्व को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—आस्रव तत्त्व और बधतत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ३७१—बधतत्त्व सम्बन्धी भूल को किस प्रकार जाने-माने तो उसका अभाव हो ?

उत्तर—वास्तव मे रागादि भाव बन्ध का कर्ता उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही है। द्रव्य कर्म, जीवतत्त्व,

आस्रव तत्व नही है। ऐसा मानते ही दृष्टि अपने अवन्ध स्वभावी ज्ञायक जीव तत्त्व पर आवे तो वन्ध तत्त्व सम्बन्धी भूल का अभाव हो।

प्रश्न ३७२—बंधतत्त्व के विषय मे छहढाला मे क्या बताया है?

उत्तर—(१) अघाति कर्म के फल अनुसार पदार्थों का सयोग-वियोग रूप अवस्थाएँ होती हैं। (२) मिथ्यादृष्टि व्यर्थ में धन, योग्य स्त्री, पुत्रादि का सयोग होने से रति करता है और रोग निन्दा, निर्धनता, पुत्र वियोगादि होने से अरति करता है—यह मूर्खता है। (३) पुण्य-पाप दोनो वन्धन करता और अहितकर ही है।

प्रश्न ३७३—छहढाला की तीसरी ढाल मे क्या बताया है?

उत्तर—'जीव प्रदेश वन्धै विधि सो, सो बधन कबहुँ न सजिये' भावार्थ :—राग परिणाम ऐसा जो भाव बन्ध है वह द्रव्य वन्ध का निमित्त होने से वही निश्चय वन्ध है—जो छोडने योग्य है।

प्रश्न ३७४—समयसार कलश १०१ में क्या वताया है?

उत्तर—पुण्य पाप दोनो विभाव परिणति से उत्पन्न हुए हैं—इसलिये दोनो वन्धरूप ही हैं, अज्ञानी को भ्रमवश उनकी प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न भासित होने से वे अच्छे-वुरे दो प्रकार दिखाई देते हैं, परमार्थ दृष्टि तो उन्हे एकरूप ही, वन्धरूप ही और वुरा ही जानती है।

प्रश्न ३७५—समयसार गाथा ७४ मे बन्ध भावो को किन-किन नामो से सम्बोधन किया है?

उत्तर—बधभाव को विरुद्ध स्वभावी, अध्रुव, अनित्य, अशरण, वर्तमान मे दुःखरूप और भविष्य मे भी दुःख फल रूप है—ऐसा वताया है।

प्रश्न ३७६—बन्धभाव के विषय में जैन धर्म का सार क्या है?

उत्तर—पुण्य-पाप फल माहिं हरख बिलखो मत भाई। यह पुद्गल पर्याय उपजि विनसै थिर नाई। लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ, तोरि सकल जग दद-फद नित आतम ध्यावो।

भावार्थ—(१) पुण्य-पाप का बध वह पुद्गल की अवस्थाएँ है। उनके उदय मे जो सयोग प्राप्त हो, वे भी क्षणिक सयोगरूप से आते जाते हैं, वे जितने काल तक निकट रहे उतने काल भी सुख-दु ख देने मे समर्थ नही है। (२) जैन धर्म के समस्त उपदेश का सार यही है कि शुभाशुभ भाव ही ससार है, इसलिए शुभाशुभ भावो की रुचि छोडकर स्व सन्मुख होकर निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान पूर्वक निज आत्म-स्वरूप मे लीन होना ही जीव का कर्तव्य है।

कौन प्रशंसनीय है ?

इस जगत में जो आत्मा निर्मल सम्यग्दर्शन मे अपनी बुद्धि निश्चल रखता है वह, कदाचित् पूर्व पाप कर्म के उदय से दु खी भी हो और अकेला भी हो तथापि वास्तव मे प्रशसनीय है। और इससे विपरीत, जो जीव अत्यन्त आनन्द के देनेवाले—ऐसे सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रय से बाह्य है और मिथ्या मार्ग में स्थित है—ऐसे मिथ्यादृष्टि मनुष्य भले ही अनेक हो और वर्तमान में शुभकर्म के उदय से प्रसन्न हों तथापि वे प्रशंसनीय नहीं हैं। इसलिये भव्य-जीवों को सम्यग्दर्शन धारण करने का निरन्तर प्रयत्न करना चाहिये।

[पद्मनन्दि—देशव्रतोद्योतन अ० २]

संवरतत्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ३७७—सवरतत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल को आठ बोलो द्वारा समझाइये ?

उत्तर—आतम हित हेतु विराग जान, तै लखै आपको कष्टदान ।

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै राग मे निज पिछान	इसका फल
निज आत्मा के आश्रय से प्रगट सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही हितकारी सुखदायक है,	स्वरूप मे स्थिरता-रूप वैराग्य सुख का कारण होने पर भी दुःख का कारण है ऐसा मान करि,	अहिंसादिरूप शुभास्रव भावो मे सवर की पहचान करता है,	ससार है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान	इसका फल
निज आत्मा के आश्रय से प्रगट सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही हितकारी सुखदायक है,	निज आत्मा के आश्रय से सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रगट करने मे ही अपना हित मान करि,	आत्माश्रित सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप शुद्ध भावो मे ही अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न ३७८—सवरतत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—अशुद्धि का उत्पन्न ना होने को नास्ति से सवरतत्त्व और शुद्धि का प्रगट होने को अस्ति से सवरतत्त्व कहते हैं ।

प्रश्न ३७९—सवरतत्व को प्रयोजनभूत क्यो कहा है ?

उत्तर—प्रगट करने योग्य की अपेक्षा से सवरतत्व को प्रयोजन-भूत कहा है ।

प्रश्न ३८०—संवरतत्व कैसे प्रगट होवे ?

उत्तर—अजीवतत्त्व जानने योग्य प्रयोजन भूततत्व है। आस्रव-तत्व और बधतत्त्व हेय है। एकमात्र अपनी आत्मा ही आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है, ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व की ओर दृष्टि करे तो तत्काल सवरतत्व प्रगट हो जाता है।

प्रश्न ३८१ - संवरतत्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही जीव को हितकारी सुखरूप और सुख के कारण है, यह सवरतत्व का सच्चा श्रद्धान है ।

प्रश्न ३८२—संवरतत्व का उल्टा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—"आतम हित हेतु विराग ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान" अर्थ —निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र ही जीव को हितकारी, सुखरूप और सुख के कारण हैं परन्तु उन्हे कष्टरूप कष्ट का कारण मानना, यह सवरतत्त्व का उल्टा श्रद्धान है ।

प्रश्न ३८३—संवरतत्व का सच्चा कर्त्ता कौन है ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही सवरतत्त्व का सच्चा कर्त्ता है ।

प्रश्न ३८४—सवरतत्व का कारण द्रव्यकर्म के रुकने को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—सवरतत्त्व और अजीवतत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा ।

प्रश्न ३८५—सवरतत्व का कारण शुभभावो को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—सवरतत्त्व और आस्रव तत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ३८६—जीवतत्व से सवरतत्व माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—जीवतत्व और सवरतत्त्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ३८७—सवरतत्व सम्बन्धी भूल का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—सवरतत्त्व का कर्त्ता उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही है। अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व और वन्धतत्व से सवरतत्त्व का सम्बन्ध नही है, ऐसा मानकर अपने भगवान आत्मा की ओर दृष्टि करे तो सवरतत्त्व सम्बन्धी भूल मिट जावे।

प्रश्न ३८८—छहढाला तीसरी ढाल मे संवरतत्व के लिये क्या बताया है ?

उत्तर—'शम-दम तैं जो कर्म न आवे सो सवर आदरिये' अर्थ—शम अर्थात् कषायो का अभाव और दमतें अर्थात इन्द्रिय और मन से उपयोग हटाकर अपने ज्ञायक स्वभाव मे लगना सो सवरतत्त्व है, उसे ग्रहण करना चाहिये।

प्रश्न ३८९—सवर भावना के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—जिन पुण्य-पाप नहि कीना, आतम अनुभव चित दीना,

तिनही विधि आवत रोके, सवर लहि सुख अवलोके।

भावार्थ—(१) सम्यग्दर्शनादि होते ही मिथ्यात्वादि आस्रव रुकते है। (२) शुभाशुभ उपयोग दोनो बध के कारण है ऐसा सम्यग्दृष्टि जीव पहले से ही जानता है। (३) साधक को निचली भूमिका मे शुद्धता के साथ अल्प शुभाशुभ भाव होते हैं, किन्तु वह दोनो को बन्ध का कारण मानता है। (४) अत. सम्यग्दृष्टि जीव स्वद्रव्य के आलम्बन द्वारा जितने अश मे शुद्धता करता है उतने अश मे उसे सवर

होता है और वह शुद्धता मे क्रमश वृद्धि करके पूर्ण सवर प्राप्त करता है उसे सवर भावना बताया है।

प्रश्न ३६०—जीव मुक्त किससे होता है और किससे बंधता है ?

उत्तर—जो कोई सिद्ध हुए हैं, हो रहे हैं और भविष्य मे होंगे वे भेदविज्ञान से ही हुए है और जो कोई बधे है, वे भेदविज्ञान के अभाव से ही बधे है। (समयसार कलश १३१)

प्रश्न ३६१—भेदविज्ञान क्या है ?

उत्तर—(१) उपयोग तो चैतन्य का परिणमन होने से ज्ञान स्वरूप है। (२) और क्रोधादि भावकर्म, ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म तथा शरीरादि नोकर्म सभी पुद्गल द्रव्य के परिणाम होने से जड हैं। उन मे और ज्ञान मे प्रदेश भेद होने से अत्यन्त भेद है। अर्थात द्रव्यकर्म, नोकर्म तथा भावकर्म का निज चैतन्य ज्ञायक भगवान से भिन्नपना अनुभव मे आना ही भेद विज्ञान है।

प्रश्न ३६२—समयसार गाथा १८७ से १८९ तक मे सवर किस प्रकार उत्पन्न होता है, इस विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—शुभअशुभ से जो रोक कर निज आत्मा को आत्मा हि से।

दर्शन अवरू ज्ञानहि ठहर, पर द्रव्य इच्छा परिहरे ॥१८७॥
जो सर्व सग विमुक्त ध्यावे, आत्म से आत्मा हि को
नहि कर्म अरू नोकर्म, चेतक चेतता एकत्व को ॥१८८॥
वह आत्म ध्याता ज्ञान-दर्शनमय अनन्यमयी हुआ।
बस अल्पकाल जु कर्म से परिमोक्ष पावे आत्म का ॥१८९॥

जिन पूजा को कोई परमार्थ से धर्म ही मान ले, वह तो भूल है ही; परन्तु जिन पूजा का ही निषेधकरने लगे वह भी भूल है।

वीतराग विज्ञान—अप्रैल, ८५

निर्जरा तत्त्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ३९३—निर्जरातत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल को आठ बोलो द्वारा समझाइये ?

उत्तर—'रोके न चाह निज शक्ति खोय।'

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज-पिछान	इसका फल
अखडानन्द निज आत्मा के लक्ष से अशत शुद्धि की वृद्धि और अशत अशुद्धि की हानि, यह सकाम निर्जरा हितकारी है,	अपनी ज्ञानादि शक्ति को भूलकर शुभाशुभ इच्छाओ मे तथा पाँच इन्द्रियो के विपयो की चाह मे अपनापना मान करि,	अनशनादि प्रायश्चित्तादि वाह्य तपरूप निर्जरा से अपनी पहचान करता है,	ससार है।
इस बात को जान	**अविपरीत मान करि**	**करै आत्म मे निज-पिछान**	**इसका फल**
अखडानन्द निज आत्मा के लक्ष से अशत शुद्धि की वृद्धि और अशत अशुद्धि की हानि, यह सकाम निर्जरा हितकारी है,	शुभाशुभ इच्छाओ का उत्पन्न ना होना ही शुद्धोपयोग तप रूप निर्जरा मे अपना हितपना मान करि,	आत्मा के शुद्ध प्रतपन द्वारा जो सकाम निर्जरा होती है उससे पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न ३९४—निर्जरा तत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—अशुद्धि की हानि होने को नास्ति से निर्जरातत्व और शुद्धि की वृद्धि होने को अस्ति से निर्जरातत्व कहते है।

प्रश्न ३९५—निर्जरातत्व को प्रयोजनभूत क्यो कहा है ?

उत्तर—एकदेश प्रगट करने योग्य की अपेक्षा से निर्जरातत्व को प्रयोजनभूत कहा है।

प्रश्न ३९६—निर्जरातत्व कैसे प्रगट होवे ?

उत्तर—अजीवतत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है। आस्रव-तत्व और बधतत्व छोडने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। एक मात्र अपनी आत्मा ही आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है, ऐसा निर्णय करते ही सवर पूर्वक निर्जरा प्रगट हो जाती है।

प्रश्न ३९७—निर्जरातत्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—निज आत्मस्वरूप मे सम्यक् प्रकार से स्थिरता के अनुसार जितना शुभाशुभ इच्छा का अभाव होना हो निर्जरा तत्व है, यह निर्जरातत्व का सच्चा श्रद्धान है।

प्रश्न ३९८—निर्जरा तत्व का उल्टा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—"रोके न चाह निज शक्ति खोय" अर्थ—अपनी अनन्त ज्ञानादि शक्ति को भूलकर पर से सुख मानने रूप इच्छाओं को करना ही निर्जरा तत्व का उल्टा श्रद्धान है।

प्रश्न ३९९—निर्जरा तत्व का सच्चा कर्त्ता कौन है ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही निर्जरा तत्व का सच्चा कर्त्ता है।

प्रश्न ४००—द्रव्यकर्म के झरने से निर्जरा माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—अजीव तत्व और निर्जरा तत्व को भिन्न-भिन्न न मान-कर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४०१—जीव से निर्जरा माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—जीवतत्व और निर्जरातत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४०२—शुभभावो से निर्जरा माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—आस्रवतत्व और निर्जरातत्व को भिन्न भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४०३—निर्जरातत्व सम्बन्धी जीव की भूल का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—निर्जरातत्व का सच्चा कर्त्ता उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही है। जीव, अजीव, आस्रव, बध से निर्जरा तत्व का सम्बन्ध नही है, ऐसा मानते ही सवर पूर्वक निर्जरातत्व प्रगट हो जाता है और अनादि का निर्जरातत्व सम्बन्धी भूल का अभाव हो जाता है।

प्रश्न ४०४—निर्जरा कितने प्रकार की कही जाती है ?

उत्तर—वास्तव मे सच्ची निर्जरा तो एक ही प्रकार की है, परन्तु वैसे चार प्रकार की कही जाती है। सकाम निर्जरा, अकाम निर्जरा, सविपाक निर्जरा और अविपाक निर्जरा।

प्रश्न ४०५—सकाम निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर—सत्य पुरुषार्थ पूर्वक निज आत्म के सम्मुख होकर शुद्धि की वृद्धि को सकाम निर्जरा कहते है।

प्रश्न ४०६—अकाम निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर—बाह्य प्रतिकूल सयोग होने के समय मन्द कषायरूप भावो के होने को अकाम निर्जरा कहते है।

प्रश्न ४०७—सविपाक निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर—ससारी जीवो को कर्म के उदय काल मे समय-समय अपनी स्थिति पूर्ण होने पर जो कर्म परमाणु खिर जाते है उसे सविपाक निर्जरा कहते है।

प्रश्न ४०८—अविपाक निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर—सच्ची दृष्टि होने पर आत्मा के पुरुषार्थ द्वारा उदय-काल प्राप्त होने से पहले कर्मों के खिर जाने को अविपाक निर्जरा कहते हैं।

प्रश्न ४०९—छहढाला की तीसरी ढाल मे निर्जरा तत्व के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—"तप-वलते विधि-झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिए" अर्थ—शुभाशुभ इच्छाओ के उत्पन्न न होने से तप की शक्ति से कर्मों का एकदेश खिर जाना सो निर्जरा है। उस निर्जरा को सदा प्राप्त करना चाहिए।

प्रश्न ४१०—निर्जरा भावना के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—निज काल पाय विधि झरना, तासो निज काज न सरना तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिव सुख दरसावै ।। अर्थ —(१) अपनी-अपनी स्थिति पूर्ण होने पर कर्मों का खिर जाना तो प्रति समय अज्ञानी को भी होता है। वह कही शुद्धि का कारण नही होता है। (२) आत्मा के शुद्ध प्रतपन द्वारा जो कर्म खिर जाते हैं वह अविपाक निर्जरा अथवा सकाम निर्जरा कहलाती है। (३) तदनुसार शुद्धि की वृद्धि होते-होते सम्पूर्ण निर्जरा होती है, तब जीव सुख की पूर्णता रूप मोक्ष प्राप्त करता है। (४) ऐसा जानता हुआ सम्यग्दृष्टि जीव स्वद्रव्य के आलम्बन द्वारा जो शुद्धि की वृद्धि करता है वह निर्जरा भावना है।

प्रश्न ४११—निर्जरा के विषय मे समयसार गाथा २०६ में क्या बताया है ?

उत्तर—इसमे सदा रतिवत बन, इनमे सदा सतुष्ट रे।
इससे हि बन तू तृप्त, उत्तम सौख्य हो जिमसे तुझे ।।

मोक्षतत्व का स्पष्टीकरण

प्रश्न ४१२—मोक्षतत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल को आठ बोलो द्वारा समझाइये ?

उत्तर—'शिव रूप निराकुलता न जाये'

ताको न जान	विपरीत मान करि	करै देह मे निज पिछान	इसका फल
निज आत्मा के आश्रय से सम्पूर्ण अशुद्धि का सर्वथा अभाव और सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष है, मोक्ष ही परम हित रूप है,	मोक्ष मे शरीर इन्द्रियाँ स्त्री आदि नहीं हैं, वहाँ विषयो के बिना सुख कैसे हो सकता है ? इस प्रकार मोक्ष दशा मे निराकुलता न मान करि,	शरीर; इन्द्रियाँ, स्त्री, महल आदि पाँचो इन्द्रियो के आकुलता रूप विषयो से मोक्ष सुख की पहचान करता है,	निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करै आत्म मे निज पिछान	इसका फल
निज आत्मा के आश्रय से सम्पूर्ण अशुद्धि का सर्वथा अभाव और सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष है, मोक्ष ही परम हित रूप है,	मोक्ष मे पूर्ण निराकुलता रूप आत्मा के अतिन्द्रिय सुख है ऐसा मान करि,	अतिन्द्रिय स्वभावी निज आत्मा मे सम्पूर्ण निराकुलता रूप सुख से अपनी पहचान करता है,	मोक्ष है।

प्रश्न ४१३—मोक्षतत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—सम्पूर्ण अशुद्धि के अभाव होने को नास्ति से भावमोक्ष और सम्पूर्ण शुद्धि के प्रगट होने को अस्ति से भावमोक्ष कहते हैं।

प्रश्न ४१४—मोक्षतत्व को प्रयोजनभूत क्यो कहा है ?

उत्तर—पूर्ण प्रगट करने की अपेक्षा से मोक्ष तत्व को प्रयोजनभूत कहा है।

प्रश्न ४१५—मोक्षतत्व किस प्रकार प्रगट होवे ?

उत्तर—अजीवतत्त्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। आस्रव-बध हेय है। जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन है वह उपयोगमयी जीवतत्त्व मैं हूँ। ऐसा जानते-मानते ही मोक्षतत्त्व की शुरूआत हो जाती है।

प्रश्न ४१६—क्या मोक्ष कई प्रकार का है ?

उत्तर—हाँ पाँच प्रकार का है (१) शक्तिरूप मोक्ष प्राणी मात्र के पास है। (२) दृष्टिमुक्त मोक्ष चौथे गुणस्थान मे प्रगट हो जाता है। (३) मोहमुक्त मोक्ष बारहवे गुणस्थान मे प्रगट हो जाता है। (४) जीवनमुक्त मोक्ष १३वे गुणस्थान मे प्रगट हो जाता है। (५) देह मुक्त मोक्ष सिद्धदशा है।

प्रश्न ४१७—मोक्षतत्व का सच्चा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन ज्ञानपूर्वक पूर्ण आकुलता के अभावरूप मोक्ष को सुखरूप मानना, यह मोक्ष तत्व का सच्चा श्रद्धान है।

प्रश्न ४१८—मोक्षतत्व का उल्टा श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—"शिवरूप निराकुलता न जोय" अर्थ —निज आत्मा के आश्रय से पूर्ण आकुलता के अभाव को मोक्ष सुख नही मानना और बाह्य सुविधाओ मे सुख मानना यह मोक्षतत्व का उल्टा श्रद्धान है।

प्रश्न ४१९—मोक्षतत्व का सच्चा कर्त्ता कौन है ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही मोक्षतत्व का सच्चा कर्त्ता है।

प्रश्न ४२०—मोक्षतत्व का कर्त्ता द्रव्यकर्म के अभाव को माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर—मोक्षतत्व और अजीवतत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर दोनो को एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४२१—जीव से मोक्ष माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—जीवतत्व और मोक्षतत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर दोनो को एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४२२—आस्रव-बन्ध से मोक्ष माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—आस्रव-बन्ध और मोक्षतत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४२३—संवर-निर्जरा से मोक्ष माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर—सवर-निर्जरा और मोक्ष तत्व को भिन्न-भिन्न न मानकर एक मानने का प्रसग उपस्थित होवेगा।

प्रश्न ४२४—मोक्षतत्व सम्बन्धी जीव की भूल का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण ही मोक्षतत्व का सच्चा कर्त्ता है। जीव, अजीव, आस्रव, वन्ध, सवर-निर्जरा मोक्ष का कर्ता नही है। मै एक ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव-तत्व हूँ, ऐसा जानकर स्व-सन्मुख होते ही मोक्ष तत्व सम्बन्धी जीव की भूल का अभाव हो जाता है।

प्रश्न ४२५—छहढाला की तीसरी ढाल मे मोक्षतत्व के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर—"सकल कर्म ते रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी" अर्थ :— आठ कर्मो के सर्वथा अभाव पूर्वक आत्मा की सम्पूर्ण शुद्धदशा प्रगट होती है। वह पूर्ण प्रगट करने योग्य हितरूप है। वह प्रगट होने पर अविनाशी तथा अनन्त सुखमयी है।

प्रश्न ४२६—समयसार मे मोक्ष किसे कहा है ?

उत्तर—आत्मा और वध को अलग-अलग कर देना सो मोक्ष है।

प्रश्न ४२७—गृहीत मिथ्यादर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर—'जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषै चिर दर्शन मोह एव' अर्थात् कुगुरु, कुदेव और कुधर्म का सेवन ही गृहीत मिथ्यादर्शन

कहलाता है कुगुरु आदि के उपदेश मे अनादिकाल के अतत्त्व श्रद्धान की दृढ प्रतीति गृहीत मिथ्यादर्शन है।

प्रश्न ४२८—गृहीत मिथ्याज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर—'एकान्तवाद-दूपित समस्त, विपयादिक पोपक अप्रशस्त। कपिलादिरचित-श्रुत को अभ्यास, सो है कुवोध बहु देन त्रास' अर्थात् वस्तु मे सत्-असत्, नित्य-अनित्य, एक अनेक आदि अनन्त धर्म हैं उसमे से किसी भी एक ही धर्म को पूर्ण वस्तु कहने के कारण मिथ्या है ऐसे विषय-कषाय की पुष्टि करने वाले (दया-दान-अणुव्रत महाव्रतादि शुभ राग जो कि पुण्यास्रव हैं आदि शुभ भावो से धर्म होना वतलावे) कुगुरुओ के रचे हुए सर्व प्रकार के मिथ्याशास्त्रो को धर्मबुद्धि से लिखना-लिखाना, पढना-पढाना, सुनना और सुनाना उसे गृहीत मिथ्या ज्ञान कहते हैं। वे एकान्त और अप्रशस्त होने के कारण कुशास्त्र हैं क्योकि उनमे प्रयोजनभूत सात तत्वो की यथार्थता नही है। इसलिए जो शास्त्र शुभ भावो से भला होता है या शुभ भाव करते-करते धर्म की प्राप्ति होती है, निमित्त से उपादान मे कार्य होता है आदि बातो को बतायें वह कुशास्त्र है। इसलिए सर्वथा एक पक्ष को मानना गृहीत मिथ्याज्ञान है। कुगुरु आदि के उपदेश से अनादिकाल के अतत्व के ज्ञान का दृढज्ञान गृहीत मिथ्या ज्ञान है।

प्रश्न ४२९—गृहीत मिथ्याचारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—'जो ख्याति लाभ पूजादि चाह। धरि करन विविध विधि देह दाह। आतम अनातम के ज्ञान हीन, जे जे करनी तन करन छीन' अर्थात् शरीरादि और आत्मा का भेदज्ञान न होने से जो यश धन, सम्पत्ति, आदर-सत्कार आदि की इच्छा से मानादि कषाय के वशीभूत होकर शरीर को क्षीण करने वाली अनेक प्रकार की क्रियाये करता है उसे गृहीत मिथ्याचारित्र कहते हैं। कुगुरु आदि के उपदेश से अनादिकाल के अतत्त्व के आचरण का दृढ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न ४३०—परमात्म भावना क्या है जिसके जानने-मानने से पर्याय मे परमात्मपना प्रगट हो जावे ?

उत्तर—मैं सहज शुद्ध ज्ञानानन्द एक स्वभाव हूँ, निर्विकल्प हूँ, उदासीन हूँ, निज निरजन शुद्ध आत्मा के सम्यक् श्रद्धान-ज्ञान-अनुष्ठानरूप हूँ, निश्चय रत्नत्रयरूप निर्विकल्प समाधि मे अनुभवाता वीतराग सहजानन्दरूप हूँ, सर्व विभाव परिणाम रहित शून्य हूँ, मात्र सुख को अनुभूतिरूप लक्षणवाला स्व-सम्वेदन ज्ञान द्वारा स्व सम्वेदयगम्य-प्राप्य-भरितावस्थ परिपूर्ण परमात्मा हूँ ॥

ऐसा जानते-मानते ही पर्याय मे परमात्मापना प्रगट हो जाता है।

प्रश्न ४३१—नौ प्रकार का पक्ष कौन-कौन सा है, जिसके कारण जीव चारो गतियो मे भ्रमण करता है ?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थो का पक्ष (२) आँख-नाक-कान आदि औदारिक शरीर का पक्ष (३) तैजस-कार्माण शरीर का पक्ष (४) भाषा और मन का पक्ष (५) शुभाशुभ विकारी भावो का पक्ष (६) अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्याय का पक्ष (७) भेदनय का पक्ष (८) अभेदनय का पक्ष (९) भेद-अभेदनय का पक्ष।

प्रश्न ४३२—अत्यन्त भिन्न पर पदार्थो का पक्ष क्या है ?

उत्तर—मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म-अधर्म आकाश एक-एक, लोक प्रमाण असख्यात काल-द्रव्य, यह अत्यन्त भिन्न पर द्रव्य हैं। इन सब द्रव्यो मे तथा इनके कार्यों मे अपनेपने की बुद्धि, यह अत्यन्त भिन्न पर पदार्थो का पक्ष है इस पक्ष के कारण जीव अनन्त ससार मे परिभ्रमण करता है।

प्रश्न ४३३—अत्यन्तभिन्न पर पदार्थों के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—अत्यन्त भिन्न पर द्रव्यो से तथा इनके कार्यों से मुझ निज आत्मा का किसी भी प्रकार का किसी भी अपेक्षा कर्त्ता-भोक्ता आदि का सम्बन्ध नही है, क्योकि मुझ निज आत्मा का इन सब अत्यन्त भिन्न पर द्रव्यो से द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक है। ऐसा जानकर ज्ञान

दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व का आश्रय ले, तब अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों के पक्ष से भेद विज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४३४—अत्यन्तभिन्न पर पदार्थों के पक्ष से एकत्वबुद्धि का अभाव हो जाने से भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं ?

उत्तर—(१) मैं किसी का भला-बुरा करूँ या मेरा कोई भला-बुरा करे, (२) मेरा लडका-लडकी, माँ-बाप हैं, (३) मैं रोटी खाता पीता हूँ, (४) मैं दुकान का कार्य करता हूँ, (५) मैं बिस्तरा बिछाता उठाता हूँ; (६) मैं घर के काम काज सम्हालता हूँ, (७) बिजली का पखा हो तो आराम, न मिले तो तकलीफ, (८) गर्मियो मे ठडा पानी-सर्दियो मे गरम पानी मिले तो अच्छा, (९) मेरा जेवर-दुकान मकान है (१०) भगवान गुरू-शास्त्र-दिव्यध्वनि से मेरा कल्याण होता है, (११) धर्म-द्रव्य मुझे चलाता है, अधर्म द्रव्य मुझे ठहराता है; (१२) आकाश जगह देता है, काल परिणमन कराता है; आदि प्रश्न नही उठते हैं क्योकि भेदविज्ञानी को अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों के पक्ष से भेद विज्ञान है।

प्रश्न ४३५—आंख नाक-कान आदि औदारिक शरीर का पक्ष क्या है ?

उत्तर—स्पर्शन-रसना-घ्राण-चक्षु-कर्ण पाँच इन्द्रियो रूप औदारिक शरीर मे अपनेपने की बुद्धि, यह आँख-नाक-कान आदि औदारिक शरीर का पक्ष है।

प्रश्न ४३६—आख-नाक आदि औदारिक शरीर के पक्ष से भेद-विज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—स्पर्शन-रसना आदि औदारिक शरीर आहारवर्गणा का कार्य है। मुझ निज आत्मा का स्पर्शनादि औदारिक शरीर से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता-भोक्ता आदि का सम्बन्ध नही है, क्योंकि इन सबसे मेरा द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव पृथक् है। ऐसा जान-कर ज्ञान दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व का आश्रय ले, तो आँख-

नाक-कान आदि औदारिक शरीर के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४३७—आँख-नाक-कान आदि औदारिक शरीर के पक्ष से एकत्व बुद्धि का अभाव हो जाने से भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं?

उत्तर—(१) मैं हल्का या भारी हूँ, (२) मुझे गर्मी या सर्दी का बुखार है, (३) मेरी इन्द्रियाँ है मैं इन्द्रियो से ज्ञान करता हूँ, (४) मैं पैरो से चलता हूँ, (५) मैं काला-गोरा, निर्बल ताकतवर लम्बा-ठिगना हूँ आदि प्रश्न नही उठते है, क्योकि भेदविज्ञानी को आँख-नाक-कान आदि औदारिक शरीर के पक्ष से भेद विज्ञान है।

प्रश्न ४३८—तैजस-कार्माण शरीर का पक्ष क्या है?

उत्तर—तैजस शरीर कान्ति देता है, कार्माण शरीर का उदय ही भाव कर्म कराता है, अज्ञान-ज्ञान, सोना-जागना, सुख-दु ख, मिथ्यात्व असयम चारो गतियो मे भ्रमण, इन सवको कर्म ही कराता है, दर्शन मोहनीय के उपशमादि से औपशमिकादि सम्यक्त्व होते हैं, द्रव्य कर्मो के द्वारा ही आत्मा मे बिगाड-सुधार होता है ऐसी एकत्वपने की बुद्धि यह तैजस-कार्माण शरीर का पक्ष है।

प्रश्न ४३९—तैजस-कार्माण शरीर के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा?

उत्तर—तैजस शरीर तैजसवर्गणा का कार्य है। द्रव्यकर्म कार्माण-वर्गणा का कार्य है। मुझ निज आत्मा का तैजस-कार्माण शरीर से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता भोक्ता आदि का सम्वन्ध नही है, क्योकि इनका मुझ से द्रव्य क्षेत्र काल-भाव पृथक है। ऐसा जानकर ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व का आश्रय ले, तो तैजस-कार्माण शरीर के पक्ष से भेद विज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४४०—तैजस-कार्माण शरीर के पक्ष से एकत्वबुद्धि का अभाव हो जाने से भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं?

उत्तर—(१) कर्म चक्कर कटाता है, (२) दर्शन मोहनीय का उदय सम्यक्त्व नही होने देता, (३) कर्म के उदय से ११वें गुणस्थान से गिर जाता है, (४) ज्ञानावरणीय के अभाव से केवल ज्ञान होता है (५) आठो कर्मों के अभाव से ही सिद्ध दशा होती है, आदि प्रश्न नही उठते है क्योकि भेदविज्ञानी को तैजस-कार्माण शरीर के पक्ष से भेदविज्ञान है।

प्रश्न ४४१—भाषा-मन का पक्ष क्या है ?

उत्तर—दिव्यध्वनि, शब्द भाषावर्गणा का काय है। द्रव्यमन मनोवर्गणा का कार्य है। इस बात को भलकर दिव्यध्वनि भगवान की है। गुरु का वचन है। सज्ञीपचेन्द्रिय के द्रव्यमन होता है। द्रव्य-मन के कारण विचार होता है। भाषावर्गणा-मनोवर्गणा के कार्यो मे आत्मपने की बुद्धि होना, यह भाषा-मन का पक्ष है।

प्रश्न ४४२—भाषा-मन के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—दिव्यध्वनि, शब्द भाषावर्गणा का ही कार्य है जीव तथा अन्यवर्गणाओ का नही है। द्रव्यमन मनोवर्गणा का ही कार्य है जीव तथा अन्य वर्गणाओ का नही है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोग-मयी निज जीव तत्त्व का आश्रय ले, तो भाषा-मन के पक्ष से भेद-विज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४४३—भाषा-मन के पक्ष से एकत्व बुद्धि का अभाव हो जाने से भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नही उठते हैं ?

उत्तर—(१) भगवान की दिव्यध्वनि हैं, (२) मैं हूँ तो शब्द निकलता है, (३) सज्ञी पचेन्द्रिय जीव द्रव्यमन का कर्ता है, (४) द्रव्यमन से ही विचार होता है, आदि प्रश्न नही उठते हैं, क्योकि भेदविज्ञानी को भाषा-मन के पक्ष से भेद विज्ञान है।

प्रश्न ४४४—शुभाशुभ विकारी भावो के पक्ष क्या है ?

उत्तर—शुभाशुभ आस्रव भाव प्रत्यक्ष दुख के देने वाले हैं। बध

के ही कारण हैं। वध के कारणो को सुखरूप जानकर सेवन करना तथा शुभभाव भी वध का कारण है। इसे भूलकर आस्रव भावो को मोक्ष का कारण मानना। शुभभाव करते-करते धर्म की प्राप्ति हो जावेगी, शुभभावो से धर्म प्राप्ति आदि मान्यता, यह शुभाशुभ विकारी भावो का पक्ष है।

प्रश्न ४४५—शुभाशुभ विकारी भावो के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ, कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—पुण्य-पाप दोनो विभाव परिणति से उत्पन्न हुए है इसलिए दोनो वधरूप ही हैं और परमार्थ दृष्टि तो पुण्य-पाप को एकरूप ही बुरा ही जानती है, ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व का आश्रय ले, तो शुभाशुभ विकारी भावो के पक्ष से भेद विज्ञान हुअ" कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४४६—शुभाशुभ विकारी भावो के पक्ष से मोक्षमार्ग मानने को खोटी बुद्धि का अभाव हो जाने से भेद विज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नही उठते हैं ?

उत्तर—शुभभाव से धर्म होता है या शुभभाव करते-करते धर्म की प्राप्ति हो जावेगी ऐसे प्रश्न नही उठते हैं, क्योकि भेदविज्ञानी को शुभाशुभ विकारी भावो के पक्ष से भेदविज्ञान है।

प्रश्न ४४७—अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्याय का पक्ष क्या है ?

उत्तर—अपनी आत्मा के अनुभव हुए बिना अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो की मात्र वातें करना और आत्मा मे शान्ति मानना यह अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्याय का पक्ष है।

प्रश्न ४४८—अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो के आश्रय से भी धर्म की प्राप्ति नही होती है एकमात्र त्रिकाली स्वभाव के आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति होती है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव

तत्त्व का आश्रय ले, तो अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो के पक्ष से भेद विज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४४९—अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो के पक्ष के आश्रय से धर्म प्राप्ति की खोटी बुद्धि का अभाव हो जाने से भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं ?

उत्तर—(१) मैं केवलज्ञान प्राप्त करूँ, (२) सिद्ध दशा प्राप्त करूँ, आदि प्रश्न नही उठते हैं क्योकि भेदविज्ञानी जानता है कि मैं स्वय अपने मे लीन होऊँगा तो केवलज्ञान-सिद्धदशा सहजरूप से आती है और उसकी दृष्टि अपने ज्ञायक भगवान पर रहती है।

प्रश्न ४५०—भेदनय का पक्ष क्या है ?

उत्तर—बद्ध, मूढ, रागी, द्वेषी, कर्त्ताभोक्ता, अनेक अनित्य गुण, स्थान, मार्गणा, भेदरूप व्यवहार मे लीन होना यह नयो के पक्षपात हैं। जो भेदनय के पक्षो मे शान्ति मानकर उसमे लीन हैं, यह भेद-नय का पक्ष है। व्यवहाराभासी कहो, भेद नय का पक्ष कहो एक ही बात है।

प्रश्न ४५१—भेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—नयो के कथन अनुसार यथा योग्य विवक्षापूर्वक वस्तु स्वरूप का निर्णय करके अपने ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय ले, तो भेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४५२—भेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान होने पर भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं ?

उत्तर—मैं बद्ध हूँ, अनेक हूँ, अनित्य हूँ, आदि विकल्प नही उठते हैं क्योकि भेद विज्ञानी को भेदनय के पक्ष से भेद विज्ञान है।

प्रश्न ४५३—अभेदनय का पक्ष क्या है ?

उत्तर—भगवान ने शक्ति अपेक्षा आत्मा सिद्ध समान, केवल

ज्ञानादि सहित, द्रव्यकर्म—नोकर्म रहित है, परमानन्दमयी है ऐसा बताया है। परन्तु अपने आपका अनुभव हुए बिना अभेदनय के पक्षो मे लीन है। यह अभेदनय का पक्ष है। निश्चयाभासी कहो, अभेदनय का पक्ष कहो एक ही बात है।

प्रश्न ४५४—अभेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—मैं सिद्ध समान, केवल ज्ञानादि सहित शक्ति रूप से हूँ। पर्याय मे नही हूँ। ऐसा जानकर शक्तिवान का आश्रय ले, तो अभेद-नय के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४५५—अभेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान होने पर भेदविज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते है ?

उत्तर—मैं एक हूँ, शुद्ध हूँ, नित्य हूँ, अभेद हूँ। आदि विकल्पो के प्रश्न नही उठते हैं क्योकि भेदविज्ञानी को अभेदनय के पक्ष से भेदविज्ञानी है।

प्रश्न ४५६—भेदाभेदनय का पक्षपात क्या है ?

उत्तर—बद्ध-अबद्ध, मूढ-अमूढ, नित्य-अनित्य, एक-अनेक वेद्य-अवेद्य, नाना-अनाना इत्यादि भेदाभेदनय के पक्षपात हैं। भेदाभेदो मे शान्ति मानकर इनमे लीन होना—यह भेदाभेद का पक्ष है। उभया-भासी कहो, भेदाभेद नय का पक्ष कहो, एक ही बात है।

प्रश्न ४५७—भेदाभेदनय के पक्ष से भेद विज्ञान हुआ कब कहलाया जावेगा ?

उत्तर—भेदाभेदनयो के कथनानुसार यथायोग्य विवक्षापूर्वक वस्तु स्वरूप का निर्णय करके नयो के पक्षपात को छोडकर ज्ञान-दर्शन उप-योगमयी निज जीवतत्व का आश्रय लेता है तब भेदाभेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान हुआ कहलाया जावेगा।

प्रश्न ४५८—भेदाभेदनय के पक्षो से भेदविज्ञान होने पर भेद विज्ञानी को कैसे-कैसे प्रश्न नहीं उठते हैं ?

उत्तर—भेदाभेद के विकल्पो के प्रश्न नही उठते है क्योकि भेद-विज्ञानी को भेदाभेदनय के पक्ष से भेदविज्ञान है।

प्रश्न ४५९—नौ प्रकार के पक्षो के विषय मे अमृतचन्द्राचार्य का क्या कहना है ?

उत्तर—कलश ६९ मे कहा है कि "जो नय के पक्षपात को छोड-कर अपने स्वरूप मे गुप्त होकर निवास करते है वे ही, जिनका चित्त विकल्पजाल से रहित शान्त हो गया है ऐसे होते हुए, साक्षात अमृत-पान करते है।"

प्रश्न ४६०—संक्षेप मे मिथ्यादर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर—निज कारण परमात्मा को भूलकर नौ प्रकार के पक्षो में एकत्वपने की श्रद्धा को मिथ्यादर्शन कहते है।

प्रश्न ४६१—सक्षेप मे मिथ्याज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर—निज कारण परमात्मा को भूलकर नौ प्रकार के पक्षो मे एकत्वपने के ज्ञान को मिथ्याज्ञान कहते हैं।

प्रश्न ४६२—सक्षेप मे मिथ्याचारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—निजकारण परमात्मा को भूलकर नौ प्रकार के पक्षों मे एकत्वपने के आचरण को मिथ्याचारित्र कहते हैं।

प्रश्न ४६३ - सक्षेप मे सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो से भिन्न निजकारण परमात्मा का श्रद्धान वह सम्यग्दर्शन है।

प्रश्न ४६४ - सक्षेप मे सम्यग्ज्ञान किसे कहते है ?

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो से भिन्न निजकारण परमात्मा का ज्ञान वह सम्यग्ज्ञान है।

प्रश्न ४६५—सक्षेप मे सम्यक्चारित्र किसे कहते है ?

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो से भिन्न निजकारण परमात्मा मै आचरण वह सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न ४६६—जिनेन्द्र भगवान ने मिथ्यात्व का बीज किसे कहा है ?

उत्तर—आत्मा नौ प्रकार के पक्षो से असयुक्त होने पर भी अज्ञानी जीवो को नौ प्रकार के पक्ष सयुक्त जैसे प्रतिभासित होते हैं। यह प्रतिभास ही वास्तव मे मिथ्यात्व का बीज है।

प्रश्न ४६७—नौ प्रकार के पक्षो मे संयुक्तपना मिथ्यात्व का बीज है। ऐसा कहाँ भगवान अमृतचन्द्राचार्य ने कहा है ?

उत्तर—पुरुषार्थसिद्धयुपाय गा० १४ मे कहा है कि "यह आत्मा रागादि और शरीरादि भावो से असयुक्त होने पर भी अज्ञानियो को सयुक्त जैसा प्रतिभासता है। वह प्रतिभास वास्तव मे मिथ्यात्व का बीज है।

प्रश्न ४६८—अब क्या करें तो धर्म की शुरूआत होकर वृद्धि और पूर्णता होवे ?

उत्तर—मेरी आत्मा इन नौ प्रकार के पक्षो से भिन्न है। ऐसा जानकर अपनी आत्मा की ओर दृष्टि करने से धर्म की शुरूआत होती है और अपने मे विशेष स्थिरता करने से धर्म की वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्रश्न ४६९—आपने सात तत्वो के झूठे श्रद्धान को मिथ्यात्व कहा और सात तत्वो के सच्चे श्रद्धान को सम्यक्त्व कहा है और सात तत्वो के नाम भी बताये, परन्तु सात तत्वो की परिभाषा क्या-क्या है ?

उत्तर—(१) जीव अर्थात् आत्मा। वह सदैव ज्ञातास्वरूप पर से भिन्न और त्रिकाल स्थायी है। (२) अजीव—जिसमे चेतना-ज्ञानपना नही है, ऐसे पाँच द्रव्य हैं। इन पाँच मे से धर्म, अधर्म, आकाश और काल चार अरूपी हैं और एक पुद्गल स्पर्श, रस, गध, वर्ण सहित होने से रूपी है। (३) शुभ-शुभ भावो का उत्पन्न होना वह भाव-आस्रव है। (४) शुभाशुभ भावो मे अटकना वह भाव-बध है। (५)

शुभाशुभ भावो का रुकना नास्ति से भावसवर है। और शुद्धि का प्रगट होना अस्ति से भावसवर है। (६) अशुद्धि की हानि नास्ति से भाव निर्जरा है। और शुद्धि की वृद्धि अस्ति से वह भाव निर्जरा है। (७) परिपूर्ण अशुद्धि का अभाव नास्ति से भावमोक्ष है और परिपूर्ण शुद्धता भी प्रगटता अस्ति से भावमोक्ष है।

प्रश्न ४७०—सवर-निर्जरा और मोक्ष की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है और किसके आश्रय से नहीं होती ?

उत्तर—एक मात्र अपने निकाली भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सवर-निर्जरा-मोक्ष की प्राप्ति होती है। नौ प्रकार के पक्षो से कभी भी नही होती है इसलिए पात्र जीवो को एकमात्र भूतार्थ स्वभाव का ही आश्रय करना चाहिए ऐसा जिन, जिनवर और जिनवरवृषभो का आदेश है।

प्रश्न ४७१—सात तत्वो मे हेय, उपादेय, ज्ञेय-कौन-कौन से तत्त्व हैं ?

उत्तर—(१) अपना जीव-आश्रय करने योग्य परम उपादेय। (२) अजीव-ज्ञेय। (३) आस्रव-हेय। (४) बंध-अहितरूप। (५) सवर-निर्जरा-एकादेश प्रगट करने योग्य उपादेय। (६) मोक्षपूर्ण प्रगट करने योग्य उपादेय।

प्रश्न ४७२—क्या शुभभावो के आश्रय से कभी भी धर्म की प्राप्ति नही होती ?

उत्तर—कभी भी नही होती है। जैसे—लहसन खाने से कस्तूरी की डकार नही आती, उसी प्रकार शुभभावो से शुद्ध भावो की प्राप्ति कभी भी नही होती है।

प्रश्न ४७३—जो जीव शुभभावो से धर्म की प्राप्ति मानकर उसमे अधे हैं, उन्हे जिनेन्द्र भगवान ने क्या-क्या कहा है ?

उत्तर—(१) प्रवचनसार गा० २७१ मे 'ससारतत्व' कहा है।

(२) समयसार मे नपुसक, मिथ्यादृष्टि, पापी, अभव्य आदि कहा है। (३) पुरुपार्थ सिद्धि उपाय मे "तस्य देशना नास्ति' कहा है।

प्रश्न ४७४—शुभ अच्छा और अशुभ बुरा ऐसा मानने वाले जीव को कुन्दकुन्द भगवान ने क्या कहा है ?

उत्तर—प्रवचनसार गा० ७७ मे "घोर अपार ससार मे भ्रमण करते हैं" ऐसा कहा है।

प्रश्न ४७५—क्या करे तो धर्म की प्राप्ति का अवकाश रहे ?

उत्तर—सूक्ष्म रीति से विश्व, द्रव्य, पर्याय का निर्णय करे तो धर्म की प्राप्ति का अवकाश है। इसलिए अव यहाँ पर क्रम से विश्व, द्रव्य पर्याय का स्वरूप प्रश्नोत्तरो के रूप मे कहा जाता है।

भवपार होने का उपाय

शेष अचेतन सर्व छे, जीव सचेतन सार;
जाणी ज़ेने मुनिवरो, शीघ्र लहे भवपार ॥२६॥
जो शुद्धातम अनुभवो, तजी सकल व्यवहार;
जिनप्रभु अेमज भणे, शीघ्र थशो भवपार ॥३७॥
[योगमार]

जीव के अतिरिक्त जितने पदार्थ हैं वे सब अचेतन हैं, चेतना तो मात्र जीव ही है और वही सारभूत है; उसे जानकर परम मुनिवरो शीघ्र ही भवपार को प्राप्त होते हैं।

श्री जिनेन्द्रदेव कहते हैं कि हे जीव! सर्व व्यवहार को छोड़कर यदि तू निर्मल आत्मा को जानेगा तो शीघ्र ही भवपार हो जायेगा।

पाठ २

संसारमार्ग मोक्षमार्ग क्या है

छहढाला की दूसरी ढाल पर ३८ प्रश्नोत्तर

प्रश्न १ छहढाला की दूसरी ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—अज्ञानी जीव अनादिकाल से अगृहीत-गृहीत मिथ्या-दर्शनादि के कारण ही दु खी हो रहा है। कोई सयोग-सुख-दु ख का का कारण नही है, परन्तु अज्ञानी किसी पर वस्तु को इष्ट मानकर मिलाने मे लगा रहता है और किसी को अनिष्ट मानकर हटाने मे लगा रहता है। वह हटाने-मिलाने के भाव ही मिथ्यादर्शनादि है, वे ही दु ख के कारण हैं।

प्रश्न २—अगृहीत मिथ्यादर्शन किसे बताया है ?

उत्तर—जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व सरधै तिनमाँहि विपर्ययत्व। अर्थ—जीव, अजीव, आस्रव-वन्ध, सवर-निर्जरा-मोक्ष, ये सात तत्त्व प्रयोजनभूत तत्त्व हैं। इन प्रयोजनभूत सात तत्त्वो का उल्टा श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

प्रश्न ३—जीव तत्त्व किसे कहते हैं और जीव तत्त्व प्रयोजनभूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन पाया जावे वह जीव तत्त्व है और वह जीव तत्त्व एक मात्र आश्रय करने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्रश्न ४—अजीव तत्त्व किसे कहते हैं और अजीव तत्त्व प्रयोजन भूत तत्त्व किस अपेक्षा से हैं ?

उत्तर—जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नही है वे अजीवतत्त्व हैं और वे अजीव तत्त्व जानने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व हैं।

प्रश्न ५—आस्रव तत्त्व किसे कहते हैं और आस्रव तत्त्व प्रयोजन भूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है और आस्रव तत्त्व छोड़ने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजन भूत तत्त्व है।

प्रश्न ६—बन्ध तत्त्व किसे कहते हैं और बंध तत्त्व प्रयोजनभूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भावो मे अटकना वध तत्त्व है और वध तत्त्व छोडने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्रश्न ७—संवर तत्त्व किसे कहते है और सवर तत्त्व प्रयोजन भूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—शुद्धि का प्रगट होना सवर तत्त्व है और सवर तत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्रश्न ८—निर्जरा तत्त्व किसे कहते हैं और निर्जरा तत्त्व प्रयोजन भूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्त्व है और निर्जरा तत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्रश्न ९—मोक्ष तत्त्व किसे कहते हैं और मोक्ष तत्त्व प्रयोजनभूत तत्त्व किस अपेक्षा से है ?

उत्तर—सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्त्व है और मोक्ष तत्त्व पूर्ण प्रगट करने योग्य की अपेक्षा से प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्रश्न १०—जिस निज जीव तत्त्व का स्वरूप जानने से ही आस्रव बंध का अभाव होकर सवर-निर्जरा और मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है उस निज जीव तत्त्व का स्वरूप कैसा है ?

उत्तर—चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप। पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म काल, इनतै न्यारी है जीव चाल। (१) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। (२) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। (३) आंख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है। (४) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है।

(६) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव द्रव्य है। इनकी चाल मुझ जीव से भिन्न ही है (७) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य है, इनकी चाल मुझ जीव से भिन्न ही है। (८) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे धर्म-अधर्म-आकाश एकेक द्रव्य है, इनकी चाल मुझ जीव से भिन्न ही है। (९) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य है, इनकी चाल मुझ जीव से भिन्न ही है, क्योकि इन सब द्रव्यो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव सर्वथा भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्त्व का स्वरूप जानने-मानने से ही आस्रव-बध का अभाव होकर सवर-निर्जरा और मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न ११—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि (३) करै देह मे निज पिछान (४) इसका फल इन चारो बातो को मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ—इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। (२) प० कैलाशचन्द्र नामरूप पुद्गल द्रव्यो मे अपनापना मानकरि। (३) प० कैलाशचन्द्र जैन नाम रूप पुद्गल द्रव्यो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न १२—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करै आतम मे निज पिछान (४) इसका फल। इन चारो बातों को मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूं—इस आधार पर समझाइए ?

उत्तर—(१) मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूँ। (२) ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व मे अपनापना मानकरि। (३) ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न १३—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करै देह मे निज पिछान (४) इसका फल। इन चारों बातों

को मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है—इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। (२) उठना-बैठना, खाना-पीना आदि शरीर के कार्यों मे अपनापना मानकरि। (३) उठना-बैठना खाना-पीना आदि शरीर के कार्यों से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न १४—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करैं आतम में निज पिछान। (४) इनका फल। इन चार बातों को मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है-इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। (२) ज्ञाता-दृष्टा कार्य मे अपनापना मानकरि। (३) ज्ञाता-दृष्टा कार्य से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न १५—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करैं देह से निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों को विनमूरत अर्थात् आँख नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नहीं है इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) विनमूरत अर्थात आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है। (२) आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति हैं—ऐसा मानकरि। (३) आँख-नाक कान औदारिक आदि शरीरो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न १६—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करैं आतम मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों को बिनमूरत अर्थात् आंख-नाक कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है—इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) विनमूरत अर्थात आख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही हैं। (२) अतीन्द्रिय मेरी मूर्ति है—ऐसा मानकरि। (३) अतीन्द्रिय मूर्ति से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न १७—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करै देह में निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातो को चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशो मेरा एक आकार है इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (२) जडरूपी एकप्रदेशो पुद्गल के अनन्त आकारो मे अपनापना मानकरि। (३) जड रूपी एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न १८—(१) इस बात को जान (२) अविपरीत मानकरि। (३) करै आत्म मे निज पिछान (४) इसका फल। इन चार बातो को चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है, इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार हैं। (२) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक आकार मे अपनापना मानकरि। (३) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक आकार से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न १९—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करै देह मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों को अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है—इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है। (२) रुपया-पैसा सोना-चान्दी आदि से अपनापना मानकरि। (३) रुपया-पैसा, सोना-चादी आदि से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न २०—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करै आत्म मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों

को अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है—इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) अनूप अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है। (२) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ निज आत्मा मे अपनापना मान करि। (३) सर्वज्ञ स्वभावी निज भगवान आत्मा से ही अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २१ –(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकार। (३) करे देह में निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों को—मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं इन से न्यारी है मुझ जीव-चाल इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं, इनकी चाल मुझ से भिन्न है। (२) माँ-बाप, पुत्र-पुत्रियो, भगवान—गुरू आदि पर जीवो मे अपनापना मानकरि। (३) माँ-बाप, पुत्र-पुत्रियाँ, भगवान-गुरू आदि पर जीवो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न २२—(१) इस बात को जान (२) अविपरीत मानकरि (३) करै आतम से निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातों को-मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव हैं, इनसे न्यारी है मुझे जीव चाल। इस आधार पर समझाइए।

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव है इनकी चाल मुझ से भिन्न है। (२) निज आत्मा मे अपनापना मानकरि। (३) निज आत्मा से ही अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २३—(१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करै देह मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातो को-मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं इनसे न्यारा है मुझे जीव चाल-इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त

पुद्गल द्रव्य हैं, इनकी चाल मुझसे भिन्न है। (२) अनन्तानन्त पुद्गलो मे अपनापना मानकरि (३) अनन्तानन्त पुद्गलो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न २४—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करै आत्म में निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातो को मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, इनसे न्यारी है मुझ जीव चाल। इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं इनकी चाल मुझसे भिन्न है। (२) पुद्गलो से भिन्न निज आत्मा मे अपनापना मानकरि। (३) पुद्गलो से भिन्न निज आत्मा से ही अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २५ (१) ताको न जान। (२) विपरीत मानकरि। (३) करै देह मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातो को मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एकेक धर्म-अधर्म द्रव्य, अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य और एक प्रदेशी लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं, इनसे न्यारी है मुझ जीव चाल, इस आधार पर समझाइये।

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एकेक धर्म अधर्म द्रव्य, अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य और एक प्रदेशी लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य है, इनकी चाल मुझ से भिन्न है। (२) धर्म द्रव्य मुझे चलाता है, अधर्म द्रव्य मुझे ठहरता है, आकाश मुझ स्थान देता है और काल द्रव्य मुझे परिणमाता है—ऐसा मानकरि। (३) धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्यो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल निगोद है।

प्रश्न २६—(१) इस बात को जान। (२) अविपरीत मानकरि (३) करै आत्म मे निज पिछान। (४) इसका फल। इन चार बातो को मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एकेक धर्म-अधर्म द्रव्य अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य और एक

प्रदेशी लोक-प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं, इनसे न्यारी है मुझ जीव चाल, इस आधार पर समझाइये ?

उत्तर—(१) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे असख्यात प्रदेशी एकेक धर्म-अधर्म द्रव्य, अनन्त प्रदेशी एक आकाश द्रव्य और एक प्रदेशी लोक-प्रमाण असख्यात काल द्रव्य है, इनकी चाल मुझसे भिन्न है। (२) मुझ निज आत्मा का चलना-ठहरना अवगाहन और परिणमन मुझ आत्मा से ही है-ऐसा मानकरि। (३) निज भगवान आत्मा के क्रियावती शक्ति आदि अनन्त गुणो से अपनी पहिचान करता है। (४) इसका फल मोक्ष है।

प्रश्न २७—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्त्व का स्वरूप न जानने-मानने से क्या-क्या भयंकर भूलें उत्पन्न हुई ?

उत्तर—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्त्व का स्वरूप न जानने-मानने से प्रयोजनभूत साती तत्त्वो मे अनेक प्रकार की भूले उत्पन्न हुई।

प्रश्न २८—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्त्व का स्वरूप न जानने-मानने से पहली जीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की जो भयंकर भूलें उत्पन्न हुई; वे जीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भयंकर भूलें क्या-क्या हैं, और उनके अभाव का क्या उपाय है ?

उत्तर—मैं सुखी दुखी मैं रक राव, मेरे धन गृह गौधन प्रभाव। मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, वेरूप सुभग मूरख प्रवीण। विशेष अर्थ—विश्व की वस्तुओ मे ना सुख है और ना दुख है परन्तु अज्ञानी (१) शरीर की अनुकूलता मे मैं सुखी। (२) शरीर की प्रतिकूलता में मैं दु खी। (३) गरीब होने से मैं दु खी। (४) राजा होने से मैं सुखी (५) मेरा धन, गृह होने से मैं सुखी। (६) मेरा धन, गृह ना होने से मैं दु.खी। (७) मेरे गोधन प्रभाव होने से मैं सुखी। (८) मेरे गोधन प्रभाव ना होने से मैं दु खी। (९) मेरे पुत्र-स्त्री होने से मैं सुखी। (१०) मेरे पुत्र-स्त्री ना होने से मैं दुखी। (११) सबल होने से मैं सुखी, (१२) दीन होने से मैं

दु:खी। (१३) सुन्दर होने से मैं सुखी। (१४) मूरख होने से मै दु खी (१५) प्रवीण होने से मै सुखी। (१६) प्रवीण न होने से मैं दु खी। (१७) मेरे पर चला न जाने से मैं दु खी (१८) जल्दी-जल्दी चला जाने से मैं सुखी। इस-इस प्रकार की अनेक मान्यतायें जीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें हैं। ये जीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्त्व का स्वरूप जानने-मानने से ही तुरन्त दूर हो जाती है।

प्रश्न २९—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्त्व का स्वरूप न जानने-मानने से दूसरी अजीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की जो भयकर भूलें उत्पन्न हुई, वे अजीवतत्त्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें क्या-क्या हैं और उसके अभाव का उपाय क्या हैं ?

उत्तर—तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान ॥ विशेष अर्थ —(१) शरीर का सयोग होने से मैं उत्पन्न हुआ। (२) शरीर का वियोग होने से मैं मर जाऊँगा। (३) धन नष्ट होने से मेरा सब कुछ नष्ट हो गया। (४) धन आने से मेरा सब कुछ मिल गया। (५) शरीर इन्द्रियो मे अपनी मान्यता अनुसार परिवर्तन होने से अपने मे इष्टपना मानना। (५) शरीर-इन्द्रियो मे अपनी मान्यता अनुसार परिवर्तन न होने से अपने मे अनिष्टपना मानना। (७) शरीर मे क्षुधा-तृषा रूप अवस्था होने से मुझे क्षुधा-तृषा होती है, ऐसी मान्यता (८) शरीर मे गर्मी-सर्दी होने से मुझे सर्दी-गर्मी हो रही है ऐसी मान्यता। (९) शरीर का मोटा-पतला रूप अवस्था होने से अपने को मोटा-पतला मानने रूप मान्यता (१०) शरीर की रुखा-चिकना रूप अवस्था होने से अपने को रुखा-चिकना मानने रूप मान्यता (११) खट्टा-मीठा-कडुवा-कषायला आदि पुद्गल के रसगुण की पर्यायो मे मुझे खट्टा-मीठा अच्छा लगता है और कडुवा-कषायला बुरा लगता है ऐसी मान्यता (१२) सुगध-दुर्गन्ध पुद्गल के गन्ध गुण की पर्यायो मे मुझे सुगध सुहाती है और दुर्गन्ध

नही सुहाती है, ऐसी मान्यता। (१३) काला-पीला-नीला-लाल रूप पुद्गल के वर्ण गुण की पर्यायो मे मुझे कालापन अच्छा नही लगता और श्वेतपना अच्छा लगता है ऐसी मान्यता (१४) षड्ज-गधार आदि भाषावर्गणा की पर्यायो मे मुझे सगीत अच्छा लगता है और धर्म की बात अच्छी नही लगती है—ऐसी मान्यता। (१५) शरीर का कोई हिस्सा कटने से मैं कट गया ऐसी मान्यता। (१६) शरीर का हिस्सा जुडने से मैं जुड गया—ऐसी मान्यता। (१७) शरीर मे फोडा-फुन्सी होने से मुझे फोडा-फुन्सी हो गया, ऐसी मान्यता। ऐ सब है अजीव की अवस्थाऐ, मानता है आत्मा की। इस-इस प्रकार की मान्यताये अजीव तत्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूले है। ये अजीवतत्व सम्बन्धी जीव की भूले एक मात्र प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्व का स्वरूप जानने-मानने से तुरन्त दूर हो जाती है।

प्रश्न ३०—प्रश्न १० के अनुसार निज -ीवतत्व का स्वरूप न जानने-मानने से तीसरी आस्रवतत्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें क्या-क्या है और उनके अभाव का उपाय क्या है ?

उत्तर—रागादि प्रगट ये दुःख देन, तिन ही को सेवत गिनत चैन॥ विशेष अर्थ :—वास्तव मे जीव या अजीव कोई भी पदार्थ आत्मा को किंचित भी सुख-दुःख, सुधार, विगाड, इष्ट-अनिष्ट नही कर सकते, क्योकि अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नही हैं, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती है—ऐसा वस्तुस्वरूप है, परन्तु अज्ञानी मानता है कि (१) दूसरे जीव या अजीव मुझे सुख-दुःख देते हैं—ऐसी मान्यता (२) मैं दूसरे जीवो को तथा अजीवो को सुख-दुःख दे सकता हूँ—ऐसी मान्यता। (३) दूसरे जीव या अजीव मेरा सुधार-बिगाड कर सकते हैं, ऐसी मान्यता। (४) मैं दूसरे जीव या अजीवो का बिगाड-सुधार कर सकता हूँ—ऐसी मान्यता। (५) दूसरे जीवो या अजीवो मे इष्ट-अनिष्ट की कल्पना रूप मान्यता। (६) मिथ्यात्व-विकारी भावो को सुखकर

मानने रूप मान्यता। (७) शुभभाव को हितकर मानने रूप मान्यता। (८) दया-दान पूजादि भावो मे सुख रूप मान्यता (९) विकारी भावो मे स्वभाव मानने रूप मान्यता (१०) आस्रवभाव अशुचि-अपवित्र है परन्तु आस्रव भावो को शुचि पवित्र मानने रूप मान्यता। (११) आस्रव भाव जड स्वभावी है, परन्तु आस्रव भावो को चेतन स्वभावी मानने रूप मान्यता। (१२) आस्रव भाव दु ख के कारण हैं, परन्तु आश्रव भावो को सुख का कारण मानने रूप मान्यता (१३) आस्रवभाव विरुद्ध स्वभावी हैं, परन्तु आस्रवभावो को अविरुद्ध स्व-भावी मानने रूप मान्यता। (१४) आस्रवभाव अनित्य हैं, परन्तु आस्रव भावो को नित्य मानने रूप मान्यता। (१५) आस्रवभाव अशरणरूप हैं, परन्तु आस्रवभावो को शरण रूप मारने की मान्यता। (१६) आस्रव भाव अध्रुव है, परन्तु आस्रव भावो को ध्रुव मानने रूप मान्यता। (१७) आस्रवभाव वर्तमान मे दु खरूप हैं और भविष्य मे भी दु ख फल रूप है, परत्तु आस्रव भावो को वर्तमान मे सुख रूप और भविष्य मे भी नुखफल मानने रूप मात्यता। (१८) आस्रव भाव अधर्म रूप हैं, परन्तु आस्रव भावो को धर्म मानने रूप मान्यता। (१९) आस्रव भाव विपदा का कारण हैं, परन्तु आस्रव भावो को आत्म सम्पदा मानने रूप मान्यता। इस तरह की सब मान्यताये आस्रव तत्व सम्वन्धी जीव की भयकर भूले हैं। ये आस्रवतत्व सबधी जीव की भूले एक मात्र प्रश्न १० के अनुसार निज जीवतत्व का स्वरूप जानने-मानने से ही तुरन्त दूर हो जाती है।

प्रश्न ३१—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्व का स्वरूप न जानने-मानने से चौथी बन्धतत्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें क्या-क्या हैं, और उनके अभाव का उपाय क्या है ?

उत्तर—शुभअशुभ बन्ध के फल मझार, रति अरति करै निज-पद विस्तार॥ विशेष अर्थ —अघाति कर्मों के फल अनुसार सयोग-वियोग रूप अवस्थाये होती हैं, जो कि वास्तव मे व्यवहारनय से ज्ञान

का ज्ञेय है, परन्तु मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यादर्शनादि के कारण (१) सयोग को अनुकूल मानकर उसमे सुखीपने की मान्यता। (२) वियोग को प्रतिकूल मानकर दुःखीपने की मान्यता (३) सयोग-वियोग मे अनुकूल-प्रतिकूल की कल्पना द्वारा राग-द्वेष आकुलता रूप मान्यता। (४) धन, योग्य स्त्री, पुत्रादि का सयोग होने से रति करने की मान्यता। (५) रोग, निन्दा, निर्धनता, पुत्र-वियोग आदि होने से अरति करने रूप मान्यता। (६) पुण्य-पाप दोनो बन्धन कर्ता है, ऐसा न मानकर पुण्य मे हितकारी पने की मान्यता। (७) तत्त्व दृष्टि से पुण्य-पाप दोनो अहितकर ही है, परन्तु पुण्य-पाप मे हित-अहित रूप मान्यता (८) विश्व के पदार्थ व्यवहारनय से मात्र ज्ञान का ज्ञेय हैं, परन्तु उन्हे इष्ट-अनिष्ट मानने रूप मान्यता। (९) भगवान के सयोग मे अच्छेपने की मान्यता। (१०) स्त्री कुटुम्ब के सम्बन्ध मे अच्छेपने की मान्यता। (११) मै प्रात.काल बैठकर सामायिक करता हू, उसमे अच्छेपने की मान्यता। (१२) मैने अष्ट द्रव्य से पूजा की, उसमे अच्छेपने की मान्यता। (१३) मैंने सिद्ध चक्र का पाठ किया उसमे अच्छेपने की मान्यता (१४) मै शुद्ध रोटी खाता हूँ, उसमे अच्छेपने की मान्यता। (१५) मैने तीर्थो की यात्रा की, उसमे उत्तमपने की मान्यता। (१६) देव-गुरु की भक्ति के भाव मे उत्तमपने की मान्यता। (१७) अनशन के भाव मे अच्छेपने की मान्यता। (१८) ऊनोदर के भाव मे अच्छेपने की मान्यता। (१९) अहिसा के भाव मे अच्छेपने की मान्यता। (२०) ब्रह्मचर्य के भाव मे अच्छेपने की मान्यता। (२१) उपवास मे अच्छेपने की मान्यता। (२२) व्यापार मे जो हिसा होती है, उसमे अठीकपने की मान्यता। (२३) शास्त्र प्रवचन करने मे ठीकपने की मान्यता। (२४) २८ मूलगुणादि के भावो से उत्तमपने की मान्यता (२५) उपदेश देने के भाव से लाभ होता है—ऐसी मान्यता। (२६) जीवो को सुखी करने के भाव मे ठीकपने की मान्यता। (२७) जीवो को दुखी करने के भाव मे

अठीकपने की मान्यता। (२८) दान के भाव मे हितकरपने की मान्यता। इस-इस तरह की मान्यतायें वन्धतत्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें हैं। ये वन्धतत्व सम्बन्धी जीव की भूले एक मात्र प्रश्न १० के अनुसार निज जीवतत्व का स्वरूप जानने-मानने से ही तुरन्त दूर हो जाती है। जैन धर्म के समस्त उपदेश का सार यही है कि शुभाशुभ भाव ससार है। इसलिये पुण्य-पाप की रुचि छोडकर निज आत्मा के सम्मुख होने पर ही वन्धतत्व सम्वन्धी जीव की भूल का अभाव हो सकता है।

प्रश्न ३२—प्रश्न १० के अनुसार निज जीव तत्व का स्वरूप न जानने मानने से पाँचवी सवर तत्व सम्बन्धी जीव की भयकर भूलें उत्पन्न हुई। वे संवर तत्व सम्बन्धी जीव की भूलें क्या-क्या हैं, और उनके अभाव का उपाय क्या है?

उत्तर—आतम हित हेतु विराग ज्ञान, ते लखे आपको कष्टदान

विशेष अर्थ—निश्चय सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही जीव को हितकारी है। स्वरूप की स्थिरता द्वारा राग का जितना अभाव है, वह वैराग्य है और वह ही सुख का कारण है। परन्तु अज्ञानी की (१) उन्हे कष्ट दायक मानने रूप मान्यता। (२) पाप का चिन्तवन न करे और पुण्य के चिन्तवन को मनोगुप्ति मानने रूप मान्यता। (३) मौन धारण करने के भाव को वचन गुप्ति मानने रूप मान्यता। (४) गमनादि न करने को कायगुप्ति मानने रूप मान्यता। (५) देखकर चलने के भाव को ईर्या समिति मानने रूप मान्यता। (६) निर्दोष आहार लेने के भाव को एषणा समिति मानने रूप मान्यता। (७) क्रोध न करने के भाव को उत्तम क्षमा मानने रूप मान्यता (८) मान न करने के भाव को उत्तम मार्दव मानने रूप मान्यता। (९) माया न करने के भाव को उत्तम आर्जव मानने रूप मान्यता। (१०) गुणव्रत के भाव को सच्चा गुणव्रतपना मानने रूप मान्यता। (११) शिक्षाव्रत के शुभभावो को सच्चा शिक्षाव्रत मानने रूप मान्यता। (१२ रोटी न खाने के भाव को क्षुधापरिषह जय माननेरूप मान्यता। (१३)यात्रा

प्राप्ति कर अरहत दशा की प्राप्ति होती है। तत्पश्चात १४ वे गुण-स्थान का अभाव करके सादि अनन्त सिद्ध दशा की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न ३६—प्रश्न १० के अनुसार निज जीवतत्व का स्वरूप न जाने-न-माने और कुगुरु-कुदेव-कुधर्म का सेवन करे तो, क्या होगा ?

उत्तर—अनादिकाल से अगृहीत मिथ्यादर्शनादिक तो चला आ रहा है। वर्तमान मे कुदेव-कुगुरु-कुधर्म का सेवन करके मिथ्यात्वादि की पुष्टि करके निगोद मे चला जावेगा, जहाँ कभी तत्व के विचार का अवकाश भी न रहेगा। आचार्य कल्प प टोडरमल जी ने कहा है कि "सा हे भव्यो किंचित् मात्र लोभ से या भय से कुदेवादिक का सेवन करके जिससे अनन्त काल पर्यन्त महादुःख सहना होता है ऐसा मिथ्यात्व भाव करना योग्य नही है। जिनधर्म मे यह तो आम्नाय है कि पहले बडा पाप छुडाकर फिर छोटा पाप छुडाया है। इसलिये इस मिथ्यात्व को सप्तव्यसनादि से भी बडा पाप जानकर पहले छुडाया है। इसलिये जो पाप के फल से डरते है, अपने आत्मा को दुःख समुद्र मे नही डुबाना चाहते, वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोडो।

प्रश्न ३७—हमे चारो गतियो मे घूमकर निगोद में न जाना पड़े और अगृहीत-गृहीत मिथ्यात्वादि का अभाव करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रम से श्रेणी माडकर मोक्ष की प्राप्ति हो, इसका क्या उपाय है ?

उत्तर—जैसा जीव तत्व का स्वरूप छहढाला मे समझाया है—ऐसा जानते-मानते ही अगृहीत-गृहीत मिथ्यात्वादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रमश निर्वाण की प्राप्ति हो।

प्रश्न ३८—इन ३७ प्रश्नो का सार क्या है ?

उत्तर—सबसे प्रथम प्रयोजनभूत साततत्वो का और निज जीव तत्व का निर्णय करके धर्म की प्राप्ति करना चाहिए, ताकि अनादि-काल के दुःख का अभाव करके मोक्ष सुख का भागी बने।

छहढाला की तीसरी ढाल

आतम को हित है सुख सो सुख आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न ताते शिवमग लाग्यो चहिये।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण शिव मग सो द्विविध विचारो।
जो सत्यारथ रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो।१।
पर द्रव्यन तैं भिन्न आप मे, रुचि सम्यक्त्व भला है।
आप रूप को जानपनो सो, सम्यक ज्ञान कला है।
आप रूप मे लीन रहे थिर, सम्यक-चारित्र सोई।
अब व्यवहार मोक्षमग सुनिये, हेतु नियत को होई।२।
जीव अजीव तत्व अरु आस्रव, बंधरु संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिन को, ज्यो को त्यो सरधानो।
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो।
तिनको सुन सामान्य विशेषं, दृढ प्रतीत उर आनो।३।
बहिरातम अंतर-आतम, परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीव को एक गिने, बहिरातम तत्व मुधा है।
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर-आतम ज्ञानी।
द्विविध संग बिन शुधउपयोगी, मुनि उत्तम निज ध्यानी।४।
मध्यम अंतर आतम हैं जे, देश-व्रती अनगारी।
जघन कहे अविरत-समदृष्टी, तीनो शिव-मग-चारी।
सकल निकल परमातम द्वैविध, तिन मे घाति निवारी।
श्री अरहंत सकल परमातम, लोका-लोक निहारी।५।
ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल-वर्जित सिद्ध महंता।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें सर्व अनंता।

बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर-आतम हूजै।
परमातम को ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजै।६।

चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं।
पुद्गल पचवरण रस गध दो फरस वसू जाके हैं।

जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्म द्रव्य अनरूपी।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन विन-मूर्ति निरूपी।७।

सकल द्रव्य को वास जास मे, सो आकाश पिछानो।
नियत वर्तना निशदिन सो, व्यवहार काल परिमानो।

यों अजीव अब आस्रव सुनिये, मन वच काय त्रियोगा।
मिथ्या अविरत अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा।८।

ये ही आतम को दुख कारण, ताते इनको तजिये।
जीव प्रदेश बधे विधिसो सो, बधन कबहु न सजिये।

शम दम ते जो कर्म न आवे, सो सवर आदरिये।
तपबलतै विधि झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये।९।

सकल कर्मते रहित अवस्था, सो शिव थिर-सुखकारी।
इहि विध जो श्रद्धा तत्वन की, सो समकित व्यवहारी।

देव जिनेन्द्र गुरु परिगह विन, धर्म दया-जुत सारो।
येहू मान समकित को कारण, अष्ट अग जुत धारो।१०।

वसु मद टारि निवारि त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष बिना, सवेगादिक चित पागो।

अष्ट अग अरु दोष पच्चीसो, तिन संक्षेपै कहिये।
विन जानेतै दोष गुणन को, कैसे तजिये गहिये।११।

जिन वच मे शंका न धारि वृष, भव-सुख बांछा भानै।
मुनितन मलिन न देख घिनावै, तत्व कुतत्व पिछाने।
निजगुण अरु पर औगुण ढाके, वा निज-धर्म बढावै।
कामादिक कर वृषतैं चिगते, निज-परको सुदिढावै।१२।
धर्मीसो गौ-बच्छ प्रीतिसम, कर जिन-धर्म दिपावै।
इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावै।
पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै।
मद न रूपको मद न ज्ञान को, धन बल को मद भाने।१३।
तप को मद न मद न प्रभुता को, करै न सो निज जाने।
मद धारै तो यही दोष वसु, समकित को मल ठाने।
कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की, नहिं प्रशंस उचरे है।
जिनमुनि जिनश्रुत बिन कुगुरादिक, तिन्हे न नमन करै है।१४।
दोषरहित गुणसहित सुधी जे सम्यकदरश सजे हैं।
चरित मोहवश लेश न संयम, पै सुरनाथ जजै हैं।
गेही पै गृह मे न रचै ज्यो, जल मे भिन्न कमल है।
नगर—नारिको प्यार यथा, कादे मे हेम अमल है।१५।
प्रथम नरक बिन षट-भू ज्योतिष, वान भवन षंड नारी।
थावर विकलत्रय पशु मे नहिं, उपजत सम्यक्धारी।
तीनलोक तिहुकाल माहिं नहि, दर्शन सो सुखकारी।
सकल धर्म को मूल यही इस-बिन करनी दुखकारी।१६।
मोक्ष महल की परथम सीढी, या बिन ज्ञान चरित्रा।
सम्यक्ता न लहै सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा।
'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै।१७।

छहढाला की तीसरी ढाल के प्रश्नोत्तर

प्रश्न १—आत्मा का भला किसमे है ?

उत्तर—'आतम को हित है सुख' अर्थात् आत्मा का भला सुख की प्राप्ति मे है।

प्रश्न २—सुख किसे कहते हैं ?

उत्तर—'सो सुख आकुलता विन कहिये' आकुलता रहित, चिन्ता रहित, क्लेश रहित, झझट रहित, वस्तु स्वरूप की सच्ची समझ को सुख कहते हैं।

प्रश्न ३—दुख किसे कहते हैं ?

उत्तर—आकुलता, चिन्ता, क्लेश, झझट, वस्तु स्वरूप की उल्टी समझ को दु ख कहते है।

प्रश्न ४—दुःख का अभाव होकर सुख की प्राप्ति का उपाय जिनवाणी में क्या और कहाँ-कहाँ वतलाया है ?

उत्तर—(१) वहाँ या तो अपने रागादिक दूर हो, या आप चाहे उसी प्रकार सर्व द्रव्य परिणति हो तो आकुलता मिटे, परन्तु सर्वद्रव्य तो इसके आधीन नही हैं। सर्व कार्य जैसे यह चाहे वैसे ही हो, अन्यथा न हो, तव यह निराकुल रहे, परन्तु यह तो हो ही नही सकता, क्योकि किसी द्रव्य का परिणमन किसी द्रव्य के आधीन नही है, (ऐसा जाने-माने तो रागादिक उत्पन्न ही नही होगे) इसलिये अपने रागादिक दूर होने पर निराकुलता हो, सो यह कार्य वन सकता है, क्योकि रागादिक भाव आत्मा के स्वभाव भाव तो हैं नही, उपाधिकभाव हैं [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३०७] इसके साथ-साथ मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३०६ से ३०७ तक आत्मा का हित मोक्ष ही है' इसे पढियेगा।

(२) जैसा पदार्थो का स्वरूप है वैसा श्रद्धान हो जाये तो सर्व दु ख दूर हो जाये। पदार्थों का स्वरूप कैसा है ? अनादिनिधन वस्तुएँ

भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के अधीन नही है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२] (अ) इसके साथ-साथ मोक्ष-मार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५० से ५२ तक 'दर्शनमोह से दुःख और उसकी निवृत्ति' इसे पढियेगा। (आ) अपने-अपने सत्त्व कूं, सर्व वस्तु विलसाय। ऐसे चितवै जीव तब, परतै ममत्त्व न थाय। ऐसा अन्यत्व भावना मे बताया है।

(३) चेतन पुद्गल भिन्न है यही तत्त्व सक्षेप। अन्य कथन सब हैं इसी के विस्तार विशेष। [इष्टोपदेश श्लोक ५०] (अ) योगसार का श्लोक ३८ वाँ, ५५ वाँ देखिये। (आ) [सामायिक पाठ का २८ वाँ श्लोक] (इ) [प्रवचनसार श्लोक ६४] (ई) मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८० से ८२ तक 'मिथ्यादर्शन की प्रवृत्ति' प्रकरण को देखिये। (उ) देहादिक पर द्रव्य न मेरे, मेरा चेतन वाना जी (द्यानतराय) (ऊ) मैं भ्रम्यो अपनयो विसरि आप ···से लेकर···· भव घर-घर मरयो अनन्तवार [दौलतराम] (ए) समयसार कलश २३ देखिये। (ऐ) समयसार गाथा १९ से ३१ तक देखियेगा।

(४) 'सर्व द्रव्य पर्यायेषुकेवलस्य' [तत्त्वार्थसूत्र] (अ) सकल द्रव्य के गुण अनन्त, परजाय अनन्ता। जानै एकै काल, प्रगट केवली भगवन्ता॥ [छहढाला] (आ) जाकरि जैसे जाहि समय मे, जे होता जा द्वार। सो बनि है टरि है कुछ नाही, करि लीनो निरधार॥ [बुधजन] (इ) जो जो देखी वीतराग ने, सोसो हो सी वीरा रे। बिन देख्यो हो सी नही कोई, काहे होत अधीरा रे। [भैया] (ई) प्रवचन-सार गाथा २१, ३७, ४७, २०० की टीका सहित देखें। (उ) कार्ति-केय अनुप्रेक्षा मे धर्म अनुप्रेक्षा भावना की ३२१, ३२२, ३२३ गाथा देखिए। (ऊ) आश्चर्य है, केवली के केवलज्ञान को तो मानता नही है, व्यर्थ मे लौकिक ज्योतिष्यो का विश्वास करता है। यदि केवल ज्ञानी

के केवलज्ञान को माने तो पर मे कर्त्ता-भोक्ता आदि खोटी मान्यताओ का अभाव होकर निराकुलता हो।

(५) तास ज्ञान को कारन, स्व-पर विवेक वखानो। कोटि उपाय वनाय भव्य, ताको उर आनो। [छहढाला] (अ) मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३८ पर 'मिथ्यात्वरूप जीव की अवस्था' देखिये। (आ) मोक्ष-मार्ग प्रकाशक पृष्ठ २९३ मे "जिनमत मे तो यह परिपाटी है" · · से लेकर · ·· वहाँ स्व-पर भेदविज्ञानादिक का उपदेश दिया वह तो कार्यकारी भी वहुत है और समझ मे भी शीघ्र आता है। (इ) समयसार कलश १३१। (ई) प्रवचनसार गाथा ८९, ९० तथा १५४ देखिए।

(६) सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रसलीन। सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि रज रहस विहीन॥ [प० दौलतराम जी] (अ) प्रवचनसार गाथा २०० की टीका सहित देखिये। (आ) प्रमेयत्वगुण का रहस्य—जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला प्रथम भाग देखियेगा।

(७) तो कैसे त्यागी होता है ? पदार्थ अनिष्ट-इष्ट भासित होने से क्रोधादिक होते है, जव तत्त्व ज्ञान के अभ्यास से कोई इष्ट-अनिष्ट भासित न हो, तव स्वयमेव ही क्रोधादिक उत्पन्न नही होते, तव सच्चा धर्म होता है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २२९] (अ) मोक्ष-मार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८८ से ९१ तक मिथ्याचारित्र का स्वरुप, इष्ट-अनिष्ठ को मिथ्याकल्पना, राग-द्वेष की प्रवृत्ति। (आ) सुख दुख दाता कोई न आन, मोह राग-रुप दुःख की खान। निज को निज पर को पर जान, फिर दुख का नही लेश निदान। [आत्मकीर्तन]

(८) जो कुछ क्रिया है वह सव ही क्रियावान से (द्रव्य से) भिन्न नही है। [समयसार गाथा ८५ की टीका] (अ) समयसार कलश ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, देखो। (आ) समयसार कलश १९९ तथा २०० देखो। (इ) समयसार गाथा ३२४ से ३२७ तक देखो। (ई) प्रवचनसार गाथा ५५। (उ) आत्मावलोकन मे हरामजादीपना कहा है। (ऊ) पुरुषार्थ सिद्धयुपाय मे 'तस्यदेशना नास्ति' कहा है।

(९) 'चैतन्यमात्र तो आत्मा का लक्षण है और रागादिक बन्ध का लक्षण है, तथापि वे मात्र ज्ञेय-ज्ञायक भाव की अति निकटता से हे एक जैसे ही दिखाई देते हैं। इसलिये तीक्ष्ण बुद्धि रूपी छैनी को – जो कि उन्हे भेदकर भिन्न करने का शस्त्र है उसे—उनकी सूक्ष्म संधि को ढूंढकर उसमे सावधान (निष्प्रमाद) होकर पटकना चाहिए। उसके पडते ही दोना भिन्न-भिन्न दिखाई देने लगते हैं" [समयसार गाथा २९४ के भावार्थ से] (अ) समयसार गाथा २९३ तथा २९४ टीका सहित देखें। (आ) समयसार कलश २३ तथा १८१ देखो। (इ) समयसार गाथा ६९-७० का हैडिंग तथा टीका सहित। (ई) पुरुपार्थ सिद्ध्युपाय गाथा १४ देखो। (उ) इस प्रकार क्रोधादि के और आत्मा के निश्चय से एक वस्तुत्व नही है। समयसार गाथा ७१ तथा १८१ से १८३ तक देखिए। (ऊ) समयसार गाथा ७२ तथा ७४ देखिएगा।

(१०) जो अरहत को द्रव्यपने गुणपने और पर्यायपने जानता है वह अपने आत्मा को जानता है और उसका मोह अवश्य क्षय को प्राप्त होता है। [प्रवचनसार गाथा ८०] (अ) जिनशास्त्र द्वारा प्रत्यक्षादि प्रमाणो से पदार्थो को जानने वाले के नियम से मोह समूह क्षय हो जाता है। इसलिए शास्त्र का सम्यक् प्रकार से अध्ययन करना चाहिए। [प्रवचनसार गाथा ८६] (आ) प्रवचनसार गाथा ९३ देखिएगा। (इ) प्रवचनसार गाथा ९० की टीका सहित। (ई) समयसार गाथा ३ टीका सहित।

(११) सत द्रव्य लक्षणम्। उत्पाद व्यय ध्रौव्य युक्त सत्॥ [मोक्षशास्त्र] (अ) प्रवचनसार गाथा ९९ से १०२ तक देखिएगा। (आ) समयसार गाथा ३ देखिएगा। (इ) अस्तित्व-वस्तुत्व-द्रव्यत्व गुण का मर्म देखिए भाग पहले से।

(१२) चेतन को है उपयोगरूप विनमूरत चिन्मूरत अनूप। पुद्गल नभ धर्म-अधर्म काल, इनतें न्यारी है जीव चाल। [छहढाला]

(अ) प्रवचनसार गाथा ६० देखिए। (आ) समयसार गाथा ३७ [illegible] २६। (इ) समयसार गाथा २४।

(३) इस विश्व में जो कोई जानने मे आने वाला पदार्थ है वह समस्त ही विस्तार सामान्य समुदायात्मक और आयत सामान्य समुदायात्मक द्रव्य से रचित होने से द्रव्यमय है .... वास्तव मे यह सारे पदार्थो के द्रव्य गुण पर्याय स्वभाव की प्रकाशक पारमेश्वरी अवस्था भली-उत्तम पूर्ण योग्य है, दूसरी कोई नही। [प्रवचनसार गाथा ९३]। (अ) समयसार गाथा ३ देखिए।

प्रश्न ५—आकुलता कहाँ नहीं है ?

उत्तर—'आकुलता शिव मांहि न' अर्थात आकुलता मोक्षदशा मे नही है।

प्रश्न ६—मोक्ष किसे कहते हैं। और मोक्ष कैसे होता है ?

उत्तर—सम्पूर्ण अशुद्धि के अभाव को नास्ति से भाव मोक्ष कहते हैं। और सम्पूर्ण शुद्धि की प्राप्ति को अस्ति से भाव मोक्ष कहते हैं। और मोक्ष सवर-निर्जरा पूर्वक होता है।

प्रश्न ७—संवर-निर्जरा किसे कहते है और संवर-निर्जरा किसके अभाव पूर्वक होता है ?

उत्तर—(१) अशुद्धि का उत्पन्न ना होना नास्ति से भाव सवर है और शुद्धि का प्रगट होना अस्ति से भाव सवर है। (२) अशुद्धि की आंशिक हानि होना नास्ति से भाव निर्जरा है और शुद्धि की वृद्धि होना अस्ति से भाव निर्जरा है। (३) सवर-निर्जरा आस्रव-बध के अभाव पूर्वक होती है।

प्रश्न ८—आस्रव-बंध किसे कहते हैं। और आस्रव-बंध किसके निमित्त से होता है ?

उत्तर—शुभाशुभ विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व

है और शुभाशुभ विकारी भावो मे अटकना बधतत्त्व है। आस्रव-बध अजीवतत्त्व के निमित्त से उत्पन्न होता है।

प्रश्न ६—अजीव तत्व किसे कहते हैं। अजीव तत्त्व मे कौन-कौन आया ?

उत्तर—जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नही है वे अजीवतत्व हैं। मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म-अधर्म आकाश एकेक और लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। ये सब अजीव तत्त्व मे आए।

प्रश्न १०—आस्रव-बध का अभाव और सवर-निर्जरा-मोक्ष की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है ? और जीव तत्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—आस्रव-बध का अभाव और सवर-निर्जरा-मोक्ष की प्राप्ति एकमात्र निज जीवतत्त्व के आश्रय से होती है। जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन हो वह जीवतत्त्व है।

प्रश्न ११—क्या मोक्ष दशा कहते ही सातो तत्त्वो की सिद्धि हो जाती है ?

उत्तर—हाँ ! मोक्ष दशा कहते ही सातो तत्त्वो की सिद्धि हो जाती है।

प्रश्न १२—दुःख के अभाव और सुख को प्राप्ति के वास्ते क्या सातो तत्त्वो की जानकारी आवश्यक है ?

उत्तर—हाँ ! आवश्यक है—(१) तातैं जिनवर कथित तत्त्व अभ्यास करीजे। सशय-विभ्रम मोह त्याग आपा लख लीजे। [छहढाला चौथी ढाल। (२) दुःख का अभाव सुख की प्राप्ति जीवादिक का सत्य श्रद्धान करने से ही होती है।

[मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ७८]

प्रश्न १३—आकुलता मोक्ष दशा मे नहीं है, तो हमे क्या करना चाहिए ?

उत्तर—"तातैं शिवमग लाग्यो चहिए" इसलिए मोक्षमार्ग मे

लगना चाहिए।

प्रश्न १४—मोक्ष का मार्ग क्या है ?

उत्तर—"सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन शिवमग" सम्यग्दर्शन ज्ञा चारित्र इन तीनो की एकता ही मोक्षमार्ग है।

प्रश्न १५—सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र की एकता ही है—इसमे क्या बताना है ?

उत्तर—तीनो की एकता ही मोक्षमार्ग है और अन्य कोई मोक्ष मार्ग नही है—यह बताना है।

प्रश्न १६—मोक्षमार्ग कितने प्रकार का है ?

उत्तर—मोक्षमार्ग तो एक ही प्रकार का है, परन्तु उसका कथन दो प्रकार से किया जाता है।

प्रश्न १७—जब मोक्षमार्ग एक ही है, उसका कथन दो प्रकार से क्यो किया जाता है ?

उत्तर—यथार्थ मोक्षमार्ग एक ही है। उसका ज्ञान कराने के लिए उसका कथन दो प्रकार से किया जाता है, क्योकि ससारी को ससारी भापा से समझाए बिना यथार्थ मोक्षमार्ग का ख्याल आना अशक्य है इसलिए व्यवहारनय है, उसका विपय भी है, जानने योग्य है, परन्तु आश्रय करने योग्य नही है।

प्रश्न १८—निश्चय मोक्षमार्ग क्या है ?

उत्तर—"जो सत्यारथ रूप सो निश्चय" जो आत्मा के आश्रय से शुद्धि प्रगटी, वह वास्तविक मोक्षमार्ग है।

प्रश्न १९—व्यवहार मोक्षमार्ग क्या है ?

उत्तर—"कारण सो व्यवहारो" अर्थात् कारण जो निश्चय मोक्ष मार्ग का निमित्त कारण है उसे व्यवहार मोक्षमार्ग कहते हैं।

प्रश्न २०—क्या सम्यक्चारित्र निश्चय सम्यग्दर्शन हुए बिना हो सकता है ?

उत्तर—कभी भी नही हो सकता है, क्योकि सम्यक्चारित्र निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान पूर्वक ही होता है। अत निश्चय सम्यग्दर्शन हुए बिना अपने को चारित्र मानना मिथ्या है।

[समयसार गाथा २७३]

प्रश्न २१—क्या सम्यक्ज्ञान निश्चय सम्यग्दर्शन हुए बिना हो सकता है?

उत्तर—कभी भी नही हो सकता है, क्योकि जीव को निश्चय सम्यग्दर्शन के साथ ही सम्यक् भाव श्रुत ज्ञान होता है। अत सम्यग्दर्शन के बिना सब ज्ञान मिथ्या है।

[समयसार गाथा २७४ तथा ३१७]

प्रश्न २२—छहढाला मे ऐसा कहीं बताया है कि सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञानचारित्र मिथ्या है?

उत्तर—बताया है—तीसरा ढाल मे "मोक्ष महल की परथम सीढी या बिन ज्ञान चरित्रा।

प्रश्न २३—निश्चय व्यवहार किसको होता है, किसको नहीं होता?

उत्तर—सम्यग्दृष्टि को ही निश्चय व्यवहार होता है क्योकि निश्चय-व्यवहार यह दोनो सम्यक श्रुतज्ञान के अश हैं। मिथ्यादृष्टि को निश्चय-व्यवहार कुछ भी नही होता है, क्योकि उसको सम्यक-श्रुतज्ञान का अश प्रगट नही है।

प्रश्न २४—बहुत से लोग कहते है कि व्यवहार प्रथम होता है, निश्चय बाद में प्रगट होता है। क्या ऐसा कहने वाले झूठे ही हैं?

उत्तर—हाँ झूठे ही हैं, क्योकि निश्चय व्यवहार शुद्धोपयोग दशा मे एक साथ प्रगट होता है। [द्रव्य सग्रह गाथा ४७]

प्रश्न २५—क्या नय निरपेक्ष होते है?

उत्तर—(१) नय निरपेक्ष नही होते हैं। आप्त मीमासा श्लोक

१०८ मे लिखा है कि "निरपेक्षानया मिथ्या ,सापेक्षावस्तुतेऽर्थकृत" ऐसा आगम का वचन है (२) इसलिए अज्ञान दशा मे किसी भी जीव को निश्चय-व्यवहार नही हो सकता है। व्यवहाराभास अथवा निश्चयाभास हो सकता है। [मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३३३]

प्रश्न २६—व्यवहार मोक्षमार्ग कब और कैसे कहा जा सकता है ?

उत्तर—(१) किसी जीव ने सर्वज्ञ कथित नवतत्त्व आदि का विचार किया। उसका अभाव करके निश्चय रत्नत्रय प्रगट करे, उस जीव के नवतत्व विचार आदि को भूत नैगमनय से व्यवहार कारण कहा जाता है। [परमात्म प्रकाश अध्याय २ गाथा १४ की टीका] (२) सम्यग्दर्शन होने के वाद चारित्र गुण की पर्याय मे दो अश हो जाते हैं। उसमे शुद्धि अश निश्चय मोक्षमार्ग है और अशुद्धि अश को निमित्त व सहचारी होने की अपेक्षा से व्यवहार मोक्ष मार्ग कहा जाता है।

प्रश्न २७—मोक्षमार्ग कितने हैं ?

उत्तर—मोक्षमार्ग एक ही है, दो नही है।

प्रश्न २८—मोक्षमार्ग का कथन कितने प्रकार से किया जाता है ?

उत्तर—मोक्षमार्ग का कथन दो प्रकार से किया जाता है।

प्रश्न २९—सम्यग्दर्शन पर निश्चय-व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन एक ही प्रकार का है दो प्रकार का नही है, किन्तु सम्यग्दर्शन का कथन दो प्रकार से है। श्रद्धागुण की शुद्ध पर्याय तथा साथ मे अनन्तानुवधी क्रोधादि के अभावरूप स्वरूपाचरण चारित्र को जहाँ सम्यग्दर्शन निरूपण किया जाय वह तो निश्चय सम्यग्दर्शन है। तथा सच्चे देव गुरू शास्त्र का राग व सात तत्त्वो की भेदरूप श्रद्धा जो सम्यग्दर्शन तो नही है किन्तु निश्चय सम्यग्दर्शन का निमित्त व सहचारी है—उसे उपचार से सम्यग्दर्शन कहा जाय वह व्यवहार

सम्यग्दर्शन है। किन्तु व्यवहार सम्यग्दर्शन को सच्चा सम्यग्दर्शन माने वह तो श्रद्धा मिथ्या है क्योकि निश्चय-व्यवहार सम्यग्दर्शन का चारो अनुयोगों मे ऐसा ही लक्षण है। सच्चा निरूपण वह निश्चय सम्यग्दर्शन है और उपचार निरूपण वह व्यवहार सम्यग्दर्शन है निरूपण की अपेक्षा से सम्यग्दर्शन के दो प्रकार कहे है। किन्तु एक निश्चय सम्यग्दर्शन है और एक व्यवहार सम्यग्दर्शन है—इस प्रकार दो सम्यग्दर्शन मानना वह मिथ्या है।

प्रश्न ३०—श्रावकपने पर निश्चय—व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१—मुनिपने पर निश्चय-व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२—इर्यासमिति पर निश्चय-व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३—सम्यग्ज्ञान पर निश्चय-व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३४—सम्यक्चारित्र पर निश्चय व्यवहार लगाकर बताओ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५—मनोगुप्ति पर निश्चय व्यवहार लगाकर बताओ ?

उत्तर—प्रश्नोत्तर २६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६—निश्चय-व्यवहार सम्यग्दर्शनादि का स्वरूप छहढाला की तीसरी ढाल मे क्या बताया है ?

उत्तर—निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्वरूप—

परद्रव्यनतैं भिन्न आप मे, रुचि सम्यक्त भला है।
आपरूपको जानपनो सो, सम्यग्ज्ञान कला है॥
आपरूप मे लीन रहे थिर, सम्यक्चारित्र सोई।
अब व्यवहार मोख-मग सुनिये, हेतु नियत को होई॥

व्यवहार सम्यग्दर्शन का स्वरूप —

जीव अजीव तत्त्व अरु आश्रव बंधअरू संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यो को त्यो सरधानों॥
है सोई समकित विवहारी, अव इन रूप बखानो।
तिनको सुन सामान्य विशेषं, दृढ प्रतीति उर आनो॥

अर्थ—पर पदार्थों से त्रिकाल भिन्न ऐसे निज आत्मा का अटल विश्वास करना उसे निश्चय-सम्यग्दर्शन कहते हैं। आत्मा को पर वस्तुओ से भिन्न जानने से निश्चय सम्यग्ज्ञान कहा जाता है। तथा पर द्रव्यो का आलम्बन छोडकर आत्मस्वभाव मे एकाग्रता से मग्न होना वह निश्चय सम्यक्चारित्र कहलाता है। अब आगे व्यवहार मोक्ष मार्ग का कथन करते हैं क्योकि जब निश्चय मोक्षमार्ग हो तब व्यवहार मोक्षमार्ग निमित्त रूप से कैसा होता है वह जानना चाहिए।

भावार्थ—'जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व' जीवादि सात तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ? (१) जिसमे मेरा ज्ञान-दर्शन हो वह जीव-तत्त्व है, वह जीवतत्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (२) जिनमे मेरा ज्ञान-दर्शन नही है वे अजीव तत्व हैं, मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव द्रव्य, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य, धर्म-अधर्म आकाश एक-एक द्रव्य, लोकप्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं, ये सब द्रव्य जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (३) शुभाशुभ विकारी भावो का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है, आस्रव तत्त्व छोडने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है। (४) शुभाशुभ विकारी भावो मे अटकना वन्धतत्व है, बन्धतत्व छोडने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है। (५) शुद्धि का प्रगट होना सवरतत्व है, सवरतत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है। (६) शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्व है। एकदेश प्रगट करने योग्य निर्जरा तत्व प्रयोजनभूत तत्व है। (७) सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्व है, मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य

प्रयोजनभूत तत्व है ·····इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो को जानकर भूतार्थ नय से अपनी निज आत्मा का सच्चा श्रद्धान निश्चय सम्यग्दर्शन है······इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो को जानकर भूतार्थनय से अपनी निज आत्मा का सच्चा ज्ञान निश्चय सम्यग्ज्ञान है·· ···इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो को जानकर भूतार्थनय से अपनी निज आत्मा मे सच्चा आचरण निश्चय सम्यक्चारित्र है। ·· इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो का ज्यो-का-त्यो भेदरूप श्रद्धान व्यवहार सम्यग्दर्शन है।······इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो का ज्यो-का-त्यो भेदरूप ज्ञान व्यवहार सम्यग्ज्ञान है।·····इस प्रकार प्रयोजनभूत सात तत्वो का ज्यो-का-त्यो भेदरूप आचरण व्यवहार सम्यकचारित्र है।

प्रत्येक द्रव्य गुण तथा पर्याय का स्वभाव

प्रश्न ३७—(१) द्रव्य का नाम, (२) द्रव्य का लक्षण, (३) द्रव्य की संख्या, (४) द्रव्य की प्रदेश सख्या, (५) द्रव्य, काय अपेक्षा (६) द्रव्य मे भेद, (७) द्रव्य के सामान्य गुण, (८) द्रव्य के विशेष गुण, (९) द्रव्य की पर्याय। इन नौ के आधार से जीव-पुदगल-धर्म-अधर्म-आकाश और काल को समझाइये।

उत्तर—जीव द्रव्य—(१) जीव, (२) ज्ञान दर्शन उपयोगमयी (३) अनन्त, (४) असख्यात प्रदेशी, (५) अस्तिकाय, (६) ससारी-मुक्त, (७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) ज्ञान-दर्शन-चारित्र क्रियावती शक्ति-वैभाविक शक्ति आदि विशेष गुण, (९) एक व्यजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्याय सहित है।

पुद्गल द्रव्य—(१) पुद्गल, (२) स्पर्श-रस-गध-वर्ण सहित, (३) अनन्तानन्त, (४) एक प्रदेशी, (५) अस्ति है, काय नही है, व्यवहार से स्कध की अपेक्षा अस्तिकाय, (६) परमाणु-स्कध, (७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) स्पर्श-रस-गध-वर्ण-क्रियावती, वैभा-

विक शक्ति आदि विशेष गुण, (६) एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अनन्त अर्थ पर्याय सहित है।

धर्म द्रव्य—(१) धर्म, (२) गतिहेतुत्वादि, (३) एक, (४) असंख्यात प्रदेशी, (५) अस्तिकाय, (६) जीव और पुद्गल के चलने में निमित्त, (७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) गति हेतुत्वादि विशेष गुण (६) एकस्वभाव व्यंजन पर्याय और अनन्त स्वभाव अर्थ पर्याय सहित है।

अधर्म द्रव्य—(१) अधर्म, (२) स्थितिहेतुत्वादि, (३) एक (४) असंख्यात प्रदेशी, (५) अस्तिकाय, (६) जीव और पुद्गल के ठहरने में निमित्त, (७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) स्थिति-हेत्वादि विशेष गुण, (६) एक स्वभाव व्यंजन पर्याय और अनन्त स्वभाव अर्थ पर्याय सहित है।

आकाश द्रव्य—(१) आकाश, (२) अवगाहन हेतुत्वादि, (३) एक (४) अनन्त प्रदेशी, (५) अस्तिकाय, (६) लोकाकाश-अलोकाकाश, (७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) अवगाहन हेतुत्वादि विशेष गुण, (६) एक स्वभाव व्यंजन पर्याय और अनन्त स्वभाव अर्थ पर्याय सहित है।

काल द्रव्य—(१) काल, (२) परिणमनहेतुत्वादि, (३) लोकप्रमाण असंख्यात, (४) एक प्रदेशी, (५) अस्ति है, काय नहीं है, (६) लोकाकाश के एकेक प्रदेश पर स्थित है और प्रत्येक द्रव्य के परिणमन में निमित्त, ७) अस्तित्वादि सामान्य गुण, (८) परिणमन हेतुत्वादि विशेष गुण, (६) एक स्वभाव व्यंजन पर्याय और अनन्त स्वभाव अर्थ पर्याय सहित है।

इति समाप्तम्।

पाठ ३

विश्व

प्रश्न १—विश्व किसे कहते हैं ?

उत्तर—जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते है।

प्रश्न २—सख्या अपेक्षा विश्व किसे कहते है ?

उत्तर—जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक, काल द्रव्य लोक प्रमाण असख्यात है, इन सबके समूह को सख्या अपेक्षा विश्व कहते हैं।

प्रश्न ३—छह द्रव्यों के समूह को क्या कहते है ?

उत्तर—विश्व कहते हैं।

प्रश्न ४—क्या छह द्रव्यो के पिण्ड को विश्व कहते है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, क्योकि प्रत्येक द्रव्य पृथक-पृथक है।

प्रश्न ५—विश्व के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या है ?

उत्तर—ब्रह्माण्ड, लोक, दुनिया, वर्ल्ड, जगत आदि विश्व के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न ६—विश्व मे कितने द्रव्य है ?

उत्तर—छह हैं।

प्रश्न ७—हमे तो विश्व मे बहुत से द्रव्य दिखते है। आप छह ही क्यों कहतें हो ?

उत्तर—जाति अपेक्षा छह हैं वैसे बहुत से है।

प्रश्न ८—जाति अपेक्षा छह द्रव्य कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—जीव, पुदगल, धर्म-अधर्म, आकाश और काल हैं।

प्रश्न ९—वैसे बहुत से द्रव्य किस प्रकार है ?

उत्तर—(१) जीव-अनन्त। (२) पुद्गल अनन्तानन्त। (३)

धर्म एक। (४) अधर्म एक। (५) आकाश एक। (६) लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। इस प्रकार सख्या अपेक्षा द्रव्य बहुत से हैं।

प्रश्न १०—जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं इसको जानने से हमे पहला क्या लाभ है ?

उत्तर—केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते हैं।

प्रश्न ११—जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं इसको जानने से केवली भगवान के लघुनन्दन कैसे बन जाते हैं ?

उत्तर—जैसे—हमारी तिजोरी मे छह रुपए हैं, हमारे खाते मे भी छह रुपए है और हमारे ज्ञान मे भी छह रुपए हैं। उसी प्रकार केवल ज्ञानरूप तिजोरी मे जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं, जिनवाणी मे भी जाति अपेक्षा छह द्रव्य आए है और हमने भी जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने। इस अपेक्षा जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते है। इसको जानने से केवली भगवान के लघुनन्दन बन गए।

प्रश्न १२—जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं इसको जानने से दूसरा लाभ क्या रहा।

उत्तर—जैसे—हमारी पाकिट मे छह रुपए है। उन्हे कोई एक रुपया कहे तो वह झूठा है, उसी प्रकार हमने जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने। उन्हे कोई एक द्रव्य कहे, तो वह झूठा है—यह विश्व को जानने से दूसरा लाभ रहा।

प्रश्न १३—विश्व मे मात्र एक द्रव्य है ऐसा कौन मानता है।

उत्तर—विश्व मे एक मत है वह ऐसा मानता है।

प्रश्न १४—विश्व को जानने से तीसरा क्या लाभ रहा ?

उत्तर—जैसे—हमारी पाकिट मे छह रुपए है, उन्हे कोई पाँच रुपए कहे, तो वह झूठा है। उसी प्रकार हमने जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने उन्हे कोई पाँच द्रव्य कहे, तो वह झूठा है। विश्व को जानने से यह तीसरा लाभ रहा।

प्रश्न १५—विश्व मे पांच द्रव्य है ऐसा कौन मानता है ?

उत्तर—विश्व मे एक दूसरा मत है वह ऐसा मानता है।

प्रश्न १६—विश्व को जानने से चौथा लाभ क्या रहा ?

उत्तर—जैसे—हमारी पाकिट मे छह रुपए है, इसके बदले उन्हें कोई कम कहे या ज्यादा कहे तो सब झूठे है, उसी प्रकार हमने जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने। इसके बदले कोई कम कहे या ज्यादा कहे तो वह सब झूठे है। इस प्रकार विश्व को जानने से यह चौथा लाभ रहा।

प्रश्न १७—विश्व को जानने से पाँचवां क्या लाभ रहा ?

उत्तर—पर मे कर्त्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति। यह विश्व को जानने से पाँचवा लाभ रहा।

प्रश्न १८—जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते है इनको जानने से पर मे कर्त्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कैसे हो जाती है ?

उत्तर—केवली भगवान केवलज्ञान की एक समय की पर्याय मे तीन काल और तीन लोकवर्ती एव पदार्थो को (अनन्त धर्मात्मक सर्व-द्रव्य-गुण-पर्यायो को) प्रत्येक समय मे यथास्थित परिपूर्ण रूप से स्पष्ट और एक साथ जानते है। ऐसी मान्यता वाले को क्या पर पदार्थो मे कर्त्ता-भोक्ता की बुद्धि का भाव आवेगा ? आप कहेगे नही। जब कर्त्ता भोक्ता बुद्धि का भाव नही आया, तो दृष्टि कहाँ होगी ? आप कहेगे कि अपने त्रिकाली ज्ञायक स्वभाव पर। इस प्रकार विश्व को जानने से पर मे कर्त्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है। (यही बात प्रवचनसार गाथा ८० मे बताई है)

प्रश्न १९—शास्त्रो मे आता है कि जितना केवली जानता है उतना ही छदमस्थ साधक ज्ञानी जीव जानता है तो केवली के जानने मे और साधक ज्ञानी के जानने मे क्या कोई अन्तर नही है ?

उत्तर—जानने मे कोई अन्तर नही है, मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है।

प्रश्न २०—जितना केवली जानता है उतना ही साधक ज्ञानी जानता है मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है—यह बात शास्त्रो मे कहां-कहां आई है ?

उत्तर—(१) अष्ठसहस्त्री दशम परिच्छेद १०५ मे आया है कि "श्रुतज्ञान और केवलज्ञान सर्वतत्वो का प्रकाशन करने वाले हैं। मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है।" (२) मोक्षमार्ग प्रकाशक आठवाँ अधिकार पृष्ठ २७० मे आया है कि "प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष का ही भेद है, भासित होने मे विरुद्धता नही है" (३) आचार्यकल्प प० टोडरमल की रहस्य पूर्ण चिट्ठी मे आया है कि "जिस प्रकार केवली युगपत् प्रत्यक्ष जानते है उसी प्रकार श्रुतज्ञानी भी जाने ऐसा तो है नही, इसलिए प्रत्यक्ष-परोक्ष का विशेष जानना" (४) समयसार गा० १४३ की टीका तथा भावार्थ मे आया है कि "श्रुतज्ञानी भी केवली की भाँति वीतराग जैसे ही होते हैं ऐसा जानना" (५) समयसार कलश ११२ मे आया है कि "जब तक सम्यग्दृष्टि छदमस्थ है तब तक केवल ज्ञान के साथ शुद्धनय के बल से परोक्ष क्रीडा करता है, केवलज्ञान होने पर साक्षात् क्रीडा करता है"।

प्रश्न २१—केवली भगवान केवलज्ञान की एक समय की पर्याय में सर्व द्रव्यो के गुण-पर्यायो को प्रत्येक समय मे यथास्थित रूप से जानते हैं, ऐसा शास्त्रो मे कहाँ-कहाँ आया है ?

उत्तर—(१) छहढाला मे "सकल द्रव्य के गुण अनन्त, परजाय अनन्ता जानै एकै काल—प्रगट केवली भगवन्ता" (२) भगवान उमा स्वामी ने तत्वार्थसूत्र मे "सर्व द्रव्य पर्यायेषुकेवलस्य" ऐसा कहा है। (३) प्रवचनसार गाथा२१, ३७, ४७, २०० की टीका सहित मे आया है(४) अष्टपाहुड भाव पाहुड गा०१५० के भावार्थ मे टीका मे आया है। (५) महाबंध, महाधवला सिद्धान्तशास्त्र प्रथम भाग प्रकृति बंधाधिकार पृष्ठ २७ मे आया है। धवल पुस्तक १३ पृष्ठ ३४६ से ३५३ तक मे आया है। इस प्रकार सब दिगम्बर शास्त्रो मे आया है।

प्रश्न २२—जब केवली और साधक ज्ञानी सब जानते हैं तो पंडित कहे जाने वाले ऐसा क्यों कहते हैं—(१) केवली भगवान भूत और वर्तमान कालवर्ती पर्यायों को ही जानते हे और भविष्यत् पर्यायों को वे हों, तब जानते हे। (२) सर्वज्ञ भगवान अपेक्षित धर्मों को नहीं जानते हैं। (३) केवली भगवान भूत-भविष्यत पर्यायों को सामान्य रूप से जानते हे किन्तु विशेष रूप से नहीं जानते हे। (४) केवली भगवान भविष्यत पर्यायों को समग्ररूप से जानते हे, भिन्न-भिन्न रूप से नहीं जानते हे। (५) ज्ञान सिर्फ ज्ञान को ही जानता है (६) सर्वज्ञ के ज्ञान में पदार्थ झलकते हैं किन्तु भूतकाल तथा भविष्यत काल की पर्यायें स्पष्ट रूप से नहीं झलकतीं, आदि खोटी मान्यतायें क्यो पाई जाती हैं ?

उत्तर—विद्वान कहलाने वाले पडितो मे खोटी मान्यता यह बताती है कि उन्हे शीघ्र निगोद मे जाने की तैयारी है क्योकि—आदिनाथ भगवान से भरत जी ने पूछा था—भगवान भविष्य मे आपके समान तीर्थंकर होने वाला कोई जीव यहाँ है तो भगवान ने कहा था यह मारीच अन्तिम २४वाँ तीर्थंकर महावीर होगा। तो विचारो ! समवशरण मे कितने जोव थे भगवान को सभी जीवो की भूत-भविष्य वर्तमान पर्यायो का ज्ञान था। खोटी मान्यता वालो ने यह नही माना इसलिए निगोद के पात्र हैं। (२) भगवान नेमिनाथ से द्वारिका का भविष्य पूछा था। उन्होंने कहा था कि १२ वर्ष बाद आग लगेगी। खोटी मान्यता वाला ने यह भी नही माना इसलिए निगोद के पात्र हैं (३) दिगम्बर शास्त्र पचमकाल के आचार्यों के लिखे हुए हैं उनमे जीवो के दस-दस भवो का वर्णन आता है उसे भो नही माना इसलिए निगोद के पात्र हैं। (४) भरत जी ने कैलाशपर्वत पर भूत भविष्य—वर्तमान चौबीसी की स्थापना की थी। वह कहाँ से आई ? अज्ञानियों को जरा भी विचार नही आता हैं। (५) उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आदि छह-छह काल होते हैं और चौथे काल मे चौबीस तीर्थंकर होंगे, आदि

न मानने से उल्टी मान्यता वाले कोई भी हो, सब निगोद के पात्र है।

प्रश्न २३—सर्वज्ञदेव के विषय में श्री भगवान कार्तिकेय स्वामी ने धर्म अनुप्रेक्षा भावना मे क्या बताया है ?

उत्तर—वास्तव मे स्वामी कार्तिकेय आचार्य ने गाथा ३२१-३२२-३२३ मे जैनधर्म का गूढ रहस्य खोल दिया है। गा० ३२१ तथा ३२२ मे कहा है कि "जिस जीव को, जिस देश मे, जिस काल मे, जिस विधि से जन्म-मरण, सुख-दु ख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जिस प्रकार जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगे। सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश मे, उसी काल मे और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है। उसके निवारण करने के लिए इन्द्र या जिनेन्द्र तीर्थंकरदेव कोई भी समर्थ नही है। तथा गाथा ३२३ मे कहा है इस प्रकार निश्चय से सर्वद्रव्यो (जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल) तथा उन द्रव्यो की समस्त पर्यायो को सर्वज्ञ के आगमानुसार जानता है—श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है। और जो ऐसी श्रद्धा नही करता सदेह करता है, वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है वह प्रगट रूप मे मिथ्यादृष्टि है।

प्रश्न २४—विश्व को जानने से छठवां क्या लाभ है ?

उत्तर—क्रमबद्ध, क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि।

प्रश्न २५—विश्व को जानने से क्रमबद्ध, क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि कैसे हो गई ?

उत्तर—जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था को जानने से क्रमबद्ध, क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि हो जाती है।

प्रश्न २६—जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था क्या है ?

उत्तर—जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक, लोक प्रमाण असख्यात काल द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य मे अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण मे एक ही समय मे एक पर्याय का व्यय

एक पर्याय का उत्पाद और गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा प्रत्येक द्रव्य के गुण मे हो चुका है, हो रहा है और भविष्य मे होता रहेगा। यह जिनेन्द्रकथित विश्व व्यवस्था है। यही बात प्रवचनसार गा० ८६ मे बताई है।

प्रश्न २७—क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे भैया भगवतीदास ने क्या बताया है ?

उत्तर—जो जो देखी वीतराग ने सो सो होसी वीरारे।
बिन देख्यो होसी नहिं क्यो ही, काहे होत अधीरारे ॥
समयो एक बढै नहिं घटसी, जो सुख दु ख की पीरारे।
तू क्यो सोच करै मन कूडो, होय वज्र ज्यो हीरारे ॥

प्रश्न २८—क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे बुधजन जी ने क्या कहा है ?

उत्तर—जाकरि जैसे जाहि समय मे, जो हो तब जा द्वार।
सो बनि है टरि है कछु नाहिं, करि लीनों निरधार ॥
हमको कछु भय नारे जान लियो ससार।

प्रश्न २९—क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे मोक्ष पाहुड़ गाथा ८६ के भावार्थ मे क्या बताया है ?

उत्तर—सम्यग्दृष्टि के ऐसा विचार होय है—जो वस्तु का स्वरूप सर्वज्ञ ने जैसा जाना है, तैसा निरन्तर परिणमै है सो ही होय है। इष्ट अनिष्ट मान दु खी सुखी होना निष्फल है। ऐसे विचार तै दु ख मिटै है, यह प्रत्यक्ष अनुभवगोचर है।

प्रश्न ३०—रत्नकरण्ड श्रावकाचार श्लोक १३७ में सदासुख दास ने क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे क्या कहा है ?

उत्तर—बहुरि सम्यग्दृष्टि के ऐसा निश्चय है—जिस जीव के जिस देश मे, जिस काल मे, जिस विधान करके, जन्म-मरण लाभ या अलाभ सुख दु ख होना जिनेन्द्र भगवान दिव्य—ज्ञानकरि जान्या है तिस जीव के तिस काल मे, तिस विधान करके जन्म-मरण लाभ या

अलाभ नियमतै होय ही, ताहि दूर करने कू कोऊ इन्द्र-अहमिन्द्र-जिनेन्द्र समर्थ नाही है।

प्रश्न ३१—क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे प्रवचनसार गाथा २०० की टीका मे क्या कहा है ?

उत्तर—"एक ज्ञायक भाव का समस्त ज्ञेयो को जानने का स्वभाव होने से क्रमश प्रवर्तमान समूह वाले, अगाध स्वभाव और गभीर ऐसे समस्त द्रव्य मात्र को—मानो वे द्रव्य ज्ञायक मे उत्कीर्ण हो गये हो, चित्रित हो गये हो, भीतर घुस गये हो, कीलित हो गये हो, डूब गये हो, समा गये हो, प्रतिबिम्बित हो गये हो—इस प्रकार—एक क्षण मे ही जो (शुद्धात्मा) प्रत्यक्ष करता है।" ऐसा कहा है।

प्रश्न ३२—क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे प्रवचनसार गाथा ६६ से १०२ तक का सार क्या है ?

उत्तर—"जन्म क्षण" और "स्व अवसर" की बात आती है। वहाँ पर आकाश के प्रदेशो का उदाहरण देकर काल क्रम समझाया है। जैसे—जो प्रदेश जहा-जहाँ है, वह वही वही रहता है, उसमे आगे पीछे होना सम्भव नही, उसी प्रकार जो-जो पर्यायें जिस-जिस काल मे होनी है, वे-वे पर्यायें उसी-उसी काल मे होगी, उनका आगे-पीछे होना सम्भव नही है। देखिये इसमे क्रमबद्ध—क्रम नियमित की बात स्पष्टतया से आ जाती है।

प्रश्न ३३—केवली अपने को निश्चय से जानते हैं और पर को व्यवहार से जानते हैं। तब किसी का कहना है कि व्यवहार झूठा है—सो वे जानते ही नहीं; क्या यह ठीक है ?

उत्तर—ऐसे महानुभाव को जिनधर्म के रहस्य का पता नही है। क्योकि केवली भगवान स्वय को तन्मय होकर जानते हैं। परन्तु पर को जानते तो हैं, पर उनमे वे तन्मय होकर नही जानते—इस कारण उनका पर का जानना व्यवहार कहा है।

प्रश्न ३४—समयसार गाथा २ क्रमबद्ध पर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर—जीव-पदार्थ कैसा है ? "क्रमरूप और अक्रमरूप वर्तते हुए अनेक भाव जिसका स्वभाव होने से जिसने गुण-पर्यायें अंगीकार की हैं।" पर्याय क्रमवती और गुण सहवर्ती होता है। यहाँ पर जीव की क्रमबद्ध पर्याय की बात का ज्ञान कराया है।

प्रश्न ३५—समयसार गाथा ६२वीं मे क्रमबद्ध पर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर—"वर्णादिक भाव अनुक्रम से आविर्भाव और तिरोभाव को प्राप्त होती हुई ऐसी उन-उन व्यक्तियो (पर्यायो) द्वारा पुद्गल द्रव्य के साथ रहते हुए पुद्गल का वर्णादिक के साथ तादात्म्य प्रगट करते हैं।" यहाँ पर "अनुक्रम से आविर्भाव और तिरोभाव" प्राप्त करना कहकर अजीव की क्रमबद्ध पर्याय की बात का ज्ञान कराया है।

प्रश्न ३६—समयसार कर्ता-कर्म अधिकार की ७६-७७-७८ गाथा में क्रमबद्ध पर्याय के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—प्राप्य, विकार्य और निर्वृत्य ऐसे तीन प्रकार से कार्य की बात करके क्रमबद्ध पर्याय का ज्ञान कराया है। एक ही कार्य को तीन नाम से सम्बोधन करके क्रमबद्धपना सिद्ध किया है।

प्रश्न ३७—क्रमबद्ध, क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—केवली के समान ज्ञाता-दृष्टा बुद्धि प्रगट हो गई।

प्रश्न ३८—विश्व व्यवस्था के विषय में आचार्यकल्प पंडित टोडरमल ने क्या कहा है ?

उत्तर—"जैसा पदार्थों का स्वरूप है, वैसा ही श्रद्धान हो जावे तो सर्व ही दु ख मिट जावे।" (मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२)

प्रश्न ३९—मोक्ष मार्ग प्रकाशक मे पदार्थों का स्वरूप कैसा बताया है ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुऐं भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नही है। कोई पदार्थ किसी का परिणमाया परिणमता नही।"

प्रश्न ४०—अज्ञानी क्या करता है?

उत्तर—अज्ञानी अपनी इच्छानुसार परिणमाना चाहता है यह कोई उपाय नही, यह तो मिथ्यादर्शन है। अज्ञानी पदार्थो को अन्यथा मानकर अन्यथा परिणमाना चाहता है। इसमे जीव स्वय दुखी होता है।

प्रश्न ४१—भ्रम दूर करने का सच्चा उपाय क्या है?

उत्तर—पदार्थो को यथार्थ मानना और यह पदार्थ मेरे परिणमाने से परिणमेगे नही। ऐसा मानना यह ही दुख दूर करने का उपाय है। भ्रमजनित दुख का उपाय भ्रम दूर करना ही है। भ्रम दूर होने मे सम्यक् श्रद्धा होती है यह ही सच्चा उपाय जानना चाहिए।

प्रश्न ४२—क्या प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना स्वतन्त्र परिणमन करता है। ऐसा कहीं श्री समयसार मे भी आया है?

उत्तर—श्री समयसार गाथा ३ मे आया है कि "वे सब पदार्थ अपने द्रव्य मे अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मो के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नही करते हैं।"

प्रश्न ४३—क्या कहीं पूजा मे भी आया है कि प्रत्येक पदार्थ अपना-अपना स्वतन्त्र परिणमन करता है?

उत्तर—"जड चेतन की सब परिणति प्रभु, अपने-अपने मे होती है। अनुकूल कहे प्रतिकूल कहे, यह झूठी मन की वृत्ति है।

प्रश्न ४४—विश्व को जानने से सातवा लाभ क्या रहा?

उत्तर—"ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध का सच्चा ज्ञान"—विश्व को जानने से यह सातवाँ लाभ हुआ।

प्रश्न ४५—विश्व को जानने से ज्ञेय-ज्ञायक के सच्चा ज्ञान का लाभ कैसे हुआ ?

उत्तर—शास्त्रो मे आता है "लोक्यन्ते दृश्यन्ते जीवादि पदार्था यत्र स लोक" अर्थात् जहाँ जीवादि पदार्थ दिखाई देते हैं वह लोक है।

प्रश्न ४६—जैसा छह द्रव्यो का परिणमन होना है, वैसा ही होगा उसमे जरा भी हेर-फेर नहीं हो सकता। ऐसा भगवान ने कहा है और ऐसा ही वस्तु स्वरूप है तब अज्ञानी क्यो नहीं मानता ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद मे जाना अच्छा लगता है इसलिए अज्ञानी नही मानता है। (देखो कार्तिकेय अनुप्रेक्षा श्लोक ३२३ इस पाठ के प्रश्न २३ के उत्तर मे देखो)

प्रश्न ४७—छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहा है तो क्या वे सब आपस में मिले हुए हैं ?

उत्तर—आपस मे विल्कुल मिले हुए नही है, क्योकि हमने छह द्रव्यो के पिण्ड को विश्व नही कहा है। परन्तु छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहा है। इसलिए प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना कार्य करता है, किसी का किसी दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सम्वन्ध नही है।

प्रश्न ४८—छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं। इन छह द्रव्यो मे आपस मे कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर—एक क्षेत्रावगाही सम्बन्ध है। क्योकि समयसार गा० ३ मे कहा है कि "अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं तथापि वे सदा काल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।"

प्रश्न ४९—सम्वन्ध कितने प्रकार का है ?

उत्तर—तीन प्रकार का है, (१) नित्यतादात्म्य सम्बन्ध (२) अनित्यतादात्म्य सम्बन्व (३) एक क्षेत्रावगाही सम्बन्ध।

प्रश्न ५०—नित्यतादात्म्य सम्बन्ध किसका किसके साथ है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य का अपने-अपने गुणो के साथ नित्यतादात्म्य सम्बन्ध है।

प्रश्न ५१—अनित्यतादात्म्य सम्बन्ध किसका किसके साथ है ?

उत्तर—दया, दान, अणुव्रत, महाव्रतादि शुभाशुभ विकारीभावो के साथ अनित्यतादात्म्य सम्बन्ध है ।

प्रश्न ५२—एक क्षेत्रावगाही सम्बन्ध किसका किसके साथ है ?

उत्तर—आठकर्मो का तथा आँख-नाक आदि औदारिक शरीर के साथ एकक्षेत्रावगाही सम्बन्ध है ।

प्रश्न ५३—छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं, इनमे (छह द्रव्यो में) इन तीन सम्बन्धो मे से कौन सा सम्बन्ध है ?

उत्तर—एक क्षेत्रावगाही सम्बन्ध है ।

प्रश्न ५४—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं, इनमे कैसा सबंध है ?

उत्तर—नित्यतादात्म्य सम्बन्ध है ।

प्रश्न ५५—सोना, चाँदी आदि अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों के साथ इन तीनो में से कौनसा सम्बन्ध है ?

उत्तर—इन तीनो मे से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। जैसे पेड पर पक्षी आ-आ कर बैठते हैं और कोई एक घटे मे, कोई दो घटे मे अपने आप चले जाते हैं, उसी प्रकार आत्मा के साथ अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, अनन्त आत्मा, अन्तानन्त पुद्गल, सोना, चाँदी, दुकान, मकान, धर्म, अधर्म, आकाश, काल का किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है ।

प्रश्न ५६—जब अत्यन्त भिन्न पर पदार्थो से किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है तो यह अज्ञानी जीव क्यो पागल हो रहा है ?

उत्तर - मैं अनादिअनन्त ज्ञानस्वरूप भगवान आत्मा हूँ । इसका अनुभव-ज्ञान-आचरण न होने से अर्थात् पर वस्तुओ मे तेरी-मेरी मान्यता से ही पागल हो रहा है ।

प्रश्न ५७—यह जीव अनादिकाल से ससार मे दुखी होता हुआ क्यों भ्रमण करता है ?

उत्तर—विश्व का सच्चा ज्ञान ना होने से परिभ्रमण करता है ।

प्रश्न ५८—संसार परिभ्रमण का कारण जरा खोलकर समझाओ ?

उत्तर—इच्छा, आकुलता यह रोग है और इच्छा मिटाने का इलाज अज्ञानी विषय सामग्री मानता है। जब एक प्रकार की विषय सामग्री की प्राप्ति से एक प्रकार की इच्छा रुक जाती है और दूसरी तुरन्त खडी हो जाती है। परन्तु तृष्णा इच्छा रोग तो अतरग मे से नही मिटता है इसलिए दूसरी अन्य प्रकार की इच्छा और उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार सामग्री मिलाते-मिलाते आयु पूर्ण हो जाती है और इच्छा तो बराबर निरतर बनी ही रहती है। उसके बाद अन्य पर्याय प्राप्त करता है तब वहाँ उस पर्याय सम्बन्धी नवीन कार्यों की इच्छा उत्पन्न होती है। इस प्रकार अज्ञानी जीव अनादिकाल से चौरासी लाख योनियो मे भटकता रहता है।

प्रश्न ५९—ससार परिभ्रमण का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—विश्व के किसी भी पदार्थ से मेरा सबध नही है। ऐसा जानकर नित्यतादात्म्य सबध ऐसे अपने अभेद आत्मा का आश्रय ले तो ससार परिभ्रमण का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति होती है। अपने भूतार्थ स्वभाव के आश्रय के बिना ससार का अभाव नही हो सकता। इसलिए पात्र जीव को अपने स्वभाव का आश्रय करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करना परम कर्त्तव्य है।

प्रश्न ६०—महाव्रत, सोलह कारण का भाव, दया, दान, पूजा आदि का कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर—अनित्यतादात्म्य सम्बन्ध है अर्थात् नष्ट होने वाला सम्बन्ध है।

प्रश्न ६१—अनित्य तादात्म्य सम्बन्ध पूजा आदि भावों से मोक्ष होना माने या इनके करते-करते धर्म की प्राप्ति हो जावेगी, उसका फल क्या है ?

उत्तर—निगोद की प्राप्ति है। क्योकि "जो विमानवासी हूँ, थाय,

सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय। तहते चय थावर तन धरे, यो परिवर्तन पूरे करे।" ऐसा छहढाला मे कहा है।

प्रश्न ६२—ऐसी वस्तु का नाम बताओ, जिसका आत्मा से कभी अभाव ना हो और उसका फल क्या है ?

उत्तर—गुणो का कभी अभाव नही होता है—उन गुणो के अभेद रूप अपनी आतमा का आश्रय ले तो निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६३—जाति अपेक्षा छहद्रव्य के समूह को एक नाम से क्या कहते हैं ?

उत्तर—विश्व कहते हैं।

प्रश्न ६४—विश्व अर्थात् क्या है ?

उत्तर—समस्त पदार्थ—द्रव्य-गुण-पर्याय।

प्रश्न ६५—विश्व मे छह द्रव्य हैं यह कथन कैसा है ?

उत्तर—व्यवहारनय का है।

प्रश्न ६८—विश्व मे छह द्रव्य हैं इसका निश्चय कथन क्या है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने प्रदेशो मे रहता है यह निश्चय नय का कथन है।

प्रश्न ६७—विश्व को कौन जानता है और कौन नहीं जानता है ?

उत्तर—ज्ञानी जानते है, अज्ञानी नही जानते हैं।

प्रश्न ६८—विश्व को ज्ञानी जानते हैं अज्ञानी नहीं जानते। यह शास्त्रो मे कहाँ आया है ?

उत्तर—समयसार कलश टीका कलश पहले मे लिखा है कि "ससारी जीव के (मिथ्यादृष्टि जीव के) सुख नही, ज्ञान भी नही और उनका स्वरूप जानने वाले जीव को सुख नही, ज्ञान भी नही इसलिए 'सारपना' घटता नही है। शुद्ध जीव को (ज्ञानियो को) सुख है ज्ञान भी है इसलिए शुद्ध जीव को 'सारपना' घटता है।"

प्रश्न ६९—विश्व के जानने वालो को किस-किस नाम से कहा जाता है ?

उत्तर—(१) जिन, (२) जिनवर, (३) जिनवरवृषभ कहा जाता है।

प्रश्न ७०—जिन किसे कहते हैं ?

उत्तर—मिथ्यात्व और रागादि को जीतने वाले चौथे-पाँचवे-छठवे गुणस्थानवर्ती ज्ञानियो को जिन कहते है।

प्रश्न ७१—जिनवर किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो 'जिनो' मे श्रेष्ठ होते है वे जिनवर हैं। श्री गणधर देव भी जिनवर है।

प्रश्न ७२—जिनवरवृषभ किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो जिनवरो मे भी श्रेष्ठ होते हैं उन्हे जिनवरवृषभ कहते हैं। प्रत्येक तीर्थंकर भगवान को भाव अपेक्षा से जिनवरवृषभ कहते हैं।

प्रश्न ७३—द्रव्यलिगी मुनि को ११ अंग ६ पूर्व का ज्ञान होने पर भी क्या वह विश्व को नहीं जानता है ?

उत्तर—बिल्कुल नही जानता है।

प्रश्न ७४—द्रव्यलिगी मुनि ११ अग ६ पूर्व का ज्ञान होने पर भी विश्व को नही जानता है—यह शास्त्रो मे कहा लिखा है ?

उत्तर—समयसार गा० २७३-२७४-२७५ तथा गा० ३१७ देखो। क्योकि आत्मज्ञान हुए बिना ११ अग का ज्ञान मिथ्याज्ञान है और व्रतादि सब मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न ७५—क्या करे तो धर्म की प्राप्ति हो ?

उत्तर—स्व-पर का भेदज्ञान करके सम्यग्दर्शन प्राप्त करना चाहिए। क्याकि कहा है कि—

"तास ज्ञान को कारण स्व-पर विवेक बखानो" तथा—

"मोक्ष महल की प्रथम सीढी, या बिन ज्ञान चरित्रा।
सम्यक्ता न लहे, सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा॥

'दौल' समझ, सुन, चेत स्याने काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है जो सम्यक् नहिं होवे॥

प्रश्न ७६—श्री समयसार में "क्या करे तो धर्म की प्राप्ति हो" इसके लिए क्या बताया है ?

उत्तर—"एक मात्र भूतार्थ अपने त्रिकाली ज्ञायक का आश्रय ले तो धर्म की प्राप्ति हो" ऐसा बताया है।

प्रश्न ७७—जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसमें ज्ञान—दर्शनरूप शक्ति हो उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न ७८—जिसमें ज्ञान दर्शनरूप शक्ति हो उसे जीव द्रव्य कहते हैं। इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—मेरा स्वरूप ज्ञान-दर्शनरूप है। नौ प्रकार के पक्षों रूप नहीं है। ऐसा जानकर अपने ज्ञान-दर्शनरूप स्वभाव का आश्रय ले तो जिसमें ज्ञान-दर्शनरूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं, तब जाना और माना। पर पदार्थों की और विकारी भावों की ओर देखना नहीं रहा, मात्र अपनी ओर देखना रहा।

प्रश्न ७९—जीवतत्व का 'ज्यों का त्यों' श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—जीव तो शक्तिरूप से त्रिकाल एक ही प्रकार का है परन्तु पर्याय में तीन प्रकार का है। बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

प्रश्न ८०—बहिरात्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर—निजकारण परमात्मा को भूलकर जिसे नौ प्रकार के पक्षों में एकत्व का श्रद्धान, एकत्व का ज्ञान और एकत्व का आचरण हो उसे बहिरात्मा कहते हैं।

प्रश्न ८१—छहढाला में बहिरात्मा किसे बताया है ?

उत्तर—"देह जीव को एक गिने, बहिरातम तत्वमुधा है" अर्थ—(देह जीव को) शरीर और आत्मा को (एक गिने) एक मानते हैं वे

(बहिरातम) बहिरात्मा है और वे बहिरात्मा (तत्त्व मुधा) यथार्थ तत्वो से अजान अर्थात् तत्वमूढ मिथ्यादृष्टि हैं।

प्रश्न ८२—समयसार मे बहिरात्मा किसे कहा है ?

उत्तर—"नो कर्म कर्मजु "मैं" अवरू, "मैं" मे कर्म नोकर्म हैं।"
यह बुद्धि जब तक जीव की, अज्ञानी तब तक वो रहे।।१९।।

अर्थ—जब तक इस आत्मा को ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म, भावकर्म और शरीरादि नो कर्म मे "यह मैं हू" और मुझ मे (आत्मा मे) "यह द्रव्यकर्म-भावकर्म नोकर्म हैं" ऐसी बुद्धि है। तब तक यह आत्मा बहिरात्मा है।

प्रश्न ८३—छहढाला की दूसरी ढाल मे बहिरात्मा किसे कहा है?

उत्तर—प्रयोजनभूत सात तत्वो के उल्टे श्रद्धान, उल्टे ज्ञान और उल्टे आचरण वाले को बहिरात्मा कहा है।

प्रश्न ८४—बहिरात्मा कब तक कहलाता है ?

उत्तर—जब तक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति ना हो तब तक निगोद से लगाकर द्रव्यलिंगी मुनि तक सब बहिरात्मा कहलाते हैं।

प्रश्न ८५—अन्तरात्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो से भिन्न जिसे निज कारण परमात्मा की श्रद्धा, ज्ञान और आचरण हो उसे अन्तरात्मा कहते है।

प्रश्न ८६—छहढाला मे अन्तरात्मा किसे बताया है ?

उत्तर—जो शरीर और आत्मा को अपने भेद विज्ञान से भिन्न-भिन्न मानते हैं वे अन्तरात्मा है, ऐसा बताया है।

प्रश्न ८७—समयसार मे अन्तरात्मा किसे बताया है।

उत्तर—"जो कर्म का परिणाम अरु नोकर्म का परिणाम है।
सो नहिं करे जो मात्र जाणे, वो हि आत्मा ज्ञानि है।।७५।।

अर्थ—जो आत्मा इस भावकर्म, द्रव्यकर्म के परिणाम को तथा नोकर्म के परिणाम को नही करता किन्तु जानता है वह अन्तरात्मा है।

प्रश्न ८८—प्रयोजनभूत सात तत्वों के ऊपर से अन्तरात्मा की परिभाषा बताओ ?

उत्तर—भूतार्थ रूप से प्रयोजनभूत सात तत्वो के सच्चे श्रद्धान, सच्चे ज्ञान और सच्चे आचरण वाले को अन्तरात्मा कहते हैं।

प्रश्न ८९—अन्तरात्मा कहाँ से कहाँ तक कहलाते हैं ?

उत्तर—चौथे गुणस्थान से १२वे गुणस्थान तक सब अन्तरात्मा कहलाते हैं।

प्रश्न ९०—चौथे गुणस्थान से लेकर १२वें गुणस्थान तक सब अन्तरात्मा कहलाते है। इन सब में कुछ अन्तर है या समान है और कितने भेद हैं ?

उत्तर—जाति भेद की अपेक्षा अन्तर नही है शुद्धता को मात्रा मे समानपना नही है। अन्तरात्मा के तीन भेद हैं—उत्तम, मध्यम और जघन्य।

प्रश्न ९१—उत्तम अन्तरात्मा किसे कहते है ?

उत्तर—द्विविध सग विन शुद्ध उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी। अर्थ—१४ प्रकार के अन्तरग और १० प्रकार के वहिरग परिग्रह से रहित सातवे से १२वें गुणस्थान तक वर्तते हुए शुद्ध उपयोगी आत्म-ध्यानी मुनि उत्तम अन्तरात्मा हैं।

प्रश्न ९२—मध्यम अन्तरात्मा किसे कहते है ?

उत्तर—"मध्यम अन्तरआतम है जे देशव्रती अनगारी"

अर्थ—छठे गुणस्थानी भावलिंगी मुनि और दो कषाय के अभाव रूप पचम गुणस्थानी श्रावक मध्यम अन्तरात्मा है।

प्रश्न ९३ जघन्य अन्तरात्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर—"जघन कहे अविरत सम्यग्दृष्टि" अर्थ—व्रत रहित सम्यग्दृष्टि जीव अनंतानुबंधी के अभाव रूप स्वरूपाचरण चारित्र सहित जघन्य अन्तरात्मा है।

प्रश्न ९४—परमात्मा किसे कहते है ?

उत्तर—जैसा त्रिकाली स्वभाव है वैसा ही परिपूर्ण शुद्धि का प्रगट होना वह परमात्मा है। अरहत और सिद्ध परमात्मा है।

प्रश्न ९५—छहढाला मे परमात्मा किसे बताया है ?

उत्तर—(१) श्री अरहत परमात्मा वे सकल (शरीर सहित) परमात्मा हैं। (२) सिद्ध परमात्मा वे निकल (शरीर रहित) परमात्मा हैं। वे दोनो सर्वज्ञ होने से लोक-अलोक सहित सब पदार्थों का त्रिकालवर्ती सम्पूर्ण स्वरूप एक समय मे युगपत जानने-देखने वाले सबके ज्ञातादृष्टा हैं।

प्रश्न ९६—नियमसार मे परमात्मा किसे कहा है ?

उत्तर—निर्बाध अनुपम अरू अतीन्द्रिय, पुण्य-पाप विहीन हैं।
निश्चल निरालम्बन, अमर पुनरागमन से हीन है ॥१७८॥

प्रश्न ९७—योगसार मे परमात्मा को किन-किन नामो से सम्बोधन किया है ?

उत्तर—नौवे श्लोक मे बताया है कि "जो जीव निर्मल, निकल, (शरीर रहित) जिनेन्द्र, शिव, सिद्ध, विष्णु, बुद्ध और शाँत है। उसे जिनेन्द्र भगवान ने परमात्मा कहा है। ऐसा भ्राँति रहित होकर जानो।

प्रश्न ९८—परमात्मा के स्वरूप से क्या निश्चित होता है ?

उत्तर—जिस प्रकार सर्वज्ञ का ज्ञान व्यवस्थित है। उसी प्रकार उनके ज्ञान के ज्ञेय (सर्व द्रव्य छहो द्रव्यो की त्रैकालिक क्रमबद्ध पर्याये निश्चित व्यवस्थित हैं। कोई पर्याय उल्टी-सीधी अथवा अव्यवस्थित नही होती है। ऐसा सम्यग्दृष्टि जानता है और जिसकी ऐसी मान्यता नही होती, उसे स्व-पर पदार्थों का निश्चय न होने से शुभाशुभ विकार और पर द्रव्यो के साथ कर्त्ताबुद्धि-एकताबुद्धि होती ही है। इसलिए वह जीव बहिरात्मा है। ऐसा परमात्मा के स्वरूप को जानने से निर्णय होता है।

प्रश्न ९९—जीव त्रिकाल एक प्रकार का है। पर्याय मे तीन प्रकार का है। इतना जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—पर्याय मे अनादिकाल मे एक-एक समय करके वहिरात्मपना है और त्रिकाली स्वभाव एकरूप पडा है। ऐसा जानकर अपनी ओर दृष्टि करे तो वहिरात्मपने का अभाव होकर पर्याय मे अन्तरात्मपना प्रगट होता है। फिर एक रूप आत्मा मे परिपूर्ण लीनता करके परमात्मापना प्रगट होता है। ऐसा मानकर परमात्मापना प्रगट करना, यह जीव को जानने का लाभ है।

प्रश्न १००—जीव त्रिकाल एक प्रकार का है। पर्याय मे तीन प्रकार का है। ऐसा जानने वाला जीव क्या जानता है ?

उत्तर—मुझ एकरूप त्रिकाली भगवान के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन है, श्रावकपना है, मुनिपना है, श्रेणीपना है, अरिहंत-सिद्धपना है। पर के आश्रय से, नौ प्रकार के पक्षो के आश्रय से नही है। ऐसा जानने वाला जीव एक-मात्र अपनी ही ओर देखता है और क्रम से निर्वाण को प्राप्त करता है।

प्रश्न १०१—वहिरात्मा-अन्तरात्मा और परमात्मा के जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर—"वहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजै। परमातम को ध्याय निरन्तर जो नित आनन्द पूजै॥ अर्थ—वहिरात्मपना मिथ्यात्व सहित होने के कारण हेय है। इसलिए आत्म हितैषियो को चाहिये कि वहिरात्मपने को छोड़कर अन्तरात्मा वनकर परमात्मपना प्राप्त करें। क्योकि उससे सदैव सम्पूर्ण और अनन्त आनन्द (मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

प्रश्न १०२—जीव कितने है और कहाँ-कहाँ रहते हैं ?

उत्तर—जीव अनन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश मे रहते हैं।

प्रश्न १०३—जीव अनन्त हैं यह कब माना कहा जावेगा ?

उत्तर—(१) मैं जीव द्रव्य अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से हूँ। पर जीवो के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से नही हूँ। प्रत्येक जीव अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से हैं, दूसरे जीवो के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावो से नही हैं। ऐसा ज्ञान होने पर मैं दूसरे जीवों का भला या बुरा कर

सकता हूं, या दूसरा जीव मेरा भला या बुरा कर सकता है आदि प्रश्न उपस्थित नही होगे और दृष्टि स्वभाव पर होगी। तब जीव अनन्त हैं तभी माना सार्थक कहा जावेगा। (२) जीव अनन्त हैं हमारे ज्ञान मे भी अनन्त जीवो के द्रव्य-गुण-पर्याय पृथक्-पृथक् हैं ऐसा ज्ञान में आवे तब जीव अनन्त हैं, ऐसा माना।

प्रश्न १०४—जीव अनन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में हैं। इसमें सम्पूर्ण लोकाकाश मे हैं यह बात सच्ची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि जीव सम्पूर्ण लोकाकाश मे हैं।

प्रश्न १०५—जीव सम्पूर्ण लोकाकाश मे हैं। यह बात झूठी है तो सच्ची बात क्या है ?

उत्तर—वास्तव मे प्रत्येक जीव अपने-अपने असख्यात प्रदेशो में रहता है यह बात सच्ची है।

प्रश्न १०६—पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसमे स्पर्श-रस-गध-वर्ण यह गुण हो, उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न १०७—पुद्गल के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद है—एक परमाणु और दूसरा स्कध।

प्रश्न १०८—परमाणु किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसका दूसरा कोई भाग न हो सके ऐसे छोटे से छोटे पुद्गल को परमाणु कहते है।

प्रश्न १०९—स्कंध किसे कहते हैं ?

उत्तर दो अथवा दो से अधिक परमाणुओ के बध को स्कध कहते हैं।

प्रश्न ११०—स्पर्श की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—हल्का-भारी, ठडा-गरम, रूखा-चिकना, कडा-नरम इस प्रकार आठ पर्यायें हैं।

प्रश्न १११—शरीर मे हल्कापना क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न ११२—अज्ञानी शरीर मे हल्कापना को जानकर क्या करता है ?

उत्तर—राग-द्वेष करता है।

प्रश्न ११३—अज्ञानी शरीर मे हल्कापना को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर—शरीर ज्यादा हल्का होने पर द्वेष करता है शरीर का ज्यादा हल्कापन दूर होने पर राग करता है।

प्रश्न ११४—शरीर मे हल्कापना ज्यादा कम होने पर राग-द्वेष किस प्रकार हुआ ?

उत्तर—स्वय ज्ञान स्वभावी भगवान है। उसको भूलकर शरीर मे हल्कापना जो पुद्गलो का कार्य है। दूसरे के कार्यों मे लाभदायक नुकसान कारक मानना यह राग-द्वेष है।

प्रश्न ११५—स्वय ज्ञान स्वभावी होने पर पुद्गल के हल्कापना मे अपने को हल्का मानने का फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न ११६—शरीर के हल्कापने को आत्मा का मानना इसका फल निगोद है इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मैं अस्पर्श ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा हूँ। शरीर मे हल्कापना पुदगलो के स्पर्श गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं। ऐसा जानकर अपने अस्पर्श स्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले तो शरीर के हल्केपने मे अपनेपने की वुद्धि निगोद का कारण थी, उसका अभाव होकर मोक्ष का पथिक वने। तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मैं हल्का हूँ ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ११७—अज्ञानी शरीर मे ठंडापना जानकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११८—अज्ञानी शरीर मे रूखापना जानकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११९—अज्ञानी शरीर मे कड़ापना जानकर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२०—अज्ञानी शरीर मे गरमपने को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२१—अज्ञानी शरीर मे भारीपने जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न—१२२—अज्ञानी शरीर मे चिकनेपना जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२३—अज्ञानी शरीर मे नरमपना जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १११ से ११६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२४—रस गुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—खट्टा, मीठा, कडुवा, चरपरा, कषायला इस प्रकार पाँच पर्यायें है।

प्रश्न १२५—आम मे खट्टा-मीठा क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के रस गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १२६—अज्ञानी आम मे खट्टा-मीठा जानकर क्या करता है ?

उत्तर—राग-द्वेष करता है।

प्रश्न १२७—अज्ञानी आम मे खट्टा-मीठा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर—आम खाने मे खट्टा लगे तो द्वेष करता है और आम खाने मे मीठा लगे तो राग करता है।

प्रश्न १२८—आम खाने में खट्टा-मीठा मानने में राग-द्वेष किस प्रकार हुआ ?

उत्तर—स्वय ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा है। आम मे खट्टा-मीठा पुद्गलो के रस गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं। आत्मा आम को त्रिकाल मे खा नहीं सकता है परन्तु पर पर्यायो मे अच्छा-बुरा मानना यह राग-द्वेष है।

प्रश्न १२९—स्वयं ज्ञान स्वभावी होने पर आम के खट्टे-मीठे मे अपने को अच्छा-बुरा मानने का फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न १३०—आम के खट्टे-मीठे को आत्मा के लिए अच्छा-बुरा मानना इसका फल निगोद है, इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मैं अरस ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा हू। आम मे खट्टा-मीठा पुदगलो के रसगुण की विभाव अर्थ पर्यायें है। इनसे मेरा किसी भी अपेक्षा कोई सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अपने अरस स्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले तो आम के खट्टे-मीठे मे आत्मा मे जो अच्छे-बुरे की बुद्धि निगोद का कारण थी उसका अभाव होकर मोक्ष का पथिक बने। तब उपचरित असदभूत व्यवहारनय से मुझे मीठा आम अच्छा लगता है खट्टा अच्छा नही लगता है। ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १३१—मुझे रोटी अच्छी नहीं लगती हलुवा अच्छा लगता

है। अज्ञानी ऐसा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३२—मुझे खट्टा नींबू अच्छा लगता है मीठा नीबू नहीं अज्ञानी ऐसा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या हैं और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३३—मुझे नीम के पत्ते अच्छे नहीं लगते, आँवला अच्छा लगता है। अज्ञानी ऐसा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३४—मुझे मीठी रोटी अच्छी लगती है सूखी रोटी अच्छी नही लगती है। अज्ञानी ऐसा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३५—अज्ञानी खट्टे को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३६—अज्ञानी मीठा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३७—अज्ञानी कड़ुवे को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३८—अज्ञानी चरपरे को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३९—अज्ञानी कषायला को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १२५ से १३० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १४०—गध गुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—सुगध और दुर्गन्ध इस प्रकार दो पर्यायें है।

प्रश्न १४१—आम मे सुगंध-दुर्गंध क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के गंध के गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १४२—अज्ञानी आम मे सुगध-दुर्ग ध को जानकर क्या करता है ?

उत्तर—राग द्वेष करता है।

प्रश्न १४३—अज्ञानी आम में सुगध-दुर्गन्ध को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर—आम मे सुगन्ध को अच्छा मानता है और आम मे दुर्गन्ध को बुरा मानता है।

प्रश्न १४४—आम मे सुगंध-दुर्गन्ध मानने से राग द्वेष किस प्रकार हुआ ?

उत्तर—स्वय ज्ञानस्वभावी भगवान आत्मा है। आम मे सुगन्ध दुर्गन्ध पुद्गलो के गन्ध गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं। आत्मा का दुर्गन्ध-सुगन्ध का साथ त्रिकाल सम्बन्ध नही है। परन्तु आत्मा मे सुगन्ध-दुर्गन्ध मानना यह राग द्वेष है।

प्रश्न १४५—स्वय ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा होने पर आत्मा मे सुगंध-दुर्गन्ध मानने का फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न १४६—आम को सुगन्ध-दुर्गन्ध का आत्मा मे सुगंध-दुर्गन्ध मानना, इसका फल निगोद है। इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मैं अगन्ध ज्ञानस्वभावी भगवान आत्मा हूँ। आम मे सुगन्ध-दुर्गन्ध पुदगलो के गध गुण की विभाव अर्थ पर्यायें है। इनसे

मेरा किसी भी अपेक्षा कोई सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अपने अगन्ध ज्ञान स्वभावी आत्मा का आश्रय ले तो आत्मा मे सुगन्ध-दुर्गन्ध की बुद्धि निगोद का कारण थी, उसका अभाव होकर मोक्ष का पथिक बने। तब उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मुझे सुगन्ध अच्छी लगती है। दुर्गन्ध नही, ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १४७—शरीर मे दुर्गन्ध का अभाव होकर सुगन्ध होवे तो मेरे लिए अच्छा है। ऐसा जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है, उसका फल क्या है। और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १४८—कपड़ो में बदबू आती है इसको जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है इसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १४९—घर मे बदबू आ रही है, इसको जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है इसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १५०—अज्ञानी सन्तरो मे खुशबू को जानकर रागद्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १५१—अज्ञानी आम मे बदबू को जानकर राग-द्वेष करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १५२—अज्ञानी धूप मे खुशबू को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १४१ से १४६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १५३—वर्ण गुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—काला, पीला, नीला, लाल और सफेद इस प्रकार पांच पर्यायें है।

प्रश्न १५४—मैं काला हूं इसमे काला क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के वर्ण गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १५५—अज्ञानी 'मै काला हू' ऐसा जानकर क्या करता है?

उत्तर—रागद्वेष करता है।

प्रश्न १५६—अज्ञानी 'मैं काला हूं' ऐसा जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर—शरीर की काली अवस्था मे द्वेष करता है, शरीर की गोरी अवस्था मे राग करता है।

प्रश्न १५७—शरीर की काली-गोरी अवस्था में राग-द्वेष किस प्रकार हुआ ?

उत्तर—स्वय ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा है। शरीर मे काली-गोरी अवस्था पुद्गलो के वर्णगुण की विभाव अर्थ पर्याये हैं। काली गोरी आत्मा की अवस्था मानना यह राग-द्वेष है।

प्रश्न १५८—स्वयं ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा होने पर आत्मा मे काला-गोरापन मानने का फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न १५९—शरीर की काली-गोरी अवस्था को आत्मा की मानना इसका फल निगोद है, इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मैं अवर्ण ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा हू। शरीर मे काली-गोरी पुदगलो के वर्ण गुण की विभाव अर्थ पर्याये हैं। इनसे किसी भी अपेक्षा कोई सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अपने अवर्ण ज्ञान स्वभावी आत्मा का आश्रय ले तो आत्मा मे काली-गोरी की बुद्धि जो निगोद का कारण थी उसका अभाव होकर मोक्ष का पथिक बने तब अनुपचरित असदभूत व्यवहारनय से मैं काला हू, ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १६०—मुझे सफेद साडी अच्छी नहीं ;लगती, लाल रंग की साड़ी अच्छी लगती है। ऐसा जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६१—मुझे सिनेमा अच्छा लगता है, घर अच्छा नहीं लगता है। इसको जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६२—मुझे सुन्दर स्त्री अच्छी लगती है; काली कलूटी अच्छी नहीं लगती है। इसको,जानकर अज्ञानी राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६३ अज्ञानी काली साडी को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६४—अज्ञानी सफेद बुशर्ट को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६५—अज्ञानी हरी घास को जानकर राग-द्वेष कैसे है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६६—अज्ञानी नील की डब्बी को जानकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तरर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६७—अज्ञानी ग्रीन जूतो को पहनकर राग-द्वेष कैसे करता है ? उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १५४ से १५९ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६८—गुरू का वचन, भगवान की दिव्यध्वनि और शब्द क्या है ?

उत्तर—भाषा वर्गणा का कार्य है। गुरू का, भगवान का और किसी आत्मा का कार्य नही है।

प्रश्न १६९—शब्द कितने प्रकार का है ?

उत्तर—सात प्रकार का है। षडज, ऋषभ, गधार, मध्यम, पचम धैवत और निषाद।

प्रश्न १७०—मै मीठा वचन बोलता हूं। इसमे मीठा वचन क्या है ?

उत्तर—मीठा वचन भाषा वर्गणा का कार्य है।

प्रश्न १७१—अज्ञानी मैं मीठा वचन बोलता हू ऐसा जानकर क्या करता है ?

उत्तर—राग द्वेष करता है।

प्रश्न १७२—अज्ञानी मै मीठा वचन बोलता हूं। इसमे राग-द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर—कडुवा वचन निकलने पर द्वेष करता है और मीठा वचन निकलने पर राग करता है।

प्रश्न १७३—कडुवा वचन व मीठा वचन निकलने पर राग-द्वेष किस प्रकार हुआ ?

उत्तर—स्वय ज्ञान स्वभावी भगवान है। उसको भूलकर कडुवा वचन व मीठा वचन भाषा वर्गणा का कार्य है। दूसरे के कार्यो मे लाभदायक नुकसानकारक मानना—यह रागद्वेष है।

प्रश्न १७४—स्वयं ज्ञान स्वभावी होने पर भाषा वर्गणा के कडुवा व मीठा वचन को आत्मा के मानने का फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न १७५—भाषा वर्गणा के कडुवा-मीठा वचन को आत्मा के मानने रूप फल निगोद है। इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मैं अशब्द ज्ञान स्वभावी भगवान आत्मा हू। कड़ुवा व मीठा वचन भाषा वर्गणा का कार्य है। ऐसा जानकर अपने अशब्द स्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले तो कड़ुवा मीठा मे आत्मापने की बुद्धि निगोद का कारण थी। उसका अभाव होकर मोक्ष का पथिक बने। तब अनुपचरित असदभूत व्यवहारनय से मैं मीठा वचन बोलता हू ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १७६—अज्ञानी दिव्यध्वनि भगवान की ही है। ऐसा ज्ञान कर राग-द्वेष कैसे करता है उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १७० से १७५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १७७—अज्ञानी गधे के स्वर को सुनकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १७० से १७५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १७८—अज्ञानी कोयल के गाने को सुनकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १७० से १७५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १७९—अज्ञानी लडाई की बात सुनकर राग-द्वेष कैसे करता है। उसका फल क्या है और उसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर—प्रश्न १७० से १७५ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १८०—स्पर्शादि की २७ पर्यायो को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर—यह सत्ताईस पर्याये पुद्गल द्रव्य की हैं। इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अस्पर्श, अरस, अगध, अवर्ण, अशब्द स्वभावी अपनी आत्मा का आश्रय ले, तो यह २७ पर्यायो के जानने का लाभ है।

प्रश्न १८१—इन सत्ताईस पर्यायो से अपना सम्बन्ध माने, तो क्या होगा ?

उत्तर जंसे—माता का पुत्र के साथ जैसा सम्बन्ध है वैसा ही

सम्बन्ध माने तो ठीक है। उससे विरुद्ध सम्बन्ध माने तो निन्दा का पात्र होता है; उसी प्रकार पुद्गल की २७ पर्यायो के साथ व्यवहार से ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध है, ऐसा माने तो ठीक है। परन्तु २७ पर्यायो को ही स्वय अपने रूप माने, तो वह जिनवाणी माता की विराधना करने वाला निगोद का पात्र है।

प्रश्न १८२—मै मुंह धोता हूं, मै दातून करता हू, मै खाता हू, शरीर के चलने को मै चलता हूं, मै कपडे पहनता हूं, मेरा हाथ है, मेरा मुंह है, ऐसी मान्यता वाले जीव ने क्या किया ?

उत्तर—यह सभी कार्य पुद्गल के है। आत्मा के नही हैं। परन्तु अज्ञानी सभी जगह "मै" लगता है। यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि मैं (जीव) मिटकर पुद्गल हो जावे। परन्तु ऐसा नही हो सकता है। परन्तु ऐसी खोटी मान्यता वाले ने अपने अभिप्राय मे अपने जीव को नही माना और अपने अभिप्राय मे अपने आत्मा का अभाव माना और इसका फल परम्परा निगोद है।

प्रश्न १८३—मै पर का कर सकता हूं। ऐसा मान्यता वाले ने अभिप्राय मे आत्मा का नाश माना। यह बात शास्त्र मे कहाँआई है ?

उत्तर—समयसार गा० १०० के चार बोल है। उसके प्रथम बोल मे आया है कि "यदि आत्मा व्याप्य-व्यापक भाव से पर द्रव्य का कर्ता बने, तो अभिप्राय मे आत्मा के नाश का प्रसग उपस्थित होवेगा।"

प्रश्न १८४—'मैं उठा' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइए तथा क्या लाभ रहा यह भी बताइये ?

उत्तर—शरीर उठा व्याप्य और आत्मा व्यापक ऐसा मानने से अभिप्राय मे आत्मा के नाश का प्रसग उपस्थित होवेगा। इसलिए शरीर उठा व्याप्य और आहार वर्गणा की क्रियावती शक्ति व्यापक है। ऐसा माने तो व्याप्य-व्यापक का ज्ञान सच्चा है। जैसे शरीर पुदगल से उठा वैसे ही विश्व मे जितने कार्य दिखते हैं उन सबका

व्याप्य-व्यापकना पुदगल ही है ऐसा जाने-माने तो दृष्टि अपने-ज्ञायक भगवान पर हो।

प्रश्न १८५—'मैं सोया' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १८६—'मै हसा' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १८७—'मैं रोया' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १८८—'मैं बोला' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १८९—'मैं चला' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९०—'मैं ठहरा' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९१—'मैंने दातुन की' इस वाक्य पर व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९२—'मैंने कपडे पहने' व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९३—'मैंने व्यापार किया' व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९४—'मैंने दुकान खोली' व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९५—'मैंने मिठाई बनाई' व्याप्य-व्यापक लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न १८४ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९६—पुद्गलस्तिकाय का संधि अर्थ क्या है ?

उत्तर—पुद्=जुडना—मिलना, गल=बिखरना, अस्ति=होना, काय=इकट्ठा होना (समूह)।

प्रश्न १९७—'पुद्' अर्थात् जुड़ना, मिलना है इससे क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—किताब के पन्ने बिखरे पडे थे, वह 'पुद्' से जुडे है। रुपया बिखरा पडा था वह 'पुद्' से इकट्ठा हुआ है। चावल के दाने बिखरे पडे थे वह 'पुद्' से इकट्ठा हुए है। कमरे मे सामान इकट्ठा हुआ यह 'पुद्' से हुआ अर्थात् पुद्गल का कार्य है जीव का नही, यह तात्पर्य है।

प्रश्न १९८—'पुद्' को समझने से पात्र जीव को क्या लाभ हुआ ?

उत्तर—अज्ञानदशा मे अज्ञानी जीव यह मानता था कि मैंने गेहूँ इकट्ठे करे, मैंने माचिस की सीके इकट्ठी की, कूडा मैंने झाडू मे साफ किया, कपडे बिखरे पडे थे मैंने उन्हे इकट्ठे कर दिये। परन्तु जब यह ज्ञान हुआ कि यह पुद्=जुडना, मिलना पुद्गल का स्वभाव है मेरा नही। ऐसा जानने से अनादि की पर मे जुडाना, मिलाना आदि बुद्धि का अभाव होकर ज्ञाता-दृष्टा बुद्धि प्रगट हो गई यह लाभ हुआ।

प्रश्न १९९—'गल' अर्थात् बिखरना से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—लड्डू के दो टुकडे 'गल' से हुए हैं। एक कलम की दो कलम 'गल से हुई हैं। दूध उफन कर निकला वह 'गल' से हुआ है।

हजार का नोट जल गया वह 'गल' से हुआ है। घी जल गया वह 'गल' से हुआ। बिखरना, ढुलना आदि पुद्गल के गल के कारण होता है, जीव के कारण नही। यह बिखरना आदि पुद्गल का ही स्वभाव है। बिछुडना, पृथक होना आदि कार्य 'गल' स्वभाव के कारण होते हैं जीव से नही।

प्रश्न २०७—'गल' को समझने से पात्र जीव को क्या लाभ रहा ?

उत्तर—घी बिखर गया, चाय बिखर गयी इत्यादि अनादिकाल से अज्ञानी अपने से होना मानता था, उस खोटी बुद्धि का अभाव हो गया और बिखरना आदि 'गल' स्वभाव के कारण है मेरे से नही, मैं तो मात्र ज्ञायक हूँ ऐसा पात्र जीव को लाभ हुआ।

प्रश्न २०१—अस्ति अर्थात् होना से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—पुद्गलास्तिकाय मे अस्तिपना पुद्गल का पुद्गल से है, शरीर का अस्तिपना शरीर से है, जीव से नही—यह अस्ति से तात्पर्य है। परन्तु अज्ञानी 'मैं हूँ तो शरीर है, मैं हू तो शरीर का कार्य होता है, ऐसी मान्यता वाले जीव ने पुद्गल का अस्तिपना नही माना। पुद्गल का अस्ति (होनापना) पुद्गल से ही है मेरे से नही, तभी पुद्गल का अस्ति स्वभाव माना।

प्रश्न २०२—पुद्गल के अस्ति स्वभाव को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—सात प्रकार के भयो का अभाव होकर ज्ञाता-दृष्टापना प्रगट होना, पुद्गल के अस्ति स्वभाव को जानने का लाभ है।

प्रश्न—२०३—काय अर्थात् समूह से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—लड्डू बना, हलवा बना, दाल वनी, खीर बनी, वह पुद्गलास्तिकाय के 'काय' के कारण बनी, जीव से नही।

प्रश्न २०४—काय अर्थात् समूह को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—बुन्दी अलग-अलग थी तो मैंने लड्डू बना दिया, दस दवायें मिलाकर मैंने चूर्ण बनाया। घी चीनी सूजी से मैंने हलवा

वना दिया। ऐसी खोटी बुद्धि का अभाव हो गया, क्योकि यह सब कार्य 'काय' का है। पात्र जीव को ज्ञाता-दृष्टा बुद्धि प्रगट हो गई और मैं करता हूँ ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो गया।

प्रश्न २०५—पुद्गलास्तिकाय के विषय मे क्या ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर—(१) पुद् (२) गल, (३) अस्ति, (४) काय यह पुद्गल का स्वभाव है। यह पुद्गल का ही कार्य है। जीव का नही। पुद्गल का स्वभाव न मानकर मैं इनका करता हूँ उसने पुद्गलास्तिकाय को नही माना और अपने को भी नही माना।

प्रश्न २०६—पुद्गल कितने है और कहाँ-कहाँ रहते हैं ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य जीव से अनन्तानन्त गुणें हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश मे रहते हैं।

प्रश्न २०७—पुद्गल द्रव्य जीव से अनन्तानन्त गुणें हैं यह कब माना ?

उत्तर—एक परमाणु के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का दूसरे परमाणुओ के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से सम्बन्ध नही है। जैसे—किताब है इसमे वास्तव मे एक-एक परमाणु अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव मे ही रहकर कर कार्य कर रहा है। जब एक पुद्गल के दूसरे पुद्गल से सम्बन्ध नही है। तो जीव से पुद्गल का सम्बन्ध का प्रतिभास निगोद का कारण है।

प्रश्न २०८—तुद्गल द्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश मे रहते है यह बात साँची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि लोकाकाश से रहते हैं।

प्रश्न २०९—पुद्गल द्रव्य सम्पुर्ण लोकाकाश मे रहते हैं यह बात झूठी है तो साँची बात क्या है ?

उत्तर—प्रत्येक परमाणु अपने-अपने एक-एक प्रदेश मे रहता है यह बात साची है।

प्रश्न २१०—पुद्गल द्रव्य जीव से अनन्तानन्त गुणा हैं। यह बात शास्त्रो से जानी या और किसी प्रकार से भी जानी है ?

उत्तर—यह बात शास्त्रो मे तो है ही। परन्तु विचारो-एक आत्मा इसके साथ तैजस, कार्माण, औदारिकशरीर, भाषा, मन हैं यह पुद्गलो के स्कन्ध हैं इसमे अनन्त पुद्गल हैं। तो जीव एक, पुद्गल अनन्त हैं। तो जीव अनन्त तो पुद्गल परमाणु जीव से अनन्तानन्त गुणें सिद्ध हो गये।

प्रश्न २११—धर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो स्वय स्वत गमन करते हुए जीव और पुदगलो को गमन करने मे निमित्त हो, उसे धर्मद्रव्य कहते हैं। जैसे—स्वय गमन करती हुई मछली को गमन करने मे पानी।

प्रश्न २१२—धर्मद्रव्य को कब माना ?

उत्तर—प्रत्येक जीव और पुद्गल अपनी-अपनी क्रियावती शक्ति से चलता है धर्म द्रव्य ने नही चलता है। मैं (जीव) शरीर को नहीं चलाता और शरीर जीव को नही चलाता है। परन्तु दोनो अपनी-अपनी क्रियावती शक्ति से चलते हैं तो धर्मद्रव्य को निमित्त कहा जाता है।

प्रश्न २१३—मै दिल्ली से बम्बई आया, तो अज्ञानी कहता है कि शरीर तो अपनी क्रियावती शक्ति से आया है लेकिन मै निमित्त तो हूं ना; क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर—बिल्कुल गलत है क्योकि धर्मद्रव्य स्वय स्वत चलते हुए जीव और पुद्गलो को निमित्त होता है। अज्ञानी मिथ्यात्व के कारण ऐसा न मानकर, स्वय धर्मद्रव्य बन गया। अभिप्राय मे धर्मद्रव्य का नाश माना, इसका फल निगोद है।

प्रश्न २१४—धर्मद्रव्य कितने है और कहाँ-कहाँ रहते हैं ?

उत्तर—धर्मद्रव्य एक ही है और सम्पूर्ण लोकाकाश मे फैला हुआ है।

प्रश्न २१५—धर्मद्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश मे फैला हुआ है यह बात साँची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि सम्पूर्ण लोकाकाश मे फैला हुआ है।

प्रश्न २१६—धर्मद्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश मे फैला हुआ है वह बात झूठी है तो साँची बात क्या है ?

उत्तर—धर्मद्रव्य अपने असख्यात प्रदेशो मे फैला हुआ है यह बात साँची है।

प्रश्न २१७—अधर्मद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—स्वय स्वत गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमित जीव और पुद्गलो को स्थिर होने मे जो निमित्त हो, उसे अधर्म द्रव्य कहते हैं। जैसे पथिक को स्थिर रहने मे वृक्ष की छाया।

प्रश्न २१८—अधर्मद्रव्य को कब माना ?

उत्तर—प्रत्येक जीव और पुद्गल अपनी-अपनी क्रियावती शक्ति से ही ठहरता है अधर्म द्रव्य से नही ठहरता है। मैं (आत्मा) शरीर को ठहराता हूँ, शरीर जीव को ठहराता है ऐसा नही है। परन्तु जीव पुद्गल स्वय स्वत चलकर स्थिर होते हैं तव अधर्म द्रव्य निमित्त है, ऐसा ज्ञान हो तव अधर्म द्रव्य को माना।

प्रश्न २१९—मै सामायिक करने के लिए स्थिर होता हूं। अज्ञानी कहता है कि शरीर अपनी क्रियावती शक्ति के कारण स्थिर हुआ। मै स्थिर होने मे निमित्त तो हूं ना; क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर—विल्कुल गलत है। क्योकि अधर्म द्रव्य स्वय स्वत चलकर स्थिर हुए जीव पुद्गलो को निमित्त होता है। अज्ञानी मिथ्यात्व के कारण ऐसा न मानकर स्वय अधर्मद्रव्य वन गया। अपने अभिप्राय मे अधर्म द्रव्य का नाश माना, इसका फल निगोद है।

प्रश्न २२०—अधर्मद्रव्य कितने हैं और कहाँ-कहा रहते हैं ?

उत्तर—अधर्मद्रव्य एक ही है और सम्पूर्ण लोकाकाश मे फैला हुआ है ।

प्रश्न २२१—अधर्मद्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश में फैला हुआ है यह बात साँची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि सपूर्ण लोकाकाश में फैला हुआ है ।

प्रश्न २२२—अधर्मद्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाश में फैला हुआ है यह बात झूठी है तो साँची बात क्या है ?

उत्तर—अधर्मद्रव्य अपने असख्यात प्रदेशों मे फैला हुआ है । यह बात साँची है ।

प्रश्न २२३—अधर्मद्रव्य की व्याख्या मे कहा है कि "गतिपूर्वक स्थिति" करे उसे अधर्मद्रव्य निमित्त है, उसमे से यदि "गतिपूर्वक" शब्द निकाल दें तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर—जो गतिपूर्वक स्थिति करे, ऐसे जीव और पुद्गलो को ही अधर्मद्रव्य स्थिति में निमित्त है। यदि "गतिपूर्वक" शब्द निकाल दें तो सदैव स्थिर रहने वाले धर्म, आकाश और काल द्रव्यो को भी स्थिति मे अधर्मद्रव्य के निमित्तपने का प्रसग आवेगा ।

प्रश्न २२४—आकाश द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो जीवादिक पांच द्रव्यो को रहने का स्थान देता है उसे आकाश द्रव्य कहते हैं ।

प्रश्न २२५—आकाश के कितने भेद हैं ?

उत्तर—आकाश एक ही अखण्ड द्रव्य है। परन्तु उसमे धर्म-अधर्म द्रव्य स्थित होने से आकाश के दो भेद हैं—लोकाकाश और अलोकाकाश ।

प्रश्न २२६ लोक-अलोक का भेद किस कारण से है ?

उत्तर—धर्म, अधर्मद्रव्य होने से लोक-अलोक का भेद है । यदि

लोक मे धर्म-अधर्म द्रव्य ना होते, तो लोक-अलोक ऐसे भेद ही नही होते।

प्रश्न २२७—फर्स्ट क्लास के डिब्बे मे एक धनी बैठा है। कोई गरीब आदमी आता है बाबूजी गाड़ी मे कही भी जगह नहीं है मुझे भी जरा सी जगह दे दो। धनी आदमी कहता है कि चल-चल आगे। गरीब चारों तरफ चक्कर काटता रहा और गाड़ी ने सीटी दे दी, तब वह गरीब धनी आदमी से हाथ जोड़कर बोला बाबू जी मेरा बाप मर गया है मुझे पहुंचना जरूरी है। तब धनी कहता है कि आवो आवो, देखो हमने तुम्हे जगह दी है ना ?

उत्तर—देखो जगह देने मे निमित्त है आकाश द्रव्य। मानता है मैंने जगह दी। ऐसी मान्यता वाले जीव ने अभिप्राय मे आकाश को उडा दिया, इसका फल निगोद रहा।

प्रश्न २२८—आकाशद्रव्य कितने है और कहाँ-कहां रहते हैं ?

उत्तर—आकाश एक ही द्रव्य है और वह लोक-अलोक मे रहता है।

प्रश्न २२९—आकाशद्रव्य लोक-अलोक मे रहता है वह बात सांची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि लोक-अलोक मे रहता है।

प्रश्न २३०—आकाशद्रव्य लोक-अलोक मे रहता है, यह बात झूठी है तो सांची बात क्या है ?

उत्तर—आकाशद्रव्य अपने अनन्त प्रदेशो मे रहता है, यह बात साँची है।

प्रश्न २३१—कालद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—अपनी-अपनी अवस्थारूप से स्वय स्वत परिणमित होने वाले जीवादिक द्रव्यो का परिणमन मे जो निमित्त हो, उसे कालद्रव्य कहते हैं। जैसे कुम्हार के चाक को घूमने मे लोहे की कीली।

प्रश्न २३२—कालद्रव्य के कितने भेद हैं ?

उत्तर—निश्चयकाल और व्यवहारकाल दो भेद हैं।

प्रश्न २३३—कोई कहे, छहों द्रव्यों का परिणमन तो स्वयं अपने अपने से होता है। परन्तु मैं निमित्त हूं ना ?

उत्तर—छहो द्रव्यो का परिणमन स्वभाव है उसमे निमित्त है कालद्रव्य। लेकिन मिथ्यात्व के कारण अपने को निमित्त मानने वाला कालद्रव्य को उडाता है। उस जीव ने अभिप्राय मे कालद्रव्य को नही माना, यह भगवान की विराधना करने वाला निगोद का पात्र है।

प्रश्न २३४—कालद्रव्य कितने हैं और कहाँ-कहाँ पर रहते हैं ?

उत्तर—कालद्रव्य लोक प्रमाण असख्यात है और काल द्रव्य लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नो की राशि के समान अनादि-अनन्त स्थित हैं।

प्रश्न २३५—कालद्रव्य लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नों की राशि के समान स्थित हैं। यह बात सांची है या झूठी है ?

उत्तर—झूठी है, क्योकि व्यवहारनय से कहा जाता है कि काल द्रव्य लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नो की राशि के समान स्थित है।

प्रश्न २३६—कालद्रव्य लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नों की राशि के समान स्थित हैं। यह बात झूठी है तो सांची बात क्या है ?

उत्तर—वास्तव मे एक-एक का द्रव्य अपने-अपने एक-एक प्रदेश मे स्थित है। यह बात सांची है।

प्रश्न २३७—अजीव द्रव्य का 'ज्यों का त्यों' श्रद्धान क्या है ?

उत्तर—पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्य हैं इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। मात्र व्यवहार से ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध है। यह जानकर अपने स्वभाव की दृष्टि करके परि-

पूर्ण सिद्ध दशा की प्राप्ति यह अजीव द्रव्य का 'ज्यो का त्यो' श्रद्धान है।

प्रश्न २३८—जीव का अजीव से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है यह बात तो समयसार की है। परन्तु छहढाला मे भी कहीं बतलाया है कि जीव का अजीवो से कोई सम्बन्ध नहीं है ?

उत्तर—"पुद्गल नभ धर्म, अधर्म काल, इनतै न्यारी है जीव चाल।" भावार्थ मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव द्रव्य, अनन्तानन्त पुदगल द्रव्य, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक द्रव्य और काल द्रव्य लोक प्रमाण असख्यात् हैं। इस सब द्रव्यो से मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही हैं। क्योकि इन सब द्रव्यो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा छहढाला मे बताया है।

प्रश्न २३९—पर द्रव्यो के विषय मे ज्ञानी क्या मानता है और अज्ञानी क्या मानता है। श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार श्लोक ४१ मे क्या-क्या बताया है ?

उत्तर—(आगे २४० से २५० तक प्रश्नोत्तर के रूप मे देखो)

प्रश्न २४०—सम्यग्दर्शन का धारी किस अनुक्रम से निर्वाण को प्राप्त करता है ?

उत्तर—जिन जो परमात्मा तिसका स्वरूप मे हैं भक्ति कहिये अनुराग जाके ऐसा सम्यग्दृष्टि भव्य है। सो इस मनुष्य भवतै चय-करि स्वर्गलोक मे अप्रमाण है ऋद्धि शक्ति सुख विभव का प्रभाव जामे ऐसा देवेन्द्रनि का समूह की महिमा पाय करि, पाछै पृथिवी मे आयकर बत्तीस हजार राजानि का मस्तक करि पूजनीय ऐसा राजेन्द्र जो चक्रवर्ती ताका चक्र कूं पाय करके फिर अहमिन्द्र लोक की महिमा कूं पाय, नीचे किया है समस्त लोक जानै ऐसा भगवान तीर्थंकरनि का धर्मचक्र ताहि प्राप्त होय करि निर्वाण कूं प्राप्त होय है। इस प्रकार सम्यग्दर्शन का धारी इन अनुक्रम करि निर्वाण कूं प्राप्त होय है।

प्रश्न २४१—सम्यग्दृष्टि को क्या प्रकट है और क्या प्रकटपना नहीं है ?

उत्तर—दर्शनमोहनीय का अभाव से सत्यार्थ श्रद्धान-सत्यार्थ ज्ञान प्रकट होय है अरु अनन्तानुबधी के अभाव से स्वरूपाचरण चारित्र सम्यग्दृष्टि के प्रकट होय हैं। यद्यपि अप्रत्याख्यानावरण के उदय से देशचारित्र नाही भया है अरु प्रत्याख्यानावरण का उदय से सकलचारित्र नाही प्रकट भया है अर्थात् सम्यग्दृष्टि के निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान और स्वरूपाचरण चारित्र की प्राप्ति हुई है परन्तु देश चारित्र सकलचारित्र की प्राप्ति नही हुई है।

प्रश्न २४२—सम्यग्दृष्टि के कैसा भेद विज्ञान प्रकट हुआ है ?

उत्तर—सम्यग्दृष्टि के देहादिक पर द्रव्य तथा राग-द्वेषादिक कर्मजनित पर भाव इनमे दृढ भेदविज्ञान ऐसा भया है। जो अपना ज्ञान-दर्शनरूप ज्ञान स्वभाव ही मे आत्म बुद्धि धारने से और पर्याय मे आत्म बुद्धि स्वप्न मे हू नाही करता है।

प्रश्न २४३—सम्यग्दृष्टि कैसा चितवन करता है और सम्यग्दृष्टि के कैसा दृढ विचार होता है ?

उत्तर—सम्यग्दृष्टि ऐसा चितवन करै है—आत्मन ! तू भगवान के परमागम का शरण ग्रहण करके ज्ञानदृष्टि से अवलोकन कर—अष्ट प्रकार का स्पर्श, पाँच प्रकार का रस, दोय प्रकार का गध, पच प्रकार का वर्ण ये तुम्हारा रूप नाही है पुदगल का है। ये क्रोध मान माया लोभ तुम्हारा स्वरूप नाही है कर्म का उदय जनित ज्ञान दृष्टि से विकार है तथा हर्ष-विवाद, मद-मोह, शोक-भय, ग्लानि-कामादिक कर्म जनित विकार हैं। ये तुम्हारे स्वरूप से भिन्न हैं। बहुरि नरक-तिर्यंच-मनुष्य देव ये चार गति आत्मा का रूप नाही, कर्म का उदय जनित है विनाशीक है। देव मनुष्यादिक तुम्हारा रूप नाही। सम्यग्ज्ञानी के ऐसा चितवन होय है—मैं गोरा नाही, मै श्याम नाही मैं राजा नाही, मैं रक नाही, मैं वलवान नाही, मैं निर्बल नाही, मैं स्वामी

नाही, मैं सेवक नाही, मैं रूपवान नाही, मै कुरूप नाही, मैं पुण्यवान नाही, मैं पापी नाही, मैं धनवान नाही, मै निर्धन नाही, मैं ब्राह्मण नाही। मैं क्षत्रिय नाही, मैं वैश्य नाही, मैं शूद्र नाही, मैं स्त्री नाही, मैं पुरुष नाही, मैं नपुसक नाही, मैं स्थूल नाही, मैं कृश नाही, मैं नीच जाति नाही, मैं ऊँच जाति नाही, मैं कुलवान नाही, मैं अकुलीन नाही, मैं पडित नाही, मैं मूर्ख नाही, मे दाता नाही, मैं जाचक नाही, मैं गुरु नाही, मै शिष्य नाही, मैं देह नाही, मैं इन्द्रिय नाही, मैं मन नाही, ये समस्त कर्म का उदय जनित पुद्गल का विकार है। मेरा स्वरूप तो ज्ञाता-दृष्टा है। ये रूप आत्मा का नाही पुदगल का है। मुनिपना-क्षुल्लकपना पुद्गल का भेप है। ये लोक हमारा नाही, यो देश यो ग्राम या नगर समस्त पर द्रव्य है। कर्म उपजाय दिया कौन-कौन क्षेत्र मे अपना सकल्प करूँ। सम्यग्दृष्टि के ऐसा दृढ विचार होय है।

प्रश्न २४४—मिथ्यादृष्टि कैसा चिनवन करता है और मिथ्यादृष्टि के कैसा दृढ़ विचार होता है ?

उत्तर—मिथ्यादृष्टि परकृत पर्याय मे आपा माने है। मिथ्यादृष्टि का आपा जाति मे, कुल मे, देह मे, धन मे, राज्य मे, ऐश्वर्य मे, महल-मकान मे नगर कुटुम्बनि मे है। याकी लार हमारी घटी, हमारी बढी, हमारा सर्वस्व पूरा हुआ, मैं नीचा हुआ, मैं ऊँचा हुआ, मैं मरा मैं जिया, हमारा तिरस्कार हुआ, हमारा सर्वस्व गया इत्यादिक पर वस्तु में अपना सकल्प करि महा आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान करि दुर्गति को पाय ससार परिभ्रमण करै है।

प्रश्न २४५—मिथ्यादृष्टि और क्या-क्या करते हैं ?

उत्तर—बहुरि मिथ्यादृष्टि जीव किंचित जिनधर्म मे अधिकार पाय अर नवीन-नवीन अपना परिणामते युक्ति बनाय, लोकनि मे भ्रम उपजाय, आप पाँच आदमियो में महान ज्ञानीपना का अभिमान कर, सूत्र विरुद्ध अनेक कथनी करै है। कृतघ्न भया जिन सूत्रनि को

हूं निंदा करै है। बहु ज्ञानीनि की निन्दा करै है। दुष्ट अभिप्रायी पाँच आदमियो मे मान्यता वा पक्षपात ग्रहण करि निजाधार रहित हुआ हठग्राही, आप थापी एकांती, स्याद्वादरूप भगवान की वाणी से परान्मुख हुआ कलह विसवाद पर की निन्दा ही कूं धर्म मानता तिष्टै है।

प्रश्न २४६—कुछ और दूसरे मिथ्यादृष्टि क्या करते हैं ?

उत्तर—केतेक मिथ्यादृष्टि किंचित् मात्र बाह्य त्याग-ग्रहण करके तथा स्नान करि भोजन करते तथा अन्य देवादि की वदना का त्याग कूं कृत्यकृत्य मानता, जगत के जीवनि की निंदा करि, आप कूं प्रशसा योग्य मानै है, अर अन्याय तै आजीविका अर हिंसादिक के आरम्भ मे निपुण होय, अन्य धर्मीनि के छिद्र हेरते फिरै है। तथा निर्दोष पुरुषनि के दोष विख्यात करि मद मे छके फिरै है, आपकूं ऊँचा मानै है, अन्य कूं अज्ञानी भ्रष्ट मानै है। पापिष्ट आपकी प्रशसा कराया फूलो-फूलो फिरै है। अपना स्वरूप की शुद्धता कूं नाही देखता नाना चेष्टा करै है। भोले जीवनि कूं मिथ्या उपदेश देय एकान्त के हठ कूं ग्रहण करावै है। अरु कुगुरु-कुदेवनि कूं नमस्कार त्याग करने से और अन्य देवनि की निन्दा करके अर सभा में बैठ मिथ्या भेषधारीनि को निन्दा करके, आप ही कूं सम्यग्दृष्टि मानै है। तथा लोग हमकूं दृढ़ श्रद्धानी धर्मात्मा मानेंगे ऐसा अनन्तानुबधी मान के उदय से, पर की निन्दा करने से ही आप कूं उच्च जानतें जगतकूं अधर्मी मानै है।

प्रश्न २४७—मिथ्यादृष्टि की खोटी मान्यता के विषय में ग्रन्थकार क्या कहते हैं ?

उत्तर—कुदेव-कुगुरु कूं नमस्कार तो समस्त तिर्यंच भी नाहीं करै हैं अर नारकी नाही करै हैं। भोगभूमि के कुभोगभूमि के हूं नमस्कार नाही कर हैं। अरु समस्त देवता हूं नाही करै है। नमस्कार पूजा नाही करने से ही सम्यग्दृष्टि होय तो समस्त नारकी-मनुष्य-तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टि होय जाय, सो है नाही। बहुरि जगत के

समस्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य देवादिकनि की निन्दा करने से ही सम्यक्त्व नाही हो गया। जगत की निन्दा करने वाला अर पापीनि से वैर करने वाला तो कुगति ही का पात्र हो गया।

प्रश्न २४८—मिथ्याभाव कब से है ?

उत्तर—मिथ्याभाव तो जीवनि के अनादि का है।

प्रश्न २४९—सम्यदृष्टि मिथ्यादृष्टियो को देखकर क्या करते हैं?

उत्तर—सम्यदृष्टि तो इनकी हूँ करुणा करैं और समस्त मे साम्यभाव ही करै है।

प्रश्न २५०—सम्यग्दर्शन कैसे होगा ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन तो आपा-परका सत्य श्रद्धान-ज्ञान विनय सहित स्याद्वादरूप परमागम के सेवन से ही होएगा।

प्रश्न २५१—सम्यग्दर्शन के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर—विश्व के पदार्थो मे से एक मुझ निज आत्मा ही आश्रय करने योग्य है। ऐसा जानकर अपनी आत्मा का आश्रय लेते ही सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न २५२—छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं इसको जानने से इस पाठ मे कितने लाभ बताये हैं, वह थोड़े मे बताओ ?

उत्तर—(१) केवली भगवान के लघुनदन बन जाते हैं। (२) कोई मात्र एक द्रव्य कहे वह झूठा है। (३) कोई मात्र पाँच द्रव्य कहे वह झूठा है। (४) छह द्रव्यो से कम या ज्यादा कहे वह झूठा है (५) परमे कर्त्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव सम्यक्त्व की प्राप्ति। (६) क्रमबद्ध, कर्मानियमित पर्याय की सिद्धि। (७) ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध का पता लग जाना। इस प्रकार जाति अपेक्षा छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते है। इसको जानने से थोडे मे यह सात लाभ बताये है।

❀

पाठ ४

द्रव्य

प्रश्न १—द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न २—गुणो के समूह को क्या कहते है ?

उत्तर—द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न ३—क्या गुणो के समूह को विश्व कहते हैं ?

उत्तर—नही, गुणो के समूह को द्रव्य कहते है, विश्व नही कहते ।

प्रश्न ४—गुणो का समूह कौन है ?

उत्तर—द्रव्य है।

प्रश्न ५—गुणो का समूह कौन सा द्रव्य है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य गुणो का समूह है।

प्रश्न ६—प्रत्येक द्रव्य अर्थात् क्या-क्या ?

उत्तर—(१) जीवअनन्त, (२) पुदगल अनन्तानन्त, (३) धर्म, अधर्म, आकाश एक-एक, (४) काल लोकप्रमाण असख्यात, यह सब गुणो के समूह हैं।

प्रश्न ७—संसारी लोग द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—रुपया, सोना, चाँदी आदि को लोग द्रव्य कहते है।

प्रश्न ८—क्या रुपया सोना-चादी आदि द्रव्य नहीं हैं ?

उत्तर—रुपया, सोना, चाँदी आदि मे जितने परमाणु है। वे प्रत्येक परमाणु गुणो का समूह द्रव्य है।

प्रश्न ९—भगवान ने द्रव्य किसे बताया है ?

उत्तर—गुणो के समूह को द्रव्य बताया है।

प्रश्न १०—द्रव्य के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर—वस्तु कहो, सत् कहो, सत्ता कहो, तत्त्व कहो, अन्वय कहो, अर्थ कहो, पदार्थ कहो आदि द्रव्य के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न ११—क्या मैं भी गुणों का समूह हूँ ?

उत्तर—हाँ, मैं भी गुणो का समूह हूँ, क्योकि मैं एक जीव द्रव्य हूँ।

प्रश्न १२—क्या प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणो का समूह है ?

उत्तर—हाँ, प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणो का समूह है, क्योकि वह पृथक्-पृथक् जीव द्रव्य हैं।

प्रश्न १३—क्या एक श्वास मे अठारह बार जन्म-मरण करने वाले निगोदिया जीव भी गुणो का समूह हैं ?

उत्तर—प्रत्येक निगोदिया जीव भी गुणो का समूह हैं, क्योकि वे भी द्रव्य हैं।

प्रश्न १४—क्या मक्खी, जूं, पेड़ का जीव, मछली, आदि तिर्यंच भी गुणो का समूह है ?

उत्तर—अरे भाई, निगोद से लगाकर दो इन्द्रिय जीव, तीन इन्द्रिय जीव, चार इन्द्रिय जीव, पाँच इन्द्रिय असैनी और चारो गतियो के सैनी जीव तथा पच परमेष्ठी, सब गुणो के समूह है, क्योकि यह सब जीव द्रव्य हैं।

प्रश्न १५—क्या दो इन्द्रिय वाले जीवों मे और सिद्ध भगवान मे समान गुण हैं ?

उत्तर—हाँ भाई, चाहे कोई भी जीव हो, चाहे निगोद का हो, दो इन्द्रियो वाला हो या सिद्ध हो, उन सब मे गुण समान ही है। गुणो की सख्या मे जरा भी हेर फेर नही है।

प्रश्न १६—यह कहाँ लिखा है कि निगोदिया जीवो मे और सिद्ध जीवो मे समान गुण हैं ?

उत्तर—(१) श्री नियमसार जी गाथा ४७-४८ मे लिखा है कि—

"है सिद्ध जैसे जीव, त्यो भवलीन संसारी वही।
गुण आठ से जो हैं अलकृत, जन्म-मरण जरा नहीं ॥४७॥

बिनदेह अविनाशी, अतीन्द्रिय, शुद्ध निर्मल सिद्ध ज्यो।
लोकाग्र मे जैसे विराजे, जीव हैं भवलीन त्यो ॥४८॥

इन दो श्लोको मे शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से ससारी जीवो मे मुक्त जीवो मे कोई अन्तर नही है। इसलिए अपने स्वभाव का आश्रय लेकर सिद्ध दशा प्रकट करना पात्र जीव का लक्षण है। (२) द्रव्य सग्रह गा० १३ मे "सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया' शुद्धनय से सभी जीव वास्तव मे शुद्ध हैं। यहाँ पर भी शुद्धपारिणारिक भाव जो द्रव्य रूप है। वह अविनाशी है। इसलिए वही आश्रय करने योग्य है। इसी के आश्रय से धर्म की शुरूआत, वृद्धि और पूर्णता होती है, पर और विकार के आश्रय मे नही।

प्रश्न १७—सिद्ध जीवो मे और संसारी जीवो मे गुणो की अपेक्षा भेद नहीं है। क्या ऐसा कहीं बुधजन जी ने तथा द्यानतराय जी ने कहा है?

उत्तर—(१) बुधजनजी ने कहा है कि "जो निगोद मे सो ही मुझमे, सो ही मोक्ष मझार। निश्चय भेद कछू भी नाही, भेदगिनै ससार॥ (२) द्यानतराय जी ने कहा है कि "जैसा सिद्ध क्षेत्र मे राजत, तैसा घट मे जाना जी।"

प्रश्न १८—क्या निगोद से लेकर चारो गतियो के जीवो में और सिद्ध भगवान मे समान गुण हैं?

उत्तर—हाँ, सब जीवो मे समान गुण है, किसी मे भी कम ज्यादा गुण नही हैं।

प्रश्न १९—क्या एक परमाणु मे भी समान गुण हैं और वह भी गुणों का समूह है?

उत्तर—हाँ, परमाणु मे भी सिद्ध भगवान जितने गुण है और परमाणु भी गुणो का समूह है, क्योकि परमाणु भी द्रव्य है।

प्रश्न २०—क्या धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्य भी गुणो के समूह हैं और इन सबमे सिद्ध समान जितने गुण हैं ?

उत्तर—हाँ, धर्मादि सब द्रव्य हैं। जो-जो द्रव्य होता है वह सब गुणो का समूह होता है और उनमे समान गुण ही होते है, कम ज्यादा नही होते है। इसलिए धर्म, अधर्म, आकाश, काल भी द्रव्य हैं और गुणो के समूह हैं। सिद्ध भगवान जितने ही प्रत्येक द्रव्य मे गुण हैं।

प्रश्न २१—कालद्रव्य तो संख्या मे असंख्यात हैं और प्रत्येक कालाणु एक प्रदेशी है। क्या प्रत्येक कालाणु गुणो का समूह और कालाणु मे भी सिद्ध भगवान जितने गुण हैं ?

उत्तर—प्रत्येक कालाणु गुणो का समूह है और सिद्ध भगवान मे जितने गुण है, उतने ही कालाणु मे भी है, क्योकि कालाणु भी द्रव्य है।

प्रश्न २२—धर्मादि द्रव्य तो अचेतन हैं और जीव चेतन है। उसके गुण एक समान कैसे हो सकते हैं ?

उत्तर—हमने संख्या अपेक्षा समान कहा है।

प्रश्न २३—क्या प्रत्येक द्रव्य मे गुण समान ही हैं ?

उत्तर—हाँ, प्रत्येक द्रव्य मे संख्या अपेक्षा गुण समान ही हैं, कम ज्यादा नही हैं।

प्रश्न २४—एक द्रव्य मे कितने गुण हैं ?

उत्तर—अनन्त गुण है।

प्रश्न २५—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। इसको जानने से पहला क्या लाभ है ?

उत्तर—अपने निज भगवान की महिमा आ जाती है।

प्रश्न २६—द्रव्य को जानने से अपने निज भगवान की महिमा कैसे आवे ?

उत्तर—(१) जीव अनन्त हैं। (२) जीव से अनन्तगुणा अधिक पुदगल द्रव्य हैं। (३) पुदगल द्रव्य से अनन्तगुणा अधिक तीन काल के समय हैं। (४) तीन काल के समयो से अनन्तगुणा अधिक आकाश के प्रदेश हैं। (५) आकाश के प्रदेशो से अनन्तगुणा अधिक एक द्रव्य मे गुण हैं। (६) एक द्रव्य के गुणो से अनन्तगुणा अधिक सब द्रव्यो के गुण हैं। (७) सब द्रव्यो के गुणो से अनन्तगुणा अधिक सब गुणो की पर्यायें हैं। (८) सब द्रव्यो के गुणो की पर्यायो से अनन्तगुणा अधिक अविभाग प्रतिच्छेद हैं। इस प्रकार विश्व मे आठ नम्बर तक ही ज्ञेय है। (९) मुझ आत्मा मे केवलज्ञान की शक्ति है। मुझ केवलज्ञान की शक्ति मे आठ नम्बर तक एक समय मे ज्ञेयरूप होते हैं। ऐसे-ऐसे अनन्त विश्व हो, तो भी मेरे केवलज्ञान की पर्याय मे ज्ञेय हो सकते है एक समय की पर्याय की कितनी ताकत है और केवलज्ञान जैसी अनन्त पर्यायें हैं। (१०) केवलज्ञान मेरे ज्ञानगुण मे से आता है। तब मेरे ज्ञानगुण की ताकत का क्या कहना? (११) ज्ञान जैसे अनन्तगुण मेरे मे है और मैं उन अनन्त गुणो का स्वामी हूँ। ऐसा जाने तो अपनी महिमा आवे।

प्रश्न २७—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। इसको जानने से दूसरा क्या लाभ है?

उत्तर—नौ प्रकार के समूह से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न २८—नौ प्रकार का समूह क्या-क्या है?

उत्तर—(१) अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों का समूह, (२) आँख-नाक-कान आदिरूप औदारिक शरीर का समूह, (३) तैजस, कार्माण शरीर का समूह, (४) भाषा-मन का समूह, (५) शुभाशुभ वि[illegible] भावो का समूह, (६) अपूर्ण-पूर्ण शुद्ध पर्यायो के पक्ष का समूह, [illegible] भेदनय के पक्ष का समूह, (८) अभेदनय के पक्ष का समूह, [illegible] भेदाभेदनय के पक्ष का समूह।

प्रश्न २९—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। इसको तीसरा क्या लाभ है?

उत्तर—सम्यग्दर्शन से लेकर सिद्धदशा तक की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है यह पता चल जाता है।

प्रश्न ३०—सिद्ध भगवान मे और हमारे मे किस अपेक्षा अन्तर नहीं है ?

उत्तर—गुणो की अपेक्षा अन्तर नही है।

प्रश्न ३१—जब सिद्ध भगवान मे और हमारे गुणो मे अन्तर नहीं है तो अन्तर किसमे ह ?

उत्तर—मात्र पर्याय मे अन्तर है।

प्रश्न ३२—सिद्ध बनने के लिए पर्याय के अन्तर को कैसे दूर करें ?

उत्तर—जैसा सिद्ध भगवा न ने किया वैसा ही करें तो पर्याय का अन्तर दूर होवे।

प्रश्न ३३—सिद्ध बनने से पूर्व सिद्ध आत्मा ने पर्याय मे विकार को दूर करने के लिए क्या किया ?

उत्तर—अपने अनन्तगुणो के अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभाव का श्रद्धानादि किया तो पर्याय मे से विकार का अभाव हुआ।

प्रश्न ३४—हम पर्याय के अन्तर को दूर करने के लिए क्या करें ?

उत्तर—हम अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभाव का श्रद्धानादि करें तो पर्याय का अन्तर दूर होकर हम भी पर्याय मे सिद्ध जैसे हो जावे।

प्रश्न ३५ —गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। जरा दृष्टान्त देकर समझाइए ?

उत्तर—जैसे हमारे घर मे छह आदमी है। प्रत्येक के पास अटूट-अटूट धन है। किसी के पास किसी भी प्रकार धन की कमी या अधिकता नही है, समान ही है, उसी प्रकार जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। प्रत्येक के पास अनन्तानन्त गुणो का पिण्ड है। किसी के पास किसी भी प्रकार गुण कम या ज्यादा नही हैं, समान ही हैं।

प्रश्न ३६—प्रत्येक द्रव्य के पास अनन्तानन्त गुण हैं। इसको जानने से हमे क्या लाभ है ?

उत्तर जब सबके पास अनन्तानन्त गुण हैं। किसी पर भी कम या ज्यादा नही हैं तो पर की ओर देखना नही रहा, मात्र अपने अनन्तगुणो के अभेद पिण्ड भगवान की ही ओर देखना रहा।

प्रश्न ३७—भूतार्थ के आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति होती है ऐसा कहीं श्री समयसार मे बताया है ?

उत्तर—समयसार गाथा ११ मे कहा है कि "व्यवहारनय अभूतार्थ है और शुद्धनय भूतार्थ है" ऐसा ऋषीश्वरो ने बताया है। जो जीव भूतार्थ का (अपने अनन्त गुणो के अभेद त्रिकाली द्रव्य का आश्रय लेता है। वह जीव निश्चय से (वास्तव मे) सम्यग्दृष्टि है।

प्रश्न ३८—मोक्षमार्ग प्रकाशक मे स्वद्रव्य किसे कहा है और क्यों कहा है ?

उत्तर—(१) अमूर्तिक प्रदेशो का पुज (क्षेत्र) (२) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो का धारक (भाव) (३) अनादिनिधन (काल) (४) वस्तु आप है। (द्रव्य)। ऐसे त्रिकाली द्रव्य क आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता होती है इसलिए त्रिकाली द्रव्य को स्व कहा है।

प्रश्न ३९—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। इसको स्पष्ट करने के लिए सुदृष्टि तरगणी मे क्या दृष्टान्त दिया है ?

उत्तर—जैसे—एक गुफा मे छह मुनि बैठे हैं। एक ध्यान मे लीन हैं। दूसरा आहार के निमित्त जा रहा है। तीसरे को शेर खा रहा है चौथा सामायिक कर रहा है, उसी प्रकार लोकाकाश रूपी गुफा में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। वह सब अपने-अपने कार्य मे लीन हैं। तब पर की ओर देखना नही रहा मात्र अपनी ओर देखना रहा।

प्रश्न ४०—जब सब द्रव्यो के पास अनन्त-अनन्त गुण है और स्वय भगवान है तब अज्ञानी जीव पर की ओर क्यो देखता है ?

उत्तर—(१) अज्ञानी ना देखेगा तो क्या ज्ञानी देखेगा। अरे भाई

अज्ञानी का स्वभाव ही ऐसा होता हैं। (२) अज्ञानी को जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा का पता न होने से पर की ओर देखता है।

प्रश्न ४१—जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा क्या है ?

उत्तर—"अनादिनिधन वस्तुऐ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा लिए परिणमे हैं। कोई किसी का परिणमाया, परिणमता नही। यह जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा है। [मोक्ष मार्ग प्रकाशक]

प्रश्न ४२—तत्त्वार्थ सूत्र मे भगवान की क्या आज्ञा है ?

उत्तर—सत् द्रव्य लक्षणम् ।। उत्पाद व्यय-ध्रौव्य युक्त सत् ।।

प्रश्न ४३—जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा पालने के लिए क्या करें तो धर्म की शुरूआत हो ?

उत्तर—मैं अनन्तगुणो का अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा हूँ। ऐसा जानकर उसका श्रद्धान, ज्ञान, आचरण करे तो धर्म की शुरूआत हो।

प्रश्न ४४—चारो गतियो का अभाव करने के लिए क्या करें तो पंचमगति मोक्ष की प्राप्ति हो ?

उत्तर—मैं अनन्त गुणो का अभेद पिन्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा हूँ। ऐसा जानकर परिपूर्ण लीनता करे तो पचमगति मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्रश्न ४५—द्रव्यलिंगी मुनि को धर्म की प्राप्ति क्यो नहीं हुई ?

उत्तर—द्रव्यलिंगी मुनि ने अपने को अनन्त गुणा का अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान न मानकर, पर पदार्थो का पिण्ड माना-जाना, इसलिए धर्म की प्राप्ति नही हुई।

प्रश्न ४६—अज्ञानी को आज तक धर्म की प्राप्ति क्यो नही हुई?

उत्तर—(१) शरीररूपी, आत्माअरूपी (२) शरीर जड, आत्मा चेतन। (३' शरीर सयोगी, आत्मा असयोगी। (४) शरीर विनाशी, आत्मा अविनाशी। (५) शरीर अन्धा, आत्मा देखने वाला (६) शरीर इन्द्रिय ग्राह्य, आत्मा अतिन्द्रिय ग्राह्य। (७) शरीर बाह्य पर-तत्त्व, आत्मा अन्तरग स्वतत्त्व। आदि सब मे एक प्रकार

की श्रद्धा, एक प्रकार का ज्ञान और एक प्रकार का आचरण होने से अज्ञानी को आज तक धर्म की प्राप्ति नही हुई और यदि आत्मा और शरीर को भिन्न जाने तो धर्म की प्राप्ति हो जावे।

प्रश्न ४७–अज्ञानी किसका अभेद पिण्ड अपने को माने तो मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो ?

उत्तर—अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड भूतार्थ भगवान अपने को माने तो मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो।

प्रश्न ४८—भूतकाल मे जो मोक्ष गए हैं, वह किस उपाय से गए हैं ?

उत्तर—अपने अनन्त गुणो का अभेद पिन्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही भूतकाल मे मोक्ष को प्राप्त हुए हैं।

प्रश्न ४९–विदेहक्षेत्र से जो निरन्तर मोक्ष जा रहे है। वे किस उपाय से जा रहे हैं ?

उत्तर—अपने अनन्त गुणो को अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही विदेहक्षेत्र से निरन्तर मोक्ष जा रहे हैं।

प्रश्न ५०—भविष्य मे जो जीव मोक्ष जावेंगे, वह किस उपाय से जावेंगे ?

उत्तर—अपने अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही भविष्य मे मोक्ष जावेंगे।

प्रश्न ५१—क्या तीनकाल, तीनलोक मे मोक्ष का एक ही उपाय हे ?

उत्तर—हाँ भाई, तीन काल, तीन लोक मे मोक्ष का एक ही उपाय है, क्योकि तीन काल, तीन लोक मे परमार्थ का एक ही पन्थ है, दूसरा नही।

प्रश्न ५२—तीन काल और तीन लोक मे मोक्ष का एक ही उपाय है। ऐसा कहीं शास्त्रो मे आया है ?

उत्तर—चारो अनुयोगो के सब शास्त्रो मे आया है। (१) "सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्ग ." (तत्वार्थ सूत्र पहला अध्याय प्रथम सूत्र) (२) प्रवचनसार गा० ८२-१९९-२४२ मे लिखा है कि "निर्वाण का अन्य कोई मार्ग नही है" (३) नियमसार गा० २, ३, ९० तथा कलश १२१ मे आया है "दर्शन ज्ञान चारित्र स्वरूप नियम से निर्वाण का कारण है" (४) समयसार गा० १५६ मे "मात्र परमार्थ मोक्ष हेतु ही एक द्रव्य के स्वभाव वाला है। इसलिए जीव के स्वभाव के द्वारा ही ज्ञान का भवन बनता है" (५) रत्नकरण्ड श्रावकाचार गा० २-३ मे "धर्म के ईश्वर भगवान तीर्थंकर परमदेव सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र को धर्म कहे है" (६) छहढाला तीसरी ढाल मे "सम्यग्-दर्शन ज्ञान चरण इन तीनो की एकता ही मोक्षमार्ग है"।

प्रश्न ५३—कैसा करने से ही मुक्त होगा ?

उत्तर—'मैं अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी भगवान आत्मा हूं' ऐसा श्रद्धानादि करने से ही मुक्त होगा।

प्रश्न ५४—कैसा करने से कभी भी मुक्त ना होगा ?

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो मे पडने से कभी भी मुक्त ना होगा।

प्रश्न ५५—क्या जिनवर के कहे हुए व्रत, समिति को पालने मात्र से मुक्ति नहीं होगी ?

उत्तर—कभी भी नही होगी, क्योकि समयसार गा० २७३ मे लिखा है कि जिनवर कथित व्रत, समिति को पालन करता हुआ भी मिथ्यादृष्टि-अभव्य अज्ञानी है। तथा गाथा १५४ मे नपुसक कहा है।

प्रश्न ५६—क्या ११ अग ९ पूर्व के अभ्यास से भी मुक्त नहीं होगी ?

उत्तर—कभी भी नही होगी, क्योकि कुन्दकुन्द भगवान ने समय-सार गा० २७४ मे लिखा है—आत्म-अनुभव हुए बिना शास्त्र पढना गुणकारी नही है। तथा समयसार गा० ३१७ मे जैसे—साँप को दूध

पिलावे तो जहर बढता है, उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि के विशेपज्ञान की चतुराई निगोद का कारण है।

प्रश्न ५७—सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें ?

उत्तर—अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड अपने द्रव्य का आश्रय करे तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो।

प्रश्न ५८—सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें तो कभी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति ना हो ?

उत्तर—दर्शनमोहनीय के क्षयादिक का आश्रय करे तथा देव, गुरु शास्त्र और पर द्रव्यो का आश्रय करे तो कभी भी सम्यग्दशन की प्राप्ति न हो।

प्रश्न ५९—जो जीव सम्यग्दर्शन के लिये मात्र देव, गुरु, शास्त्र का ही आश्रय मानते हैं उसका फल क्या होगा ?

उत्तर—क्रम से चारो गतियो मे घूमते हुए निगोद मे चले जावेंगे कहा है "जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दशन विन दुख पाय।"

प्रश्न ६०—क्या मात्र देव, गुरू, शास्त्र का ही आश्रय कार्यकारी नहीं है ?

उत्तर—ससार परिभ्रमण के लिए कार्यकारी है।

प्रश्न ६१—सम्यग्ज्ञान प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें तो सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति हो ?

उत्तर—एक मात्र अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायक द्रव्य का आश्रय करने से ही सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६२—सम्यग्ज्ञान प्राप्त करने के लिए गुरू और शास्त्र की ओर देखें तो क्या सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी ?

उत्तर—सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति देव, गुरू, शास्त्र की ओर देखने से कभी भी नही होगी क्योकि जिसमे जो चीज हो उसी मे से वह आती है जिसमे ना हो उसमे से कैसे आ सकती है ? कभी भी नही।

प्रश्न ६३—सम्यग्ज्ञान के लिए ११ अंग नौ पूर्व का अभ्यास करें तो क्या सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी ?

उत्तर—कभी भी नही होगी, क्योकि समयसार गा० २७४ मे कहा है कि—"मोक्ष की श्रद्धा विहीन-अभव्य जीव शास्त्रो पढे। पर ज्ञान की श्रद्धा रहित को, पठन ये नहि गुण करै" ॥२७४॥ तथा गा० ३१७ मे लिखा है कि—"सद्रीत पढकर शास्त्र भी प्रकृति अभव्य नही तजे। ज्यो दूध गुड पीता हुआ भी, सर्प नाहि निर्विष वने ॥३७॥ जव तक जीव को आत्मज्ञान नही है। सव शास्त्रो का पठन मिथ्या-ज्ञान है जरा भी कार्यकारी नही है ।

प्रश्न ६४—सम्यक्चारित्र के लिए किसका आश्रय करें, तो सम्यक्चारित्र की प्राप्ति हो ?

उत्तर—अनन्तगुणो के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायक भगवान का आश्रय करने से ही सम्यक्चारित्र की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६५—क्या शरीर की क्रिया से सम्यक्चारित्र की प्राप्ति नहीं होती ?

उत्तर—शरीर की क्रिया मैं करता हूँ इस मान्यता से तो मिथ्यात्व का महान पाप होता है, सम्यकचारित्र की तो वात ही नही है।

प्रश्न ६६—क्या जिनेंद्रभगवान के कहे हुए समिति, गुप्ति के शुभ भावो से चारित्र की प्राप्ति होती है ?

उत्तर—विल्कुल नही, क्योकि भगवान जिनेन्द्र ने समिति, गुप्ति के भाव को तो पुण्यवंध का कारण कहा है चारित्र की प्राप्ति नही कही है।

प्रश्न ६७—जो जीव शुभभावो से चारित्र मानता है। उसे श्री समयसार मे क्या-क्या कहा है ?

उत्तर—श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार गा० २७३ मे कहा है जिनवर प्ररूपित व्रत, समिति, गुप्ति अरू तप शील को। करता

हुआ भी अभव्य जीव, अज्ञानी मिथ्यादृष्टि है। समयसार गा० १४५ मे लिखा है कि—"है कर्म अशुभ कुशील, अरु जानो सुशील शुभ कर्म को। किस रीत होय सुशील, जो ससार मे दाखिल करे" ॥१४५॥ तथा १५४ मे लिखा है कि—"परमार्थ वाहिर जीवगुण, जाने न हेतु मोक्ष का। अज्ञान से वे पुण्य इच्छे, हेतू जो ससार का" ॥१५४॥ जैसे लहसुन खाने मे कस्तूरी की डकार नही आती, उसी प्रकार शुभभावो से कभी भी धर्म की प्राप्ति नही होती है। एक मात्र अपने स्वद्रव्य स्वभाव के आश्रय से ही चारित्र की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ६८—मिथ्यात्व के अभाव के लिए क्या करें तो मिथ्यात्व का अभाव हो ?

उत्तर—एक मात्र अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान स्वद्रव्य का आश्रय ले तो मिथ्यात्व का अभाव हो।

प्रश्न ६९—मिथ्यात्व का अभाव करने के लिए आतमा का तो आश्रय ना लें। परन्तु व्रत करे; बहुत शास्त्र पढे; तपश्चरण करें तो क्या होगा ?

उत्तर—कभी भी मिथ्यात्व का अभाव ना होगा। बल्कि मिथ्यात्व दृढ होकर निगोद चला जावेगा। क्योकि आचार्यकल्प प० टोडरमल जी ने कहा है कि "तत्व विचार रहित (अर्थात् आतमा का आश्रय लिए बिना) देवादि की प्रतीति करे, बहुत शास्त्रो का अभ्यास करे, व्रतादि पाले, तपश्चरणादि करे, उसको तो सम्यक्त्व होने का अधिकार नही,' (अर्थात् मिथ्यात्व के अभाव होने का अवकाश नही है।) और तत्त्व विचार वाला अर्थात् आतमा का आश्रय लेने वाले को व्रतादि के बिना भी सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है।" (मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ २६०)

प्रश्न ७०—श्रेणी माडने के लिए किस का आश्रय करे ?

उत्तर—एक मात्र अनन्त गुणो के अभेद पिड अपने ज्ञायक द्रव्य के आश्रय से ही श्रेणी की प्राप्ति होती है। किसी द्रव्यकर्म, नोकर्म, भाव-कर्म तथा परलक्षी ज्ञान से कभी भी श्रेणी की प्राप्ति नही होती है।

प्रश्न ७१—अरहत भगवान को किसका आश्रय है।

उत्तर—एकमात्र अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान रूप अपने द्रव्य का ही आश्रय अरहत भगवान को है।

प्रश्न ७२—पात्र जीव सामायिक के लिए किसका आश्रय करता है।

उत्तर—एक मात्र अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायक द्रव्य का सामयिक के लिए पात्र जीव आश्रय करता है।

प्रश्न ७३—अपात्र जीव सामायिक के लिए किसका आश्रय करता है और उसका फल क्या है।

उत्तर—शरीर की क्रिया का और पाठ बोलने आदि का आश्रय करता है और उसका फल अनन्त ससार है। छहढाला मे कहा है कि—"मुनिव्रत धार अनन्तवार ग्रीवक उपजायो। पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो" ॥

प्रश्न ७४—शान्ति प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें तो शान्ति की प्राप्ति हो।

उत्तर—एक मात्र अपने अनन्त गुणो के अभेद पिंड ज्ञायक द्रव्य का ही आश्रय करने से शान्ति की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ७५—अज्ञानी शान्ति के लिए किस-किस का आश्रय मानता है और उसका फल क्या है।

उत्तर—नौ प्रकार के पक्षो से शान्ति मानता है और उसका फल चारो गतियो का भ्रमण है।

प्रश्न ७६—सिद्ध भगवान को किसका आश्रय है।

उत्तर—एक मात्र अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड भूतार्थ स्वभावी अपने भगवान का ही आश्रय वर्तता है।

प्रश्न ७७—जबकि "अनन्त गुणो का अभेद ज्ञायक पिण्ड अपने भगवान आत्मा के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान सम्यक-चारित्र, श्रेणी, अरहंत और सिद्धदशा की प्राप्ति होती है। विकार

के आश्रय से नहीं तो फिर (१) भगवान की पूजा करो (२) दर्शन करो, (३) दान करो, (४) यात्रा करो, (५) अणुव्रत पालो (६) महाव्रत पालो आदि का उपदेश क्यों दिया है।

उत्तर—पात्र भव्य जीव ने अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा का परिपूर्ण आश्रय लेने का प्रयत्न किया। परन्तु परिपूर्ण आश्रय ना ले सका अर्थात मोक्ष नही हुआ। परन्तु मोक्षमार्ग की प्राप्ति हुई। तो मोक्षमार्ग मे चारित्र गुण की एक समय की पर्याय मे दो अश पड जाते हैं। उसमे जो शुद्धि अश है वह सच्चा मोक्षमार्ग है और जो भूमिकानुसार राग है वह ज्ञानियो को हेय बुद्धि से होता है। उसका ज्ञान कराने के लिए भगवान की पूजा करो, यात्रा करो आदि का उपदेश हैं।

प्रश्न ७८—चौथे गुणस्थान मे सम्यग्दृष्टि की दृष्टि कहाँ रहती है और अनन्तानुबधी क्रोधादि के अभाव रूप स्वरूपाचरण चारित्र के साथ कैसा राग होता है, कैसा नहीं होता है ?

उत्तर—चौथे गुणस्थानी की दृष्टि एक मात्र अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड पर रहती है। जैसे—महावीर स्वामी के जीव को सिंह पर्याय मे सम्यग्दर्शन हुआ। तो माँस उसका भोजन होने पर भी मास का विकल्प भी नही आया, उसी प्रकार जिसको प्रत्यक्ष मद्य, माँस मधु कहते हैं उसके खाने का विकल्प भी नही होता है। गरदन कटती हो तो कटे, परन्तु कुगुरु, कुदेव, कुशास्त्र को नमने आदि का विकल्प नही आवेगा। सच्चे देव गुरू-शास्त्र को ही नमने का विकल्प हेयबुद्धि से होता है। याद रहे करता नही, परन्तु होता है।

प्रश्न ७९—सच्ची श्रावकदशा होने पर कैसा राग होता है ?

उत्तर—दो चौकडी कषायके अभावरूप देशचारित्र दशा होने पर बारह अणुव्रतादि का विकल्प हेयबुद्धि से होता है।

प्रश्न ८०—मुनि दशा होने पर कैसा राग होता है ?

उत्तर—तीन चौकडी कषाय के अभावरूप शुद्धि तो निरन्तर वर्तती है। परन्तु छठे गुणस्थान मे २८ मूलगुण का विकल्प हेयबुद्धि से होता है।

प्रश्न ८१—ज्ञानी को जो भूमिकानुसार राग होता है। क्या ज्ञानी उसे अपना मानता है ?

उत्तर—बिल्कुल नही, वह तो ज्ञान का ज्ञेय है, हेय है।

प्रश्न ८२—सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का निमित्त मिला, ऐसे समय मे भी भूतार्थ स्वभाव का आश्रय ना ले, तो क्या होगा ?

उत्तर—मोक्षमार्ग प्रकाशक मे लिखा है कि "मनुष्यभव होने पर मोक्षमार्ग मे प्रवर्तन ना करे तो किंचित् विशुद्धता पाकर, फिर तीव्र उदय आने पर निगोदादि पर्याय को प्राप्त करेगा।" छहढाला मे भी कहा है कि "जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन विन दुख पाय। तँह ते चय थावर तन धरै, यो परिवर्तन पूरे करे।"

प्रश्न ८३—आप कहते हो कि अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक की एकाग्रता से ही धर्म की शुरूआत, वृद्धि और पूर्णता होती है। तो क्या हम पूजा-पाठ-व्रत-नियम आदि ना करें ?

उत्तर—पहले गुणस्थान मे जिज्ञासु जीवो को शास्त्राभ्यास, अध्ययन—मनन, ज्ञानी पुरुषो का धर्मोपदेश-श्रवण, निरन्तर उनका समागम, देवदर्शन, पूजा, भक्ति, दान आदि शुभभाव होते हैं। किन्तु सच्चे व्रत-तप आदि नही होते हैं। क्योकि सच्चे व्रतादि तो सम्यग्दर्शन के बाद पाँचवे गुणस्थान मे शुभभाव रूप से होते है।

प्रश्न ८४—व्रत, दान, अणुव्रतादि से धर्म नही होता है। ऐसा कथन सुनने या पढ़ने से लोगों को अत्यन्त हानि होना सम्भव है। इस समय लोग कुछ व्रत, प्रत्याख्यानादिक क्रियाएँ करते हैं, उन्हे छोड देंगे, क्या उनका कहना ठीक है ?

उत्तर—(१) बिल्कुल गलत है। क्योकि सत्य से कभी भी क्या किसी जीव की हानि हो सकती है ? आप कहेगे कभी नही। इसलिए सत् का श्रवण या अध्ययन करने से जीवो को कभी हानि नही हो

सकती है। (२) व्रत करने वाले ज्ञानी हैं या अज्ञानी, यह ... आवश्यक है। यदि अज्ञानी हैं तो उन्हे सच्चे व्रतादि होते ही ... इसलिए उन्हे छोडने का प्रश्न उपस्थित ही नही होता है। ... करने वाले ज्ञानी है, तो वह व्रत छोडकर अशुभ मे जावे यह ... असम्भव है। (३) परन्तु ऐसा होता है कि ज्ञानी शुभभावों ... क्रमश दूर कर शुद्ध भाव की वृद्धि करें। वह ... हानि का नही। इसलिए सत्य कथन से किसी को ... नही सकती है।

प्रश्न ८५—मैं अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड ज्ञायक ... हूँ। जब तक ऐसा अनुभव ना हो तब तक तो व्रतादि ... चाहिए ना ?

उत्तर—जैसे-किसी को अमेरिका जाना है ... से अमेरिका न जाना बने तो क्या अमेरिका के बदले ... आप कहेगे नही, बल्कि अमेरिका जाने का प्रयत्न करना ... जब तक अपने ज्ञायक स्वभाव का अनुभव न हो। ... मे लग जाना चाहिए ? आप कहेगे नहीं, बल्कि ... गुणो के अभेद पिण्ड के अनुभव का अभ्यास करना। ... के अभ्यास को छोडकर व्रतादि मे लग जाना, यह ... बदले रूस जाने के समान है। इसलिए पात्र जीवों को ... गुणो के अभेद पिण्ड अपने भगवान का अनुभव ... कारी है।

प्रश्न ८६—मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड हूँ। ... हुए बिना देव, गुरु, शास्त्र की भक्ति कार्यकारी है या नहीं ?

उत्तर—ससार भ्रमण के लिए कार्यकारी है। ... कार्यकारी नहीं है।

प्रश्न ८७—मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक ... हूँ। ऐसा अनुभव हुए बिना बारह अणुव्रतादि कार्यकारी हैं या ...

... क्रिया है
... रहा है ?
... ा, या बिन
... अरे! बुध-
... क्ष का शरना
अनन्तवार की
... रता है। वे सब
आत्मा के सहज
दान, पूजा अणु-
... न्दयो की कीमत
व्रतादि की शुभ

... व्रतादि कार्यकारी
... मे जो कि छोटे

... ढाल मे "जो विमान-
... ने चय थावर तन धरै-
... वों मे भी उत्पन्न हुआ
... उठाए और वहाँ से भी
... र धारण किए। (२)
... किये बिना चाहे जितना
... र सम्यग्दर्शन प्राप्त किए
... मिथ्याचारित्र है। (३)
... ग्रीवक उपजायौ। पै निज
... ह जीव मुनि के महाव्रतों
... ग्रैवेयक तक के विमानो
... के भेद विज्ञान ...

उत्तर—चारो गतियो मे घूमने के लिए कार्यकारी हैं श्रावकपने के लिए कार्यकारो नही है।

प्रश्न ८८—मै अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ। 'ऐसा अनुभव हुए बिना २८ मूलगुण का पालनादि मुनिपने के लिए कार्यकारी है या नहीं ?

उत्तर—कार्यकारी नही। वल्कि अनर्थकारी है, क्योकि, मोक्ष-मार्ग प्रकाशक' मे महाव्रतादि पालते हुए, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, पापी कहा है।

प्रश्न ८९—अपना अनुभव हुए बिना अणुव्रत महाव्रतादि कार्यकारी नहीं। ऐसा कही समयसार, प्रवचनसार मे कहा है ?

उत्तर—(१) प्रवचनसार मे द्रव्यलिगी मुनि को गा० २७१ मे 'ससारतत्त्व' कहा है। (२) समयसार मे अपने आपका अनुभव हुए बिना नपुसक, कुशील, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, पापी आदि कहा है।

प्रश्न ९०—अपनी आत्मा का आश्रय लिए बिना शुभभाव कार्यकारी नहीं है ऐसा कहीं समयसार कलश टीका मे लिखा है ?

उत्तर—कलश १४२ मे लिखा है कि······विशुद्ध शुभोपयोगरूप परिणाम, जैनोक्त सूत्र का अध्ययन, जीवादि द्रव्यो के स्वरूप का बारम्बार स्मरण, पच परमेष्टी की भक्ति इत्यादि हैं जो अनेक क्रिया भेद उनके द्वारा बहुत घटाटोप करते हैं, तो करो तथापि शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति होगी, सो तो शुद्ध ज्ञान द्वारा होगी······अज्ञानी को परम्परा आगे मोक्ष का कारण होगी ऐसा भ्रम उत्पन्न होता है सो झूठा है। अहिसा महाव्रत का पालन महा परीषहो का सहना बहुत काल पर्यन्त मरके चूरा होते हुए बहुत कष्ट करते हैं तो करो तथापि ऐसा करते हुए कर्म क्षय तो नही होता।" तथा १४३ कलश मे कहा है कि "शुभ-अशुभ रूप है जितनी क्रिया उनका ममत्व छोडकर एक शुद्ध स्वरूप-अनुभव कारण है।

प्रश्न ९१—सम्यग्दर्शन रहित शुभरागरूप व्यवहार क्रिया है उसके विषय मे पण्डित बुधजन जी ने छहढाला मे क्या कहा है ?

उत्तर—"सम्यक् सहज स्वभाव आपका अनुभव करना, या बिन जप-तप व्यर्थ कष्ट के मांही पडना। कोटि बात की बात अरे ! बुधजन उर धरना ! मच वच तन शुचि होय, ग्रहो जिन वृक्ष का शरना अर्थात् सम्यक्दर्शनादि रहित व्यवहार श्रद्धा जीव ने अनन्तवार की हैं वह सब मिथ्या है। मिथ्यात्वपूर्वक जीव जो भाव करता है। वे सब दु खदायक ही है। करोडो बात का यही सार है कि आत्मा के सहज स्वभाव का अनुभव करना, उसके बिना सब (दया, दान, पूजा अणुव्रत महाव्रतादि) व्यर्थ हैं। जैसे—एक के बिना बिन्दियो की कीमत नही होती है, उसी प्रकार सम्यक्दर्शन के बिना व्रतादि की शुभ क्रियाओ पर उपचार भी सम्भव नही है।

प्रश्न ९२—अपना अनुभव हुए बिना महाव्रतादि कार्यकारी नहीं है। ऐसा कहीं दौलतराम जी ने छहढाला मे जो कि छोटे बच्चो के लिए है। कहीं लिखा है ?

उत्तर—सब जगह लिखा है—(१) पहली ढाल मे "जो विमानवासी हू थाय, सम्यग्दर्शन बिन दु ख पाय। तहतै चय थावर तन धरैयो परिवर्तन पूरे करै॥" यह जीव वैमानिक देवो मे भी उत्पन्न हुआ किन्तु वहाँ उसने सम्यग्दर्शन के बिना दु ख उठाए और वहाँ से भी मरकर पृथ्वीकायिक आदि स्थावरो के शरीर धारण किए। (२) तीसरी ढाल मे लिखा है सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना चाहे जितना ज्ञान का उघाड हो वह सब मिथ्याज्ञान है और सम्यग्दर्शन प्राप्त किए बिना कितने ही व्रत तपादि हो, वह सब मिथ्याचारित्र है। (३) चौथी ढाल मे "मुनिव्रत धार अनन्तवार ग्रीवक उपजायौ। पै निज आतम ज्ञान बिन सुख लेश न पायौ॥ यह जीव मुनि के महाव्रतों को धारण करके उनके प्रभाव से नववे ग्रैवेयक तक के विमानो मे अनन्त बार उत्पन्न हुआ, परन्तु आत्मा के भेद विज्ञान बिना लेश

मात्र सुख प्राप्त नही हुआ। (४) लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ। तोरि सकल जग दद फद, नित आतम ध्याओ॥

प्रश्न ९३—श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार जो कि श्रावको के लिए है, क्या उसमे भी अपना अनुभव हुए विना अणुव्रत, महाव्रत, दया, दान, पूजादि कार्यकारी नहीं हैं, ऐसा कही लिखा है ?

उत्तर—(१) सब जगह लिखा है, परन्तु शुरु करते ही दूसरे श्लोक के भावार्थ मे लिखा है कि ससार मे "धर्म" ऐसा तो सब लोग कहते है। किन्तु धर्म शब्द का अर्थ तो ऐसा है जो नारक, तिर्यंचादि गतियो मे परिभ्रमण रूप दु खो से आत्मा का छुटाकर उत्तम आत्मिक अविनाशी अतीन्द्रिय मोक्ष सुख मे धारण करे। ऐसा धर्म बिकता नही, जो धन देकर या दान-सम्मान आदि से प्राप्त किया जाय। तथा किसी से दिया जाता नही, जो किसी की उपासना से प्रसन्न करके ले सके। तथा मन्दिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थादि मे धर्म को रख दिया नही है कि वहाँ जाकर ले आवे। उपवासव्रत काय क्लेशादि तप मे शरीरादि कृष करने से भी मिलता नही। ऐसा भी नही है जो देवाधिदेव तीर्थंकर के मन्दिरो से तथा उसमे उपकरण दान, मडल विधान पूजा आदि से भी आत्मा का धर्म मिल सके। क्योकि धर्म तो आत्मा का स्वभाव है। अतः पर मे आत्मबुद्धि को छोडकर अपने ज्ञाता दृष्टा स्वभाव द्वारा ज्ञायक स्वभाव मे ही प्रवर्तन रूप जो आचरण वह "धर्म" है। · · यदि आत्मा उत्तम क्षमादि वीतरागरूप-सम्यग्दर्शन रूप न हुआ, तो कही भी किंचित धर्म नही होता। (२) श्लोक ३३ मे लिखा है कि जिसके मिथ्यात्व नही ऐसा अव्रत सम्यग्दृष्टि मोक्षमार्गी है और जिसके मिथ्यात्व है मुनि के व्रत-धारी साधु होने पर भी मरकर भवनत्रिकादिक मे उपजि ससार ही मे परिभ्रमण करेगा।

प्रश्न ९४—अज्ञानी को विश्व मे कितने द्रव्य दिखते हैं ?

उत्तर—अज्ञानी को विश्व मे एक भी द्रव्य नही दिखता। क्योकि

अपना अनुभव हुए बिना एक द्रव्य की भी जानकारी सच्ची नही है।

प्रश्न ९५—अज्ञानी को अपना अनुभव हुए बिना एक द्रव्य की भी जानकारी सच्ची नहीं है—यह कहाँ लिखा है ?

उत्तर—समयसार कलश टीका कलश एक मे तथा समयसार गा० २०१ मे लिखा है।

प्रश्न ९६—अज्ञानी को सात तत्त्वो मे से कितने तत्त्वों का ज्ञान है ?

उत्तर—एक का भी नही, क्योकि अपना अनुभव हुए बिना एक तत्त्व की भी जानकारी सच्ची नही है।

प्रश्न ९७—अज्ञानी का सात तत्त्वो का जानना कार्यकारी व सच्चा नहीं है, मिथ्यात्व है—यह कहाँ लिखा है ?

उत्तर—समयसार कलश टीका कलश न० ६ मे लिखा है।

प्रश्न ९८—भगवान ने द्रव्य का स्वरूप पहले क्यो बताया है ?

उत्तर—अज्ञानी को अनादिकाल से एक-एक समय करके मैं अनादिअनन्त अनन्तगुणो का अभेद पिण्ड द्रव्य हू—इसके सम्बन्ध मे भूल होने के कारण भगवान ने पहले द्रव्य का स्वरूप बताया है।

प्रश्न ९९—अज्ञानी लोग द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—रुपया, सोना, चाँदी आदि को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न १००—भगवान ने द्रव्य किसे कहा है ?

उत्तर—गुणो के समूह को द्रव्य कहा है।

प्रश्न १०१—आप कहते हो कि भगवान ने द्रव्य का लक्षण "गुणो के समूह को द्रव्य कहा है।" परन्तु अन्य शास्त्रो मे द्रव्य की परिभाषा दूसरे प्रकार से क्यो बतलाई है ? जैसे—तत्वार्थ सूत्र मे "गुण पर्यायवत् द्रव्यम्" बतलाई है। पचाध्यायी मे "गुणपर्यय समुदायो द्रव्य" तथा "गुण समुदायो द्रव्यम्" बतलाई है, ऐसा क्यो है ?

उत्तर—इनमे से किसी एक को जब मुख्य करके कहा जाता है तब शेष लक्षण भी उसमे गर्भित रूप से आ जाते है। इसलिए

आचार्यो ने दूसरे प्रकार से द्रव्य का लक्षण स्पष्ट ध्यान मे आने की अपेक्षा कथन किया हैं और भाव सबका एक ही है विरोध नही है ऐसा जानना चाहिए।

प्रश्न १०२—भगवान ने द्रव्य की महिमा किससे बताई है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य की उसके गुणो से ही द्रव्य की महिमा बताई है।

प्रश्न १०३—मिथ्यादृष्टि लोग अपनी-अपनी महिमा किस-किस से मानते हैं और किससे नही मानते हैं ?

उत्तर—(१) मैं पुत्र वाला हू, इससे अपनी महिमा मानते हैं, मैं स्त्री वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते है, (३) मैं रुपए पैसे वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते है, (४) मैं सुन्दर रूप वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते है; (५) मै क्षमा वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते हैं; (६) मैं अणुव्रत वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते हैं; (७) मैं महाव्रत वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते है, (८) मैंने स्त्री पुत्रादि का त्याग किया है इससे अपनी महिमा मानते हैं, (९) मै ऐलक, क्षुल्लक हूँ, इससे अपनी महिमा मानते हैं, (१०) मैं मुनि आचार्य हूँ इससे अपनी महिमा मानते हैं, (११) मै महीनो उपवास करने वाला हूँ इससे अपनी महिमा मानते हैं, (१२) मैं परीषह सहने वाला हू इससे अपनी महिमा मानते है, आदि प्रयोजन भूत बातो से अपनी महिमा मानते है, परन्तु मैं अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान हू इससे अपनी महिमा नही मानते हैं।

प्रश्न १०४—रुपया पैसा आदि से अपनी महिमा मानने का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न १०५—नौ प्रकार के पक्षो से अपनी महिमा मानने वाले कौन है ?

उत्तर—ससार के भक्त है अर्थात् चारो गतियो मे घूमते हुए निगोद के पात्र हैं।

प्रश्न १०६—भगवान ने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड को अनुभव करने से ही आत्मा की महिमा क्यो बताई ?

उत्तर—अनन्त गुणो का अभेद पिण्ड मैं हूँ। ऐसा अनुभव करते ही सम्पूर्ण दु ख का अभाव होकर सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति हो जाती है इसलिए भगवान ने अनन्तगुणो के अभेद पिण्ड को अनुभव करने से आत्मा की महिमा बताई है। अनुभव करते ही "स हि मुक्त एव" ऐसा समयसार कलश १९८ मे बताया है।

प्रश्न १०७—जो जीव अणुव्रत-महाव्रतादि की महिमा मे लीन हैं उसका फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे परिभ्रमण उसका फल है।

प्रश्न १०८—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं। इसको जानने से चौथा लाभ क्या है ?

उत्तर गुणो की सख्या का सही माप दृष्टि मे आ जाता है।

प्रश्न १०९—द्रव्य मे गुणो की सख्या का क्या कोई माप है।

उत्तर—हा है। (१) जीव अनन्त है (२) जीव द्रव्य से अनन्त-गुणा अधिक पुदगल द्रव्य है। (३) पुद्गल द्रव्य से अनन्त गुणे अधिक तीन काल के समय है। (४) तीन काल के समयो से अनन्त गुणा अधिक आकाश के प्रदेश है। (५) आकाश द्रव्य के प्रदेशो से अनन्त-गुणा अधिक एक द्रव्य मे गुण है।

प्रश्न ११०—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं उसको जानने से पांचवां लाभ क्या है ?

उत्तर—द्रव्य मे गुण किस प्रकार रहते है यह पता चल जाता है।

प्रश्न १११—प्रत्येक द्रव्य मे गुण किस प्रकार है ?

उत्तर—जैसे—चीनी मे मिठास है, वैसे ही द्रव्य मे गुण है, (२) जैसे अग्नि मे उष्णता है, वैसे ही द्रव्य मे गुण है, (३) जैसे-सोने मे पीलापन है, वैसे ही द्रव्य मे गुण है, (४) जैसे-पुदगल मे स्पर्शादि हैं,

वैसे ही द्रव्य मे गुण है, (५) जैसे—कोयले मे कालापना है, वैसे ही द्रव्य मे गुण है।

प्रश्न ११२—गुणो के समूह को द्रव्य कहते है। इसको जानने से छठा लाभ क्या है ?

उत्तर—द्रव्य मे गुण किस प्रकार नही है यह पता चल जाता है।

प्रश्न ११३—द्रव्य के साथ गुणो का कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर—नित्यतादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध है अर्थात् कभी भी तीनकाल-तीनलोक मे अलग न होने वाला सम्बन्ध है।

प्रश्न ११४—द्रव्य मे गुण किस प्रकार नही है ?

उत्तर—जैसे घडे मे बेर है उस प्रकार द्रव्य मे गुण नही है।

प्रश्न ११५—क्या जैसे घडे मे बेर हैं उसी प्रकार द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही ! क्योकि—(१) घडे मे बेर भरे गए हैं और निकाले जा सकते है, जबकि द्रव्य मे गुण भरे और निकाले नही जा सकते हैं। (२) बेर घडे के सम्पूर्ण भागो मे नही है जबकि गुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागो मे है। (३) बेर घडे की सम्पूर्ण अवस्थाओ मे नही हैं, जबकि गुण द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओ मे हैं। (४) घडा फूट जावे तो घडे मे से बेर निकल सकते हैं, जबकि गुण द्रव्य से कभी निकल नही सकते है।

प्रश्न ११६—क्या जैसे एक थैली मे सौ रुपयो के पैसे भरे है उसी प्रकार द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११७—क्या जैसे एक बोरी मे नमक, मिर्च, हल्दी आदि भरकर मुंह बन्द कर दिया; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार दो।

प्रश्न ११८—क्या जैसे एक बोरी मे गेहू भरकर मुह बन्द कर दिया, उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११६—क्या जैसे पुदगल मे स्पर्शादि गुण है; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—हाँ ऐसे ही हैं क्योकि—(१) जैसे—पुदगल मे स्पर्श-रसादि गुण अनादि से हैं, जो गेरे और निकाले नही जा सकते हैं। उसी प्रकार द्रव्य मे गुण अनादि से हैं जो गेरे और निकाले नही जा सकते है। (२) जैसे-पुदगल मे स्पर्श-रसादि गुण सम्पूर्ण भागो मे है; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण सम्पूर्ण भागो मे हैं। (३) जैसे—पुद्गल मे स्पर्श-रसादि गुण सम्पूर्ण अवस्थाओ मे है, उसी प्रक र प्रत्येक द्रव्य मे गुण सम्पूर्ण अवस्थाओ मे हैं, (४) जैसे—पुदगल मे से स्पर्श रसादि गुण कभी निकलकर बिखर नही जाते, क्योकि उनका द्रव्य, क्षेत्र, काल एक ही है, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे गुण कभी निकलकर बिखर नही जाते, क्योकि प्रत्येक द्रव्य गुण का द्रव्य, क्षेत्र, काल एक ही है।

प्रश्न १२०—क्या जैसे एक थैली मे चावल भर दिये उसी प्रकार द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२१—क्या जैसे जीव मे ज्ञानदर्शनादि है, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—हाँ ऐसे ही है प्रश्न ११६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२२—क्या जैसे एक किताब मे ५०० पन्ने है वैसे ही द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२३—क्या जैसे इस कुर्सी में अनन्त परमाणु है, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२४—क्या जैसे काल द्रव्य मे परिणमन हेतुत्व गुण हैं; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—हा ऐसे ही है, ११६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२५—क्या जैसे इस कमीज मे अनन्त परमाणु हैं; उस प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही, प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२६—क्या जैसे आत्मा के साथ शरीर का सम्बन्ध है उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही, प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२७—क्या जैसे आत्मा के साथ आठ कर्मो का सम्बन्ध है उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२८—क्या जैसे कमरे मे सरसो भर दीं; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२९—क्या जैसे रसगुल्ले मे अनन्त परमाणु हैं; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३०—क्या जैसे आकाश मे अवगाहनत्व गुण हैं वैसे ही द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—हाँ ऐसे ही है, ११६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३१—क्या जैसे जीव-पुदगल मे क्रियावती शक्ति और वैभाविक शक्ति है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य मे गुण है ?

उत्तर—हाँ ऐसे ही हैं, ११६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३२—क्या जैसे एक छत्ते मे हजारो मक्खियाँ हैं; उसी प्रकार द्रव्य मे गुण हैं ?

उत्तर—बिल्कुल नही। प्रश्न ११५ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३३—अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान की ओर दृष्टि करने से सातवा क्या लाभ है ?

उत्तर—(१) मिथ्यात्वादि ससार के पाँच कारणो का अभाव हो जाता है। (२) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भाव रूप पच परावर्तन का अभाव हो जाता है। (३) चार गतियो के अभाव रूप पचम गति की प्राप्ति होती है। (४) पचम पारिणामिक भाव का महत्व आ जाता है। (५) पच परमेष्ठियो मे गिनती होने लगती है। (६) ज्ञाता-दृष्टा बुद्धि प्रगट हो जाती है। (७) मार्गणा-गुणस्थान जीव समास रहित अपना आत्मा दष्टि मे आ जाता है।

प्रश्न १३४—ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि गुणो के साथ आत्मा का कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर—नित्यतादात्म्य सम्बन्ध है।

प्रश्न १३५—नित्यतादात्म्य सम्बन्ध को समयसार के कर्ता-कर्म अधिकार मे किस नाम से कहा है ?

उत्तर—तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध के नाम से कहा है।

प्रश्न १३६—तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध मानने-जानने का क्या फल है ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की प्राप्ति, उसका फल है।

प्रश्न १३७—शुभाशुभ विकारी भावो के सम्बन्ध का क्या नाम है ?

उत्तर—अनित्य तादात्म्य सम्बन्ध है।

प्रश्न १३८—अनित्य तादात्म्य सम्बन्ध को समयसार के कर्ता-कर्म अधिकार मे किस नाम से कहा है ?

उत्तर—सयोगसिद्ध सम्बन्ध के नाम से कहा है।

प्रश्न १३९—सयोगसिद्ध सम्बन्ध को तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध माने तो क्या होगा ?

उत्तर—मिथ्यादर्शनादि दृढ होकर निगोद चला जावेगा।

प्रश्न १४०—सयोगसिद्ध सम्बन्ध और निज कारण परमात्मा अलग है ऐसा अनुभव करे तो क्या होगा ?

उत्तर—(१) आस्रवो का अभाव हो जावेगा। (२) कर्मों का बध

नही होगा। (३) सच्चे सुख की प्राप्ति हो जावेगी। (४) क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होगी।

प्रश्न १४१—विकारी भावों के साथ अज्ञानी कैसा सम्बन्ध मानता है और उसका फल क्या है ?

उत्तर—कर्ता-कर्म सम्बन्ध मानता है और उसका फल परम्परा निगोद है।

प्रश्न १४२—ऐसे द्रव्यों के नाम बताओ जिसमे गुण ना हो ?

उत्तर—ऐसा कोई भी द्रव्य नही है, क्योकि गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न १४३—गुणो को कौन नही मानता है ?

उत्तर—श्वेताम्बर नही मानता है।

प्रश्न १४४—द्रव्य-गुण भेदरूप हैं या अभेद रूप हैं।

उत्तर—द्रव्य-गुण भेद-अभेद दोनो रूप हैं।

प्रश्न १४५—द्रव्य और गुण भेद रूप कैसे हैं ?

उत्तर—सज्ञा, सख्या, लक्षण, प्रयोजन की अपेक्षा भेद है।

प्रश्न १४६—द्रव्य और गुण अभेद रूप कैसे है ?

उत्तर—(१) प्रदेशो की अपेक्षा द्रव्य-गुण अभेदरूप है। (२) क्षेत्र की अपेक्षा द्रव्य-गुण अभेदरूप हैं। (३) काल की अपेक्षा द्रव्य-गुण अभेदरूप है।

प्रश्न १४७—द्रव्य और गुण "सज्ञा" अपेक्षा भेद कैसे हैं ?

उत्तर—एक का नाम द्रव्य है दूसरे का नाम गुण है। यह सज्ञा अपेक्षा भेद है।

प्रश्न १४८—द्रव्य और गुण सख्या अपेक्षा भेद कैसे हैं ?

उत्तर—द्रव्य एक है और गुण अनेक हैं। अत यह सख्या अपेक्षा भेद है।

प्रश्न १४९—द्रव्य और गुण लक्षण की अपेक्षा भेदरूप कैसे हैं ?

उत्तर—(१) द्रव्य का लक्षण—गुणो का समूह है। (२) गुण का

लक्षण—जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागो मे और सम्पूर्ण अवस्थाओ मे रहता है उसे गुण कहते है। यह लक्षण अपेक्षा भेद है।

प्रश्न १५०—छह द्रव्यो को पहली तरह से दो तरह बाँटो ?

उत्तर—जीव और अजीव।

प्रश्न १५१—जीव कौन है और अजीव कौन हे ?

उत्तर—ज्ञान-दर्शनवाला एक जीव है बाकी पाँच द्रव्य अजीव है।

प्रश्न १५२—छह द्रव्यो को दूसरी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—रूपी और अरूपी।

प्रश्न १५३—रूपी कोन है ?

उत्तर—स्पर्श-रस-गध-वर्णवाला पुद्गल रूपी है।

प्रश्न १५४—अरूपी कौन है ?

उत्तर—जीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल अरूपी है।

प्रश्न १५५—छह द्रव्यों को तीसरी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—क्रियावतीशक्ति सहित और क्रियावतीशक्ति रहित।

प्रश्न १५६—क्रियावतीशक्ति वाले कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर—जीव और पुद्गल द्रव्य क्रियावतीशक्ति सहित है।

१५७—क्रियावतीशक्ति रहित कौन-कौन द्रव्य है ?

उत्तर—धर्म, अधर्म, आकाश और काल यह चार द्रव्य क्रियावतीशक्ति रहित है।

प्रश्न १५८—छह द्रव्यो को चौथी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—वैभाविकशक्ति सहित और वैभाविकशक्ति रहित।

प्रश्न १५९—वैभाविकशक्ति सहित वाले कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर—जीव और पुद्गल वैभाविकशक्ति वाले द्रव्य है।

प्रश्न १६०—वैभाविकशक्ति रहित वाले कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर—धर्म, अधर्म, आकाश और काल वैभाविकशक्ति से रहित द्रव्य है।

प्रश्न १६१—छह द्रव्यो को पाँचवी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—बहुप्रदेशी और एक प्रदेशी।

प्रश्न १६२—बहुप्रदेशी द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर—जीव, धर्म, अधर्म और आकाशद्रव्य बहुप्रदेशी है।

प्रश्न १६३—एकप्रदेशी द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर—पुद्गल परमाणु और काल द्रव्य यह दो द्रव्य एक प्रदेशी है।

प्रश्न १६४ छह द्रव्यो को छठी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—एक और अनेक।

प्रश्न १६५—एक-एक कौन-कौन से द्रव्य है ?

उत्तर—धर्म, अधर्म और आकाश एक-एक द्रव्य हैं।

प्रश्न १६६—अनेक द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर—जीव, पुद्गल और काल द्रव्य अनेक है।

प्रश्न १६७—छह द्रव्यो को सातवी तरह से दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—जड और चेतन।

प्रश्न १६८—जड़ द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर—पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश और काल जड द्रव्य है।

प्रश्न १६९—चेतन कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर—एक मात्र जीवद्रव्य चेतन है।

प्रश्न १७०—जीव को दो भेद रूप बाँटो ?

उत्तर—(१) ससारी और सिद्ध। (२) ज्ञानी और अज्ञानी। (३) केवलज्ञानी और अल्पज्ञानी।

प्रश्न १७१—संसारी कौन-कौन है ?

उत्तर—१४वे गुणस्थान तक ससारी कहलाते हैं।

प्रश्न १७२—सिद्ध कौन-कौन है ?

उत्तर—१४वें गुणस्थान से पार सब जीव सिद्ध कहलाते है।

प्रश्न १७३—ज्ञानी कौन-कौन है ?

उत्तर—'सम्यग्दृष्टि सो ज्ञानी', इस अपेक्षा चौथे गुणस्थान से सिद्ध दशा तक सब ज्ञानी है।

प्रश्न १७४—अज्ञानी कौन-कौन है ?

उत्तर—निगोद से लगाकर तीसरे गुणस्थान तक चारो गति के जीव अज्ञानी हैं, क्योकि 'मिथ्यादृष्टि सो अज्ञानी ।'

प्रश्न १७५—'केवलज्ञानी सो ज्ञानी', कौन-कौन जीव आते हैं ?

उत्तर—१३, १४वें गुणस्थान तथा सिद्ध दशा वाले केवलज्ञानी जीव आते है क्योकि केवलज्ञानी सो ज्ञानी ।

प्रश्न १७६—अज्ञानी (अल्पज्ञानी) कौन-कौन है ?

उत्तर—'अल्पज्ञानी सो अज्ञानी और केवलज्ञानी सो ज्ञानी' इस अपेक्षा निगोद से लगाकर १२वें गुणस्थान तक गणधरादि सब अज्ञानी (अल्पज्ञानी) हैं।

प्रश्न १७७—जीवो मे भव्य-अभव्य का व्यवहार कहाँ तक है ?

उत्तर—१४वें गुणस्थान तक है। सिद्ध भगवान मे भव्य-अभव्य का भेद नही हैं अर्थात् वे सिद्ध भव्य-अभव्य से रहित है ।

प्रश्न १७८—संसारी के दो भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—भव्य और अभव्य है ।

प्रश्न १७९—भव्य का कोई भेद है ?

उत्तर—एक दूरानदूर भव्य, दूसरा निकट भव्य ।

प्रश्न १८०—अभव्य का कोई भेद है ?

उत्तर—जो कभी सुलटेंगे नही (निगोद से कभी निकलेंगे ही नही) वह अभव्य है। निगोद से निकलकर सुलटने की शक्ति होने पर भी कभी ना सुलटेंगे वह अभव्य हैं।

प्रश्न १८१—छदमस्थ का क्या अर्थ है ?

उत्तर—ज्ञान-दर्शन का आवरण रहे तब तक छद्मस्थ है ।

प्रश्न १८२—छदमस्थ के कितने भेद है ?

उत्तर—साधक और बाधक ।

प्रश्न १८३—साधक कौन-कौन है ?

उत्तर—चौथे गुणस्थान से १२वें गुणस्थान तक साधक है ।

प्रश्न १८४—बाधक-कौन-कौन है ?

उत्तर—निगोद से लगाकर चारो गति के जीव जब तक सम्यक्त्व की प्राप्ति ना हो, तब तक बाधक हैं।

प्रश्न १८५—पुदगल द्रव्य के कितने भेद है ?

उत्तर—परमाणु और स्कध यह दो भेद हैं।

प्रश्न १८६—स्कध के कितने भेद है ?

उत्तर—छह भेद है, (१) अतिस्थूल स्थूल, (२) स्थूल, (३) स्थूल-सूक्ष्म, (४) सूक्ष्मस्थूल, (५) सूक्ष्म, (६) अतिसूक्ष्म (सूक्ष्मसूक्ष्म)

प्रश्न १८७—अति स्थूल स्थूल स्कध किसे कहते है ?

उत्तर—काष्ठ पाषाणादिक जो स्कध छेदन किये जाने पर स्वयमेव जुड नही सकते है, वे स्कध अतिस्थूलस्थूल स्कध है।

प्रश्न १८८—स्थूल स्कध किसे कहते है ?

उत्तर—दूध, जल आदि जो स्कध छेदन किए जाने पर पुन. स्वयमेव जुड जाते है वे स्कध स्थूल हैं।

प्रश्न १८९—स्थूल सूक्ष्म स्कध किसे कहते है ?

उत्तर—धूप-छाया-चाँदनी-अन्धकार इत्यादि जो स्कध स्थूल ज्ञात होने पर भी भेदे नही जा सकते या हस्तादिक से ग्रहण नही किए जा सकते है वे स्कध स्थूल सूक्ष्म है।

प्रश्न १९०—सूक्ष्म-स्थूल स्कध किसे कहते है ?

उत्तर—आँख से न दिखने वाले ऐसे जो चार इन्द्रियो के विषयभूत स्कध सूक्ष्म होने पर भी स्थूल ज्ञात होते हैं। स्पर्शनइन्द्रिय से स्पर्श किए जा सकते है, जीभ से आस्वादन किये जा सकते है, नाक से सूंघे जा सकते है, कान से सुने जा सकते है, वे स्कध सूक्ष्म स्थूल हैं।

प्रश्न १९१—सूक्ष्म स्कंध किसे कहते है ?

उत्तर—इन्द्रिय ज्ञान के अगोचर ऐसे जो कर्म वर्गणारूप स्कध है वे स्कध सूक्ष्म है।

प्रश्न १९२—अतिसूक्ष्म स्कंध किसे कहते है ?

उत्तर—कार्माणवर्गणा से अतीत जो अत्यन्त सूक्ष्म-द्वि-अणुक-पर्यन्त स्कघ हैं वे स्कघ अति सूक्ष्म हैं।

प्रश्न १६३—पुदगल परमाणु और स्कंधों के यह भेद जानने से क्या लाभ है?

उत्तर—अनादि से जीव अज्ञानी है। उसे कहते हैं कि भाई आत्मा चैतन्य मूर्ति है, उसका पुदगल परमाणु और स्कधो के भेदो से तो किसी भी प्रकार का (निश्चय-व्यवहार से) सम्बन्ध नही है। परन्तु स्कधो के निमित्त से जो भाव होते हैं वह भी पुदगल हैं। ऐसा जानकर अपने अनन्त गुणो के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान का आश्रय ले, तो धर्म की शुरूआत होकर, वृद्धि होकर, पूर्ण शान्ति का पथिक बनना यह पुदगलो को जानने का लाभ है।

प्रश्न १६४—द्रव्य के कितने भेद है?

उत्तर—जीव और अजीव दो भेद हैं।

प्रश्न १६५—जीव-अजीव द्रव्य के दो भेद बताने के पीछे क्या रहस्य है?

उत्तर—तू शुद्ध-बुद्ध अविनाशी जीव है। तेरा पर जीवो से और अजीवो से किसी भी अपेक्षा कोई सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अपने शुद्ध-बुद्ध अविनाशी जीव की दृष्टि करके धर्म की प्राप्ति कर लेना यह जीव-अजीव के पीछे रहस्य है। यही बात वृहत द्रव्य सग्रह मे बताई है कि "यद्यपि शुद्ध-बुद्ध एक स्वभाव परमात्मद्रव्य उपादेय है। तथापि हेयरूप अजीव द्रव्यो का भी कथन किया जाता है, क्योकि हेयतत्त्व का परिज्ञान किये बिना उसका आश्रय उपादेय तत्त्व का आश्रय नही किया जा सकता।"

प्रश्न १६६—संख्या की अपेक्षा सबसे ज्यादा कौन द्रव्य हैं?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य है, क्योकि पुद्गल परमाणु द्रव्यो की सख्या सबसे बडी है और अनन्त जीव राशि से अनन्तानन्त गुनी अधिक है।

प्रश्न १६७—क्षेत्र की अपेक्षा सबसे अधिक कौन है?

उत्तर—क्षेत्र अपेक्षा से त्रिकालवर्ती समयो की सख्या से अनन्त गुनी सख्या आकाश द्रव्य के प्रदेशो की है, इसलिए क्षेत्र अपेक्षा से आकाश द्रव्य सबसे बडा है।

प्रश्न १९८—काल की अपेक्षा संख्या ज्यादा किसकी है ?

उत्तर—(१) काल अपेक्षा से प्रत्येक द्रव्य के स्वकालरूप अनादि अनन्त पर्यायें पुदगल द्रव्य की सख्या से अनन्त गुनी हैं, वे पर्यायें काल अपेक्षा से अनन्त है। (२) भूतकाल के अनन्त समयो की अपेक्षा भविष्य काल के समयो की सख्या अनन्त गुनी अधिक है।

प्रश्न १९९—भाव अपेक्षा अनन्तरूप से किसकी सख्या अधिक है ?

उत्तर—भाव अपेक्षा से जीव द्रव्य की ज्ञान गुण के एक समय की केवलज्ञान पर्याय के अविभाग प्रतिच्छेदो की सख्या सबसे अनन्तगुना अधिक है। यह भाव अपेक्षा से अनन्त है।

प्रश्न २००—छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जावे—ऐसा पहला प्रकार क्या है ?

उत्तर—सतपना (सद्द्रव्यलक्षणम्) है।

प्रश्न २०१—छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जावे, ऐसा दूसरा प्रकार क्या है ?

उत्तर—"उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्" अर्थात् त्रिकाल कायम रहकर प्रत्येक समय मे पुरानी अवस्था का व्यय और नई अवस्था का उत्पाद होता है, यह छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला दूसरा प्रकार है।

प्रश्न २०२—छह द्रव्यो मे समानरूप से पाया जावे, ऐसा तीसरा प्रकार क्या है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने गुणो और पर्यायो का मालिक होता है। दूसरे द्रव्यो के गुणो और पर्यायो का मालिक नही होता है यह छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला तीसरा प्रकार है।

प्रश्न २०३—छहों द्रव्यो मे समान रूप में पाया जावे, ऐसा चौथा प्रकार क्या है?

उत्तर—गुण द्रव्य के आश्रित रहते हैं। गुण-गुण के आश्रित नही होते। यह छहों द्रव्यो में समान रूप से पाया जाने वाला चौथा प्रकार है।

प्रश्न २०४—छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जावे, ऐसा पाँचवां प्रकार क्या है?

उत्तर—"नित्य-अनित्यपना" छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला, पाँचवा प्रकार है।

प्रश्न २०५—छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला, ऐसा छठा प्रकार क्या है?

उत्तर—"सामान्य और विशेषपना" यह छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला छठा प्रकार है।

प्रश्न २०६—छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला सातवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर—"स्यादवाद-अनेकान्तपना" यह छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला, सातवाँ प्रकार है।

प्रश्न २०७—छहो द्रव्यो में समान रूप से पाया जाने वाला ऐसा आठवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर—अपने द्रव्य मे अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मो के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं, वे परस्पर एक दूसरे का स्पर्श नही करते। यह छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला आठवाँ प्रकार है।

प्रश्न २०८—छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला ऐसा नौवा प्रकार मोक्षमार्ग मे क्या बताया है?

उत्तर—अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी .

लिए परिणमे हैं। कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाही। यह छह द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला, नौवाँ प्रकार है।

प्रश्न २०९—छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला, ऐसा दसवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर—एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ भी नही कर सकता, उसे परिणमित नही कर सकता, प्रेरणा नही कर सकता, लाभ-हानि नही कर सकता, उस पर प्रभाव नही डाल सकता, कोई किसी की सहायता या उपकार या अपकार नही कर सकता, ऐसी प्रत्येक द्रव्य-गुण-पर्याय की सम्पूर्ण स्वतन्त्रता अनन्त ज्ञानियो ने अर्थात—(जिन-जिनवर-जिनवरवृषभो ने) पुकार-पुकार कर कही है। यह छहो द्रव्यो मे समान रूप से पाया जाने वाला दसवाँ प्रकार है।

प्रश्न २१०—यह छह द्रव्यों मे समान रूप से पाए जाने वाले दस प्रकारो के जानने का क्या लाभ है?

उत्तर—छह द्रव्य जाने। उनमे समान रूप से पाए जाने वाले दस प्रकारो को जाना। उनमे से मुझ निज आत्मा को छोडकर किसी दूसरे जीवो से तथा बाकी पाँच द्रव्यो के द्रव्य-गुण पर्यायो के साथ मेरा किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नही है। मात्र मेरा तो अपने अनन्त गुणो के अभेद पिन्ड ज्ञायक भगवान के गुण-पर्यायो के साथ ही प्रयोजन है, और से नही हैं। ऐसा जानकर अपने मे लीन होना, यह दस प्रकारो को जानने का लाभ है।

प्रश्न २११—मेरी आत्मा का तो अपने गुण-पर्यायो के साथ प्रयोजन है और से नहीं है, इससे क्या लाभ है?

उत्तर—मैं (जीव) सदैव अरूपी होने से मेरे अवयव भी सदैव अरूपी ही हैं। इसलिए किसी काल मे निश्चय से या व्यवहार से हाथ पैर आदि चलाना, स्थिर रखना आदि पर द्रव्य की कोई भी अवस्था मै (जीव) नही कर सकता। ऐसा निर्णय होना, यह अपने गुण-पर्यायो को जानने का लाभ है।

प्रश्न २१२—छहढाला मे जीव का स्वरूप (अर्थात् मेरा स्वरूप) क्या बताया है और क्या नहीं, उसे स्पष्ट समझाओ ?

उत्तर—"चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ-धर्म अधर्म-काल, इनते न्यारी है जीव चाल।"

भावार्थ—(१) मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूँ। (२) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है। (३) आँख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है। (४) चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मेरी आत्मा ही अनुपम है। (६) मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म-अधर्म आकाश एक-एक, लोक प्रमाण असख्यात काल-द्रव्य हैं। इन सब द्रव्यो मे मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है, क्योकि इन सब द्रव्यो का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव पृथक-पृथक हैं। ऐसा छहढाला मे बताया है।

प्रश्न २१३—आप कहते हो एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य से सम्बन्ध नहीं है तो शास्त्रो मे क्यो लिखा है कि—(१) कर्म चक्कर कटाता है। (२) जीव पुदगल का और पुदगल जीव का उपकार करता है (३) धर्मद्रव्य जीव-पुदगल को चलाता है आदि व्यवहार के कथन शास्त्रो से भरे पडे हैं, क्या यह बातें झूठी लिखी हैं ?

उत्तर—यथार्थ बात कहने मे नही आती है इसलिए जैसे-किताबो की अलमारी बोलने मे आता है। वास्तव मे तो अलमारी लकडी की है परन्तु उसमे किताब रखते है तो अलमारी किताबो की बोलने मे आती है, उसी प्रकार कर्म चक्कर कटाता है आदि व्यवहार कथन है।

प्रश्न २१४—व्यवहार कथन को जैसा का तैसा अर्थात सांचा कथन माने तो क्या होगा ?

उत्तर—(१) पुरुषार्थसिद्धयुपाय मे 'तस्य देशना नास्ति' कहा है। (२) समयसार कलश मे "यह अज्ञान मोह अन्धकार है

सुलटना दुर्निवार है"। (३) प्रवचनसार मे "पद-पद पर धोखा खाता है"। (४) उसके धर्म के अग अन्यथा रूप होकर मिथ्याभाव को प्राप्त होते हैं, ऐसा मोक्षमार्ग प्रकाशक मे बताया है।

प्रश्न २१५—व्यवहार के कथन को सच्चा मानने वाले को "तस्य देशना नास्ति" आदि क्यों कहा है ?

उत्तर—"व्यवहारनय स्व-द्रव्य और पर-द्रव्य को, स्वद्रव्य के भावो को और पर द्रव्यो के भावो को तथा कारण-कार्यादिक को किसी को किसी मे मिलाकर निरूपण करता है। अत व्यवहार के कथन का वैसा का वैमा श्रद्धान करने से मिथ्यात्व दृढ होता है इसलिए उस श्रद्धान का त्याग करना और निश्चयनय स्वद्रव्य और परद्रव्य को, स्वद्रव्य के भावो को और परद्रव्यो के भावो को तथा कारण-कार्यादिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नही करता है उसके श्रद्धान से सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होती है। इसलिए व्यवहार के कथन को सच्चा मानने वाले को 'तस्य देशना नास्ति' आदि शब्दो से आचार्यो ने सम्बोधन किया है।

प्रश्न २१६—जहाँ व्यवहार कथन हो, वहा क्या अर्थ करना चाहिये ?

उत्तर—जहाँ व्यवहार से कथन हो उसका अर्थ 'ऐसा है नही किन्तु निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है' ऐसा जानना चाहिए। (२) निमित्त की मुख्यता से कथन होता है किन्तु निमित्त की मुख्यता से कार्य नही होता है, ऐसा व्यवहार कथन का अभिप्राय समझना चाहिए।

प्रश्न २१७—सर्वज्ञ देव का वीतरागी भेद विज्ञान क्या है ?

उत्तर—जगत मे छहो द्रव्य एक ही क्षेत्र मे विद्यमान होने पर भी कोई द्रव्य दूसरे द्रव्य के स्वभाव को स्पर्श नही करता। प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप त्रिस्वभाव मे ही वर्तता है,

इसलिए प्रत्येक द्रव्य अपने स्वभाव को ही स्पर्श करता है—यह है सर्वज्ञ देव कथित वीतरागी भेद विज्ञान।

प्रश्न २१८—सर्वज्ञदेव कथित वीतरागी भेद विज्ञान को मानने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर—(१) निमित्त-उपादन का सही स्पष्टीकरण इसमे आ जाता है उपादान और निमित्त यह दोनो पदार्थ एक साथ प्रवतमान होने पर भी, उपादानरूप पदार्थ अपने उत्पाद-व्यय ध्रुवतारूप स्वभाव को ही स्पर्श करता हे निमित्त को किंचित् मात्र भी स्पर्श नही करता है। (२) निमित्त भूत पदार्थ भी उसके अपने उत्पाद-व्यय ध्रुवतारूप स्वभाव का ही स्पर्श करता है उपादान को वह किंचित् मात्रा भी स्पर्श नही करता। (३) निमित्त—उपादान दोनो पृथक्-पृथक् अपने अपने स्वभाव मे ही प्रवर्तते हैं, परिणमन करते हैं।

प्रश्न २१९—निमित्त-उपादान पृथक्-पृथक कार्य करते हैं एक दूसरे का कोई सम्बन्ध नहीं है इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—पूज्य गुरुदेव कहते हैं अहो ! पदार्थों का यह स्वभाव भली-भाँति पहचान ले, तो भेदज्ञान होकर स्व-द्रव्य के आश्रय से निर्मल पर्याय का उत्पाद और मलिनता का व्यय हो, उसका नाम धर्म है। यह सर्वज्ञ के सर्व उपदेश का तात्पर्य है।

प्रश्न २२०—शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से द्रव्य का लक्षण पचाध्यायी मे क्या बताया है ?

उत्तर—(१) जो सतस्वरूप, (२) स्वत सिद्ध, (३) अनादिअनन्त (४) स्वसहाय, (५) निर्विकल्प अर्थात् अखण्डित वह द्रव्य है। ऐसा बताया है।

प्रश्न २२१—पचध्यायी मे पर्यायर्थिकनय से द्रव्य का लक्षण क्या बताया है ?

उत्तर—(१) गुण पर्यायवद् द्रव्यम्, (२) गुणपर्याय समुदायो द्रव्यम्, (३) गुण समुदायो द्रव्यम्, (४) समगुण पर्यायो द्रव्यम

(५) उत्पाद व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्-यह सब पर्यार्थिक नय से द्रव्य के लक्षण हैं।

प्रश्न २२२—पचाध्यायी में प्रमाण स द्रव्य का लक्षण क्या बताया है ?

उत्तर—जो द्रव्य-गुण-पर्याय वाला है वही द्रव्य उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्त है तथा वही द्रव्य अखण्ड सत् अनिर्वचनीय है।

प्रश्न २२३—स्वत सिद्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर—वस्तु पर से सिद्धि नही है, ईश्वरादि की बनाई हुई नही है, स्वत स्वभाव से स्वयसिद्ध है। यह तात्पर्य स्वत सिद्ध से है।

प्रश्न २२४—अनादिअनन्त किसे कहते हैं ?

उत्तर—वस्तु क्षणिक नहीं है। सत् की उत्पत्ति नही है। न सत् का नाश होना है वह अनादि से है और अनन्तकाल रहेगी—यह तात्पर्य अनादिअनन्त से है।

प्रश्न २२५—स्वसहाय किसे कहते हैं ?

उत्तर—(१) पदार्थ अन्य पदार्थों से नही है। निमित्त या अन्य पदार्थों से न टिकता है और न परिणमन करता है। (२) अनादि-अनन्त स्वभाव विभाव या शुद्धरूप स्वय अपने परिणमन के कारण परिणमता है (३) कभी किसी पदार्थ का अश न स्वय अपने मे लेता है और न अपना कोई अश दूसरे को देता है। यह तात्पर्य स्वसहाय से है।

प्रश्न २२६—अनादिअनन्त और स्वसहाय मे क्या अन्तर है ?

उत्तर—अनादिअनन्त मे उत्पत्ति और नाश से रहित बताना है और स्वसहाय मे उसकी स्वतन्त्र स्थिति तथा स्वतन्त्र परिणमन बताना है इतना अन्तर है।

प्रश्न २२७—निर्विकल्प (अखण्डित) किसे कहते है ?

उत्तर—जिसके द्रव्य से क्षेत्र से काल से ओर भाव से किसी

प्रकार सर्वथा खण्ड न हो सकते हो, उसे निर्विकल्प (अखण्डित) कहते है।

प्रश्न २२८—महासत्ता किसे कहते हैं

उत्तर—सामान्य को, अखण्ड को अभेद को महासत्ता कहते हैं।

प्रश्न २२९—अवान्तर सत्ता किसे कहते हैं ?

उत्तर—विशेष को, खण्ड को, भेद को अवान्तर सत्ता कहते है।

प्रश्न २३०—क्या महासत्ता और अवान्तर सत्ता के प्रदेश भिन्न-भिन्न हैं ?

उत्तर—नही, प्रदेश एक ही है मात्र अपेक्षाकृत भेद हैं क्योंकि वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है।

प्रश्न २३१—प्रत्येक द्रव्य का स्वचतुष्टय क्या है ?

उत्तर—(१) द्रव्य—वह द्रव्य है। (२) उसका क्षेत्र वह क्षेत्र है। (३) उसका काल—वह काल है। (४) उसका भाव वह भाव है।

प्रश्न २३२—प्रत्येक द्रव्य का चतुष्टय उस उस द्रव्य के अन्दर है या बाहर है ?

उत्तर—उसके अन्दर ही है बाहर नही है।

प्रश्न २ ३—कोई सामान्य को न माने तो क्या नुकसान है ?

उत्तर—मोक्ष का पुरुषार्थ नही हो सकेगा।

प्रश्न २३४—कोई विशेष को न माने तो क्या नुकसान है ?

उत्तर—ससार और मोक्ष ही नही रहेगा।

प्रश्न २३५—सामान्य विशेष से क्या जानना चाहिए ?

उत्तर—अपने सामान्य और विशेप दोनो को जानकर अपने सामान्य की ओर दृष्टि करने से पर्याय मे से विकार का अभाव और धर्म का उत्पाद होता है। फिर जैसे-जैसे अपने सामान्य मे एकाग्रता करता जाता है क्रम से वृद्धि करके परिपूर्ण मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न २३६—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं इसको जानने से क्या-क्या लाभ रहे ?

उत्तर—(१) अपनी महिमा आ जाती है। (२) नौ प्रकार के समूह से दृष्टि हट जाती है। (३) सम्यग्दर्शन से लेकर सिद्धदशा तक की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है यह पता चल जाता है। (४) गुणो की सख्या का माप क्या है यह पता चल जाता है। (५) द्रव्य मे गुण किस प्रकार है यह पता चल जाता है। (६) द्रव्य मे गुण किस प्रकार नही है यह पता चल जाता है। (७) मिथ्यात्वादि ससार के पाँच कारणो का तथा पच परावर्तन आदि का अभाव हो जाता है।

प्रश्न २३७—गुणो के समूह को द्रव्य कहते हैं तो प्रत्येक द्रव्य कैसा कैसा है ?

उत्तर—(१) प्रत्येक द्रव्य 'सत्' है। (२) प्रत्येक द्रव्य "उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य" वाला है। (३) प्रत्येक द्रव्य अपने गुण पर्यायो का मालिक है। (४) प्रत्येक द्रव्य के गुण द्रव्य के आश्रित रहते हैं। (५) प्रत्येक द्रव्य नित्य-अनित्यरूप है। (६) प्रत्येक द्रव्य सामान्य-विशेष स्वरूप है। (७) प्रत्येक द्रव्य स्याद्वाद-अनेकान्त स्वरूप है। (८) प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने गुण पर्यायो को स्पर्श करते है। (९) प्रत्येक द्रव्य अनादि-निधन है। (१०) प्रत्येक द्रव्य स्वतन्त्र है। (११) प्रत्येक द्रव्य एक-अनेक रूप है। (१२) प्रत्येक द्रव्य तत्-अतत् रूप है। (१३) प्रत्येक द्रव्य सत्-असत् रूप है। (१४) प्रत्येक द्रव्य सामान्य विशेष गुण वाला है।



सम्यग्दृष्टि जीवने दुर्गति गमन न थाय।
कदी जाय तो दोष नहिं, पूर्वकर्म क्षय थाय ।।योग ८८।।

सम्यग्दृष्टि जीव दुर्गति मे नही जाते। (पूर्वबद्ध आयु के कारण) कदाचित् जायें, तथापि वह उनके सम्यक्त्व का दोष नही है, परन्तु उलटा पूर्वकर्मों का क्षय ही करते हैं।

पाठ ५

पर्याय

प्रश्न १—पुद्‌गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसमे स्पर्श रस, गध, वर्ण पाया जावे, उसे पुद्‌गल द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न २—पुद्‌गल के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद हैं। परमाणु और स्कध।

प्रश्न ३—तुम परमाणु हो या स्कध हो ?

उत्तर—परमाणु और स्कध तो पुदगल के भेद है। मैं तो जीव द्रव्य हूँ।

प्रश्न ४—परमाणु किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता है ऐसे सबसे छोटे पुद्‌गल को परमाणु कहते है।

प्रश्न ५—स्कंध किसे कहते हैं ?

उत्तर—दो अथवा दो से अधिक परमाणुओ के बध को स्कध कहते हैं।

प्रश्न ६—स्कध किसकी पर्याय है ?

उत्तर—वह अनन्त पुद्‌गल द्रव्यो की विभाव अर्थ पर्यायो और विभावव्यजन पर्यायो का पिण्ड है।

प्रश्न ७—बंध किसे कहते हैं और बंध कितने प्रकार का है ?

उत्तर—जिस सम्वन्ध विशेष से अनेक वस्तुओ मे एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेप को बध कहते हैं। (१) जीव बध (२) पुद्‌गल बध (३) उभय बध, इस प्रकार तीन प्रकार के बध है।

प्रश्न ८—बंध की परिभाषा मे चार बातें कौन-कौन सी जाननी चाहिये ?

उत्तर (१) सम्बन्ध विशेष होना चाहिये। (२) अनेक वस्तु होनी चाहिये। (३) बाहरी रूप से देखने मे तथा कथन मे एक आना चाहिये। (४) ज्ञान मे जैसा-जैसा वस्तुस्वरूप है वैसा-वैसा ही आना चाहिये।

प्रश्न ९—मेरा सोने का हार है—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—सोने का हार (१) यह सम्बन्ध विशेष है। (२) अनेक परमाणु यह अनेक वस्तु हुई। (३) बाहरी रूप से देखने मे तथा बोलने मे 'मेरा सोने का हार है'—ऐसा आता है। (४) सोने के हार मे अनन्त पुद्गल परमाणु हैं और एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सम्बन्ध नही है। तो मुझ चेतन के साथ सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नही हो सकता है। ऐसा जाने-माने तो उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मेरा सोने का हार है। ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १०—यह मेरी किताब है—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ९ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११—यह मेरी पेंट है—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ९ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १२—यह मेरी अंगूठी है—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ९ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १३—मै कैलाशचन्द्र हूं—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १४—मै क्रोधी हू—इस वाक्य पर बध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १५—यह मेरा मकान है—इस वाक्य पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ६ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १६—शरीर कितने है ?

उत्तर—शरीर पाँच हैं (१) औदारिक शरीर (२) वैक्रियक शरीर (३) आहारक शरीर (४) तैजस शरीर (५) कार्माण शरीर।

प्रश्न १७—औदारिक शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर—मनुष्य और तिर्यचो के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्रश्न १८—वैक्रियक शरीर किसे कहते है ?

उत्तर—जो छोटे-वडे पृथक्-अपृथक् आदि अनेक क्रियाओ को करे ऐसे देव और नारकियो के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते है।

प्रश्न १९—आहारकशरीर किसे किहते हैं ?

उत्तर—आहारक ऋद्धिधारी छट्ठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वो मे कोई शका होने पर अथवा जिनालय आदि की वदना करने के लिए मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित, पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्रश्न २०—तैजसशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर—औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरो मे कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजसशरीर कहते हैं।

प्रश्न २१—कार्माणशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर—ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के समूह को कार्माणशरीर कहते हैं।

प्रश्न २२—एक जीव को एक साथ कितने शरीरों का संयोग हो सकता है ?

उत्तर—एक साथ कम से कम दो और अधिक-से-अधिक चार शरीरो का सयोग हो सकता है ? खुलासा इस प्रकार है—(१) विग्रह गति मे तैजस और कार्माण इन दो शरीरो का सयोग होता है। (२) मनुष्य और तिर्यचो के औदारिक, तैजस और कार्माण इन तीन शरीरो का सयोग होता है। (३) ऋद्धिधारी मुनि को औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण—ऐसे चार शरीरो का सयोग होता है। (४) देव और नारकियो को वैक्रियक, तैजस और कार्माण—इन तीन शरीरो का सयोग होता है।

प्रश्न २३—स्कंध के कितने भेद हैं ?

उत्तर—आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि २२ भेद हैं।

प्रश्न २४—आहारवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर—जो पुद्गल स्कध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन शरीर रूप से परिणमन करता है उसको आहारवर्गणा कहते है।

प्रश्न २५—क्या आहारवर्गणा इन तीन शरीर रूप ही परिणमन करता है या दूसरे किसी प्रकार भी परिणमन करता है ?

उत्तर—आहार वर्गणा मात्र औदारिक, वैक्रियक और आहारक शरीर रूप ही परिणमन करता है दूसरे किसी भी प्रकार से परिणमन नही करता है।

प्रश्न २६—तैजसवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसे तैजसवर्गणा कहते है।

प्रश्न २७—भाषावर्गणा किसे कहते है ?

उत्तर—जो पुद्गल स्कध शब्दरूप परिणमित होता है उसे भाषा-वर्गणा कहते हैं।

प्रश्न २८—मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?

उत्तर—जिस पुद्गल स्कंध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसे मनोवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न २९—कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माणशरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न ३०—कुछ औदारिक शरीर के नाम बताओ ?

उत्तर—(१) भगवान की प्रतिमा, (२) रोटी, (३) परात, (४) किताब, (५) मकान, (६) सोना, (७) चाँदी, (८) रुपया, (९) नोट, (१०) कपड़ा, (११) फोटो, (१२) मेज आदि, सब जो मोटेरूप से देखने मे आता है वह सब औदारिक शरीर हैं।

प्रश्न ३१—प्रतिमा आदि औदारिक शरीर कैसे हैं ?

उत्तर—मनुष्य और तिर्यंचो के शरीर को औदारिक शरीर कहते है, सो प्रतिमा आदि एकेन्द्रिय जीव का शरीर है।

प्रश्न ३२—मनुष्य-तिर्यंचो के सयोगरूप शरीर का क्या नाम है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—औदारिक शरीर है। इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है। जीव तथा अन्य वर्गणाये, मनुष्य तिर्यंचो की आत्मा औदारिकशरीर का कर्त्ता नही है।

प्रश्न ३३—कोई औदारिक शरीर का कर्त्ता मनुष्य और तिर्यंचो की आत्मा को ही माने तो इसका फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ३४—औदारिक शरीर का कर्त्ता जीव को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—औदारिक शरीर का कर्त्ता आहारवर्गणा ही है। जीव से सर्वथा सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी

निज जीवतत्व पर दृष्टि दें तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मनुष्य तिर्यचो का औदारिक शरीर है ऐसा कहा का सकता है। परन्तु ऐसा नही है।

प्रश्न ३५—देव-नारकियों के सयोगरूप शरीर का क्या नाम है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही ?

उत्तर—वैक्रियक शरीर है। इसका कर्त्ता आहारवर्गणा ही है। देव-नारकियो की आत्मा तथा अन्य वर्गणाये वैक्रियक शरीर का कर्त्ता नही है।

प्रश्न ३६—कोइ वैक्रियक शरीर का कर्त्ता देव नारकियों की आत्मा को ही माने तो इसका क्या फल है ?

उत्तर— चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ३७—वैक्रियक शरीर का कर्त्ता देव-नारकियो की आत्मा को मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—वैक्रियक शरीर का कर्त्ता आहारवर्गणा ही है। देव-नारकियो की आत्मा मे सर्वथा इसका सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय मे देव-नारकियो का वैक्रियक शरीर होता है। ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ३८—आहारक ऋद्धिधारी महामुनि के सयोगरूप शरीर का क्या नाम है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—आहारकशरीर है। इसका कर्त्ता आहारवर्गणा ही है। आहारक ऋद्धिधारी मुनि की आत्मा तथा अन्य वर्गणायें आहारक शरीर का कर्त्ता नही है।

प्रश्न ३९—कोई आहारक शरीर का कर्त्ता मुनि की आत्मा को ही माने तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ४०—आहारक शरीर का कर्त्ता मुनि की आत्मा को मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—आहारकशरीर का कर्त्ता आहारवर्गणा ही है। मुनि की आत्मा से इसका सर्वथा सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहार नय से ऐसा कहा जा सकता है कि ऋद्धिधारी मुनि को आहारक शरीर होता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ४१—निगोद से लगाकर १४वें गुणस्थान तक के जीवो के सयोगरूप शरीरो की कान्ति मे निमित्त शरीर का क्या नाम है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—तैजसशरीर है। इसका कर्त्ता तैजस वर्गणा ही है। कोई जीव तथा अन्य वर्गणाये तैजस शरीर का कर्त्ता नही है।

प्रश्न ४२—कोई तैजसशरीर का कर्त्ता जीव को ही माने तो इसका क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ४३—तैजसशरीर का कर्त्ता जीव के मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—तैजसशरीर का कर्त्ता तैजसवर्गणा ही है। किसी जीव से तथा अन्य वर्गणाओ से इसका सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो तब

अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से जीवो के सयोगरूप शरीरो मे कान्ति मे निमित्त तैजसशरीर होता है ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ४४—ज्ञानावरणादि आठ कर्मों का तथा १४८ उत्तर प्रकृतियो का क्या नाम है। इनका कर्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—कार्माणशरीर है। इनका कर्त्ता कार्माणवर्गणा ही है। कोई भी जीव तथा अन्य वर्गणायें कार्माणशरीर का कर्ता नही है।

प्रश्न ४५—कोई कार्माण शरीर का कर्ता आत्मा को ही माने तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ४६—कार्माण शरीर का कर्ता जीव को मानने रूप निगोद बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—कार्माणशरीर का कर्ता कार्माणवर्गणा ही है। किसी भी जीव का कार्माणशरीर के साथ कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो तब अनुपचरित असदभूत व्यवहारनय से आठ कर्मो का तथा १४८ उत्तर कर्म प्रकृतियो का कर्ता-भोक्ता जीव है। ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ४७—दिव्यध्वनि गुरु का वचन क्या है। इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—दिव्यध्वनि तथा गुरु का वचन स्कधरूप पर्याय है। इसका कर्ता भाषा वर्गणा ही है। कोई भगवान या गुरू की आत्मा तथा दूसरी वर्गणायें दिव्यध्वनि आदि का कर्ता नही है।

प्रश्न ४८—कोई दिव्यध्वनि का कर्ता भगवान की आत्मा को

तथा गुरु के वचन का कर्ता गुरू की आत्मा को ही माने तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ४६—दिव्यध्वनि का कर्ता आत्मा को माननेरूप निगोद-बुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—दिव्यध्वनि व गुरू के वचन का कर्ता भाषावर्गणा ही है। किसी भी आत्मा से शब्द का सर्वथा सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अशब्द स्वभावी ज्ञानदर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो तव अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से भगवान की दिव्यध्वनि है, गुरु का वचन है ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ५०—मन क्या है। इसका कर्ता कौन है और कौन नही है?

उत्तर—मन स्कधरूप पर्याय है। मन का कर्ता मनोवर्गणा ही है कोई जीव तथा दूसरी वर्गणाये मन का कर्ता नही है।

प्रश्न ५१—कोई मन का कर्ता जीव को ही माने तो इसका क्या फल है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ५२—मन का कर्ता जीव को मानने रूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—मन का कर्ता मनोवर्गणा है। किसी भी जीव से मन का कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोग मयी निजजीव तत्त्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करे। तब अनुपचरित असदभूत व्यवहारनय से मन सज्ञी पचेन्द्रिय जीवो के होता है। ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ५३—बाई ने दाल बनाई—इसमे दाल बनी यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—दाल बनी स्कध रूप पर्याय है। इसका कर्ता आहारवर्गणा ही है। बाई, आग तथा दूसरी वर्गणाये दाल बनी का कर्ता नही है।

प्रश्न ५४—कोई दाल बनने का कर्त्ता बाई आदि को ही माने तो इसका फल क्या है ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न ५५—आहारवर्गणा के कार्य को बाई की आत्मा का कार्य मानने रूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—दाल आहारवर्गणा मे से उस समय पर्याय की योग्यता से ही बनी है। बाई आदि से नही बनी। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व का आश्रय ले तो निगोद बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करे। तब उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से बाई ने दाल बनाई—ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ५६—दाल उस समय पर्याय की योग्यता से बनी इसको जानने-मानने से धर्म की प्राप्ति कैसे हो जाती है ?

उत्तर—जैसे दाल उस समय अपनी पर्याय की योग्यता से बनी है, उसी प्रकार विश्व का प्रत्येक कार्य अपनी उस समय पर्याय की योग्यता से हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा—ऐसा जानते-मानते ही धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न ५७—कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया—इस वाक्य मे समयसार क्या है ? समयसार का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५८—स्त्री ने रोटी बनाई—इस वाक्य मे रोटी बनी यह क्या है। रोटी का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ५९—ज्ञानावरणीय कर्म का उदय-क्षयोपशम-क्षय क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६०—मेरा मकान है—इस वाक्य मे मकान क्या है। मकान का कर्त्ता कौन है और कौन नही है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६१—बाई ने हलवा बनाया—इस वाक्य मे हलवा क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६२—मैंने बर्फ खाया—इस वाक्य मे बर्फ क्या है। बर्फ का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६३—मैंने कमीज पहनी—कमीज पहनी यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६४—मिल मालिक ने मिल के द्वारा कपड़ा बनाया—इस वाक्य मे कपड़ा बना यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६५—मिस्त्री ने अलमारी बनाई—इस वाक्य मे अलमारी बनी यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६६—पाँच इन्द्रियो वाला जीव है—इस वाक्य मे पाँच इन्द्रियाँ क्या हैं। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६७—दुकानदार ने मशीनो से पैन तैयार किया है—इस वाक्य में पैन तैयार हुआ—यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६८—नौकर ने झाड़ू दी—इस वाक्य मे झाड़ू दी—यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहा है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६९—मैंने पुस्तक वनाई, इस वाक्य मे पुस्तक वनी, यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७०—मैंने डोल से पानी खेंचा, इस वाक्य मे पानी ऊपर आया। यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७१—कारीगर ने लालटेन वनाई, इस वाक्य मे लालटेन क्या है, लालटेन का कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७२—डाक्टर ने चश्मा दिया, इस वाक्य मे चश्मा क्या है, चश्मे का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७३—हलवाई ने पेडा बनाया, इस वाक्य मे पेड़ा क्या है, पेड़ा का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७४—मेरी मोटर है, इस वाक्य मे मोटर क्या है, मोटर का कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७५—रेल क्या है ? रेल का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७६—अणुबम्ब क्या है ? अणुबम्ब का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७७—जहाज क्या है ? जहाज का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ७८—किसान ने गेहूँ उत्पन्न किया, इस वाक्य में गेहूँ क्या है, गेहूँ का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है।

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न—बाई ने चावल पकाया, चावल पका, यह क्या है ? चावल पका का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८०—क्षायिक सम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ, इस वाक्य मे दर्शनमोहनीय का क्षय क्या है ? दर्शनमोहनीय के क्षय का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८१—किताबो की अलमारी है, इस वाक्य मे अलमारी क्या है ? अलमारी का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८२—मेरा मकान बहुत सुन्दर है, इस वाक्य मे सुन्दर मकान क्या है ? सुन्दर मकान का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८३—दवाई से फोड़ा ठीक हुआ, इस वाक्य में फोड़ा ठीक हुआ यह क्या है ? फोड़ा ठीक का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८४—चपरासी ने दरी बिछाई, इस वाक्य मे दरी बिछाई यह क्या है ? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८५—सेठजी ने बढई से पालकी बनवाई, इस वाक्य मे पालकी बनवाई, यह क्या है ? पालकी का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८६—मैंने दिवार पर फोटो टाँगा, इस वाक्य मे फोटो टाँगा यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८७—मैंने रोटी खाई, इस वाक्य मे रोटी खाई, यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८८—आत्मा के वीर्यगुण मे क्षयोपशम अन्तराय कर्म के क्षयोपशम से हुआ, इस वाक्य मे अन्तराय कर्म का क्षयोपशम क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ८९—सातावेदनीय कर्म के उदय होने से शरीर मे साता रहती है, इस वाक्य मे शरीर मे साता क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९०—शरीर मे असाता होने से असातावेदनीय कर्म का उदय होता है। इस वाक्य मे असाता वेदनीय कर्म का उदय क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ९१—अरहत भगवान को अघाति कर्म का उदय है, इस वाक्य मे अघाति कर्म का उदय क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६२—नाम कर्म की प्रकृति क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६३—सुनार ने सोने का हार बनाया, इस वाक्य में सोने का हार क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६४—घड़ीसाज ने घड़ी खराब की, इस वाक्य में घडी खराब यह क्या है, इस का कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६५—द्रव्यकर्म के कारण शरीर फूल गया, इस वाक्य में शरीर फूल गया, यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६६—माली ने फूल उत्पन्न किया, इस वाक्य मे फूल उत्पन्न, यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६७—सेठ की चतुराई से बाग में सन्तरे लगे, इस वाक्य में सन्तरे लगे यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६८—मैंने जूते पहने, इस वाक्य मे जूते पहने यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ६९—आयुकर्म का उदय और क्षय क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १००—अन्तराय कर्म का उदय, क्षय-क्षयोपशम क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०१—मोहनीयकर्म का उपशम-क्षय-उदय, क्षयोपशम क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०२—दर्शनावरणीय कर्म का उदय, क्षय-क्षयोपशम क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०३—मुझे गर्मी लगती है, इस वाक्य मे गर्मी क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०४—मेरा पैर सड़ गया, इस वाक्य मे पैर सड़ गया, यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है।

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०५—मैं हल्का हूं, हल्का क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०६—मैं चिकना हूँ, इस वाक्य मे चिकना क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०७—उसने पुस्तक फाड़ी, इस वाक्य मे पुस्तक फाडी यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर - प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०८—मैंने साइकिल चलाई, इस वाक्य मे साइकिल चली यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १०९—मेरी ताले वनाने की फैक्टरी है, इस वाक्य मे फैक्टरी क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११०—मेरी दुकान में बहुत सामान है, इस वाक्य मे बहुत सामान यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १११—यह चालीस करोड़ रुपया है इस वाक्य मे चालीस करोड़ रुपया यह क्या है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—प्रश्न ५३ से ५६ तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ११२—पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुणो के कार्य को (परिणमन को) पर्याय कहते है।

प्रश्न ११३—पर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद हैं—व्यजन पर्याय और अर्थ पर्याय।

प्रश्न ११४—व्यजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—द्रव्य के प्रदेशत्व गुण के काय को व्यजन पर्याय कहते है।

प्रश्न ११५—अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—प्रदेशत्व गुण के अतिरिक्त शेष अन्य गुणो के कार्यो को अर्थ पर्याय कहते हैं।

प्रश्न ११६—व्यजन पर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद है—(१) स्वभाव व्यजन पर्याय (२) विभाव व्यजन पर्याय।

प्रश्न ११७—स्वभाव व्यजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर निमित्त के सम्बन्ध रहित द्रव्य का जो आकार हो उसे स्वभाव व्यजन पर्याय कहते हैं। जैसे सिद्ध पर्याय का आकार।

प्रश्न ११८—विभावव्यजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर निमित्त के सम्बन्ध से द्रव्य का जो आकार हो उसे विभावव्यजन पर्याय कहते हैं। जैसे जीव की नर-नारकादि पर्याये।

प्रश्न ११९—अर्थपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर—दो भेद हैं। (१) स्वभावअर्थ पर्याय (२) विभाव अर्थ पर्याय।

प्रश्न १२०—स्वभावअर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर निमित्त के सम्बन्ध रहित प्रदेशत्वगुण को छोडकर बाकी गुणो की जो पर्यायें होती है, उसे स्वभाव अर्थपर्याय कहते हैं जैसे जीव के ज्ञान गुण की केवलज्ञान पर्याय।

प्रश्न १२१—विभावअर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर निमित्त के सम्बन्ध वाली प्रदेशत्वगुण को छोडकर बाकी गुणों की जो पर्यायें होती हैं, उसे विभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे जीव के चारित्रगुण की रागद्वेषादि पर्याय।

प्रश्न १२२—जीव और पुद्गल मे कौन-कौनसी पर्यायें हो सकती हैं ?

उत्तर—चारो प्रकार की पर्यायें जीव और पुद्गल मे हो सकती हैं। (१) स्वभावअर्थ पर्यायें, (२) विभावअर्थ पर्याय, (३) स्वभाव-व्यजनपर्यायें, (४) विभाव व्यजनपर्यायें।

प्रश्न १२३—धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्यों मे कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—इन चार द्रव्यो मे मात्र स्वभावअर्थ पर्यायें और स्वभाव-व्यजन पर्यायें ही होती है, विभाव पर्यायें कभी भी नही होती है।

प्रश्न १२४—निगोद से लगाकर चारों गतियो के मिथ्यादृष्टि जीवो में कौन-कौनसो पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—विभाव अर्थपर्यायें और विभावव्यजन पर्यायें ही होती है स्वभाव पर्यायें नही होती हैं।

प्रश्न १२५—सिद्ध भगवान मे कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—स्वभावव्यजन पर्यायें और स्वभाव अर्थ पर्यायें ही होती हैं विभाव पर्यायें नही होती हैं।

प्रश्न १२६—चौथे गुणस्थान से लेकर १४वें गुणस्थान तक कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—(१) विभावव्यजन पर्याये (२) स्वभावअर्थ पर्याये (३) विभावअर्थ पर्याये इस प्रकार तीन प्रकार की पर्याये होती है।

प्रश्न १२७—चौथे गुणस्थान से लेकर १४वे गुणस्थान तक तीनों पर्याये एक सी होती हैं या कुछ अन्तर है ?

उत्तर—चौथे गुणस्थान से लेकर १४वे गुणस्थान तक प्रदेशत्व गुण का विभाव रूप परिणमन है ही। परन्तु बाकी गुणो मे जितनी जितनी शुद्धि है वह स्वभाव अर्थपर्यायें हैं जितनी जितनी उसमे अशुद्धि है वह विभावअर्थ पर्याये है।

प्रश्न १२८—संसार दशा मे चौथे गुणस्थान से १४वें तक विभाव-व्यजन पर्यायें ही हैं। परन्तु अर्थपर्याय की शुद्धि और अशुद्धि को स्पष्ट समझाओ ?

उत्तर—(१) चौथे गुणस्थान मे श्रद्धा गुण की स्वभाव अर्थ पर्याये पूर्ण प्रगट हो जाती है। चारित्र मे एकदेश स्वभाव अर्थ पर्याय प्रगट हो जाती है। परन्तु चारित्र मे पूर्ण स्वभाव अर्थपर्याय प्रगट नही है। (२) बारहवें गुणस्थान मे चारित्र गुण की पूर्ण स्वभाव अर्थ पर्याय प्रगट हो जाती है। ज्ञान-दर्शन, वीर्य आदि गुणो मे क्षयोपशम रूप एकदेश स्वभाव अर्थ पर्याय प्रगट है। परन्तु पूर्ण स्वभाव अर्थ पर्याय प्रगट नही है। (३) १३वे गुणस्थान मे ज्ञान दर्शन वीर्य की पूर्ण स्वभावअर्थ पर्याये प्रगट हो जाती हैं। योगगुण आदि मे स्वभाव अर्थ पर्याये प्रगट नही हैं। (४) १४वे गुणस्थान मे योगगुण की स्वभाव-अर्थपर्याय पूर्ण प्रगट हो जाती है अभी वैभाविक गुण, क्रियावती शक्ति, अव्याबाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणो की स्वभावअर्थ पर्याये प्रगट नही हैं। (५) १४वें गुणस्थान के अन्त मे वैभाविक गुण, क्रियावतीशक्ति, अव्याबाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व सूक्ष्मत्व आदि गुणो की परिपूर्ण स्वभाव अर्थपर्यायें प्रगट

प्रश्न १२९—शास्त्रो मे आता है कि मिथ्यादृष्टि के भी अस्तित्वादि गुणो की शुद्ध पर्यायें होती है। तव आपने मिथ्यादृष्टि को स्वभाव पर्यायें क्यो नहीं वतलाई ?

उत्तर—जैसे—किसी के घर मे खजाना दवा पड़ा है, परन्तु उसे मालूम नही है, तो कहा जाता है उनके पास खजाना नही है, उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि की अस्तित्वादि गुणो की शुद्ध पर्याये होने पर भी उसे अपने आपका पता ना होने से स्वभाव अर्थ पर्याये नही कही जाती हैं।

प्रश्न १३०· परमाणु मे कौन-कौनसी पर्यायें होती है ?

उत्तर—परमाणु मे मात्र स्वभावव्यजन पर्याय और स्वभावअर्थ पर्यायि ही होती हैं विभाव पर्यायि नही होती हैं।

प्रश्न १३१—स्कंध मे कौन-कौनसी पर्यायें ही होती हैं ?

उत्तर—विभावव्यजन पर्याय और विभाव अर्थ पर्याये ही होती हैं।

प्रश्न १३२—जैसे—आत्मा मे चौथे गुणस्थान से १४वें गुणस्थान तक स्वभावअर्थ पर्यायें और विभावअर्थ पर्यायें होती हैं, उसी प्रकार स्कंध मे इस प्रकार होता है या नही ?

उत्तर—नही होता है। स्कन्धो मे चाहे दो परमाणु का स्कन्ध हो या करोड़ो परमाणुओ का स्कन्ध हो, उसमे दोनो विभाव पर्यायें ही होती हैं, स्वभाव पर्याय नही होती हैं।

प्रश्न १३३—द्रव्यलिंगी मुनि को कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—विभावव्यजन पर्याय और विभावअर्थ पर्याये होती हैं।

प्रश्न १३४—एक द्रव्य मे व्यजनपर्याय कितनी होती हैं ?

उत्तर—एक द्रव्य मे एक ही व्यजनपर्याय होती है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य मे एक-एक ही प्रदेशत्वगुण होता है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यजन पर्याय कहते है।

प्रश्न १३५—एक द्रव्य मे अर्थपर्यायें कितनी होती हैं ?

उत्तर—एक द्रव्य मे अर्थ पर्याये अनन्त होती है, क्योकि प्रदेशत्व गुण को छोडकर बाकी गुणो के परिणमन को अर्थ पर्याय कहते हैं।

प्रश्न १३६—एक आत्मा मे व्यंजनपर्याय कितनी है ?

उत्तर–एक ही है क्योकि एक आत्मा मे एक प्रदेशत्व गुण है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यजन पर्याय कहते हैं।

प्रश्न १३७—एक आत्मा मे अर्थपर्यायें कितनी है ?

उत्तर—एक आत्मा मे अनन्त गुण है। उनमे एक प्रदेशत्व गुण को छोडकर बाकी जितने गुण हैं उतनी अर्थ पर्याये एक आत्मा में होती हैं, क्योकि प्रदेशत्व गुण को छोडकर बाकी गुणो के परिणमन को अर्थपर्यायें कहते हैं।

प्रश्न १३८—एक क्षेत्रावगाही औदारिक शरीर में व्यजनपर्यायें कितनी है ?

उत्तर—जितने परमाणु हैं, उतनी ही व्यजन पर्याये हैं। क्योकि एक परमाणु मे एक व्यजनपर्याय होती है।

प्रश्न १३९—जीव द्रव्य मे विभावव्यंजन पर्याय कहाँ तक होती है ?

उत्तर—पहले गुणस्थान से लेकर १४वे गुणस्थान तक विभाव व्यजन पर्याय होती हैं अर्थात मात्र सिद्ध भगवान को छोडकर सब जीवो मे विभाव व्यजन पर्याये होती हैं स्वभावव्यजन पर्याय नही होती है।

प्रश्न १४०—सादिअनन्त स्वभाव व्यंजन पर्याय किसमें होती है ?

उत्तर—सिद्ध भगवान मे ही होती है औरो मे नही होती है।

प्रश्न १४१—सादिसान्त स्वभाव व्यजन पर्याय किसमे हो सकती है ?

उत्तर—पुद्गल परमाणु मे ही सकती है।

प्रश्न १४२—अनदिअनन्त स्वभावव्यंजन पर्याय किसमे होती है ?

उत्तर—धर्म, अधर्म आकाश और काल द्रव्य मे होती है।

प्रश्न १४३—स्वभावव्यंजन पर्याय मे अन्तर हो और स्वभाव अर्थ पर्याय मे समानता हो। क्या किसी द्रव्य मे ऐसा होता है?

उत्तर—सिद्ध दशा मे स्वभावव्यजन पर्याय मे अन्तर है और सव स्वभावअर्थ पर्यायो मे समानता है।

प्रश्न १४४—सभी सिद्धो में स्वभाव्यंजन पर्याय में अन्तर क्यो है?

उत्तर—किसी आत्मा का आकार सात हाथ का, किसी का ५०० धनुष का होता है। इसलिए सभी सिद्धो मे स्वभावव्यजन पर्याय मे अन्तर है।

प्रश्न १४५—स्वभावव्यजन पर्याय मे समानता हो और स्वभाव-अर्थ पर्यायो में अन्तर हो। क्या ऐसा किसी द्रव्य में होता है?

उत्तर—परमाणुओ मे स्वभावव्यजन पर्याय मे समानता होती है। और स्वभावअर्थ पर्यायो मे अन्तर होता है।

प्रश्न १४६—जब सब अर्थपर्याय शुद्ध हो, साथ ही व्यंजन पर्याय शुद्ध हो, ऐसा किन-किन द्रव्यो मे और कब होता है?

उत्तर—मात्र सिद्ध होने वाले जीव द्रव्य मे होता है औरो मे नही होता है।

प्रश्न १४७—सादिसान्त स्वभावव्यजन पर्याय और स्वभावअर्थ पर्यायें किस द्रव्य मे एक साथ होती है?

उत्तर—पुद्गल परमाणु मे ही होती है।

प्रश्न १४८—अनादिअनन्त स्वभावव्यंजन पर्याय और स्वभाव-अर्थ पर्यायें एक साथ किस किस द्रव्य में होती है?

उत्तर—धर्म, अधर्म, आकाश और काल मे अनादिअनन्त दोनो स्वभाव पर्याये ही होती हैं।

प्रश्न १४९—केवलज्ञान क्या है?

उत्तर—जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १५०—मिथ्यात्व क्या है ?

उत्तर - जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १५१—यथाख्यातचारित्र क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चरित्रगुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १५२—कम्पन क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के योग गुण की विभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १५३—मन पर्याय ज्ञान क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के ज्ञान गुण की एकदेश स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १५४—चीनी मे मीठापन क्या है ?

उत्तर—पुद्‌गलद्रव्य के रस गुण की विभाव अर्थ पर्याय हैं।

प्रश्न १५५—भगवान की प्रतिमा क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्व गुण की विभावव्यजन पर्याय है।

प्रश्न १५६—गोल नीबू क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्यायें हैं।

प्रश्न १५७—खट्टा नीबू क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के रस गुण की विभावअर्थ पर्याये हैं।

प्रश्न १५८—अंधेरा क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के वर्ण गुण की कालापना विभावअर्थ पर्याये है।

प्रश्न १५९—उजाला क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के वर्ण गुण की सफेदपना विभावअर्थ पर्याये हैं।

प्रश्न १६०—बरफ क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के स्पर्श गुण की ठडापना विभाव अर्थ पर्याये है।

प्रश्न १६१—बादलो का रग बदलना क्या है ?

उत्तर—आहार वर्गणा के वर्ण गुण की भिन्न-भिन्न रंगपना विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १६२—सम्यग्ज्ञान क्या है ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञान गुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १६३—औपशमिक सम्यक्त्व क्या है ?

उत्तर—आत्मा के श्रद्धा गुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १६४—सिद्ध दशा क्या है ?

उत्तर—आत्मा के सम्पूर्ण गुणों की स्वभाव अर्थ पर्यायें और स्वभावव्यजन पर्याय है।

प्रश्न १६५—पूजा का भाव क्या है ?

उत्तर—आत्मा के चारित्र गुण की विभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १६६—पूजा में सामग्री चढ़ाने की क्रिया क्या है ?

उत्तर—आहार वर्गणा के क्रियावती शक्ति की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १६७ - लोटा क्या है ?

उत्तर—आहार वर्गणा के प्रदेशत्व गुण की विभाव व्यजन पर्यायें हैं।

प्रश्न १६८—केवलदर्शन क्या है ?

उत्तर—जीव द्रव्य के दर्शन गुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है।

प्रश्न १६९—बदबू क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के गंध गुण की दुर्गन्ध रूप विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १७०—खुशबू क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के गंध गुण की सुगन्ध रूप विभावअर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १७१—गोल रसगुल्ला क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्व गुण की विभावव्यजन पर्यायें हैं।

प्रश्न १७२—मीठा रसगुल्ला क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के रस गुण की मीठा विभावअर्थ पर्यायें है।

प्रश्न १७३—भावश्रुत ज्ञान क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एक देश स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न १७४—बुखार क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के स्पर्श गुण की उष्णरूप विभावअर्थ पर्याये है।

प्रश्न १७५—भारी क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के स्पर्श गुण की विभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्रश्न १७६—शुभाशुभभाव क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चारित्र गुण की विभावअर्थ पर्याये हैं।

प्रश्न १७७—सकलचारित्र क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न १७८—देशचारित्र क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न १७९—अनन्तानुबधी कषाय के अभाव रूप स्वरूपाचरण-चारित्र क्या है ?

उत्तर—जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थ पर्याय है।

प्रश्न १८०—रोटी क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्यायें हैं

प्रश्न १८१—बेलन क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्यायें हैं।

प्रश्न १८२—कड़ुवा क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य के रसगुण की कड़ुवा विभावअर्थ पर्याये हैं।

प्रश्न १८३—स्वाटर क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्याय हैं।

प्रश्न १८४—बक्सा क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्याये है।

प्रश्न १८५—घड़ा क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्यायें है

प्रश्न १८६—चश्मा क्या है ?

उत्तर—आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यजन पर्याये है।

प्रश्न १८७—मैं सुवह उठा, इस वाक्य मे पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—शरीर आहारवर्गणा की क्रियावती शक्ति से उठा मेरे से (आत्मा से) नही उठा, तब पर्याय को माना और शरीर के उठने रूप क्रियावती शक्ति के कार्य को आत्मा का कार्य माने तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न १८८—शरीर के उठनेरूप पुदगलों के कार्यो को आत्मा का कार्य माने तो इसका क्या फल होगा ?

उत्तर—चारो गतियो मे घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल होगा।

प्रश्न १८९—शरीर के उठने को आत्मा का कार्य मानने रूप निगोद वुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर—शरीर के उठने रूप कार्य मे प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय पर्याय की योग्यता से ही उठा है मेरे से (आत्मा से) नही—ऐसा जानकर ज्ञान दर्शन उपयोगमयी निज आत्मा का आश्रय ले, तो निगोद वुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तव अनुपचरित असद्भूत व्यवहार से 'मैं सुवह उठा' ऐसा कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न १९०—सुवह उठना—उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ, इसको जानने-मानने से धर्म की प्राप्ति कैसे हो गई ?

उत्तर—जैसे सुवह उठना—उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ है वैसे ही विश्व मे जितने भी कार्य है वे सव उस समय पर्याय

की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं और होते रहेगे—ऐसा मानते ही धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न १९१—मैं सोया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९२—मैंने चाय पी, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९३—मैंने मुंह धोया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९४—मैंने बाल बच्चो को खिलाया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९५ - मैंने दुकान खोली, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९६—मैंने शुद्ध भोजन बनाया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९७—मैंने पूजा बोली, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ मे १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९८—मैंने णमोकार मंत्र की जाप माला द्वारा की, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न १९९—मैंने हाथ उठाया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २००—मैंने सिद्धचक्र का पाठ पूजा की किताब से पढ़ा, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०१—मैंने सिद्ध चक्र का पाठ पूजन की सामग्री से किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०२—मैंने हाथों से पत्थर उठाया, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०३—मैंने चाकू से नीबू के चार टुकड़े किये, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०४—मैंने झाडू से फर्श साफ किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०५—मैंने हाथो से दीवार मे कील ठोकी, पर्याय को कब को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०६—मैंने दूध गरम किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०७—मुझे बुखार आया, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०८—मुझे खांसी आई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २०९—मैंने पलग खड़ा किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१०—मैंने दरवाजा खोला, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २११—मैंने शास्त्र से ज्ञान किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१२—मैंने दोनो आँखों से देखा, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१३—यथाख्यातचारित्र होने से सज्वलन क्रोधादि का अभाव हुआ, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१४—द्रव्यकर्म के कारण राग हुआ, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१५—ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से ज्ञान का क्षयोपशम हुआ, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१६—मैंने कोट पहना, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१७—दर्शनावरणीय के क्षय से केवलदर्शन हुआ, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१८ केवलदर्शन होने से दर्शनावरणीय का क्षय हुआ, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २१९—भक्तामरस्तोत्र के प्रभाव से ताले टूट गये, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२०—मनोरमा के शील के प्रभाव से दरवाजा खुल गया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२१—मैंने कानो पर चश्मा लगाया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२२—बढई ने कुर्सी बनाई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२३—हलवाई ने मिठाई बनाई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२४—पेन्टर ने फोटो बनाई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२५—नाई ने मेरी दाढ़ी बनाई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२६—बाई ने खीर बनाई—पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२७—मेरी आँख लाल हो गई, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२८—मैंने साबुन से धोती धोई, पर्याय को कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ मे १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २२६—मै प्रात काल घूमने जाता हूँ, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३०—वेदनीय कर्म के उदय से शरीर मे साता-असाता होती है, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार दो।

प्रश्न २३१—मै भारी हो गया हूँ, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३२—मै काफी हल्का हो गया हूँ, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३३—मैंने साबुन से हाथ साफ किये, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३४—मैंने दस रुपये से दस गज कपड़ा खरीदा, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १६० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३५—मै पांच मन बोझ उठाता हूँ—पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३६—मैने कागज पर लिखा—पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३७—भगवान ने जीवों का कल्याण किया, पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—प्रश्न १८७ से १९० तक के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न २३८—दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय से क्षायिक सम्यक्त्व हुआ इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) श्रद्धा गुण मे से क्षायिक सम्यक्त्व हुआ, तो गुणो के कार्य को पर्याय कहते है, माना। (२) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिक सम्यक्त्व हुआ, तो "गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं" नही माना।

प्रश्न २३९—क्षायिक सम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ। इसमें गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—कार्माण वर्गणा मे से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ। तो "गुणो के कार्य को पर्याय कहते है" माना। (२) क्षायिक सम्यक्त्व हुआ होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ तो 'गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं' नही माना।

प्रश्न २४०—केवलज्ञानावरणीय कर्म के अभाव से केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) आत्मा के ज्ञान गुण मे से केवलज्ञान की प्राप्ति हुई तो "गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं" माना। (२) केवलज्ञानावरणीय कर्म के अभाव से केवलज्ञान हुआ तो "गुणो के कार्य को पर्याय कहते है" नही माना।

प्रश्न २४१—केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवलज्ञानावरणीय कर्म का अभाव हुआ। इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते है, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) कार्माण वर्गणा मे से केवल ज्ञानावरणीय कर्म का अभाव हुआ, तो "गुणो के कार्य को पर्याय कहते है" माना। (२) केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवल ज्ञानावरणीय कर्म का अभाव हुआ तो गुणो के कार्य को पर्याय कहते है" नही माना।

प्रश्न २४२—आँख से ज्ञान होता है। इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञान गुण मे से ज्ञान आया तो पर्याय को माना और आँख से ज्ञान हुआ तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २४३—गुरु से ज्ञान होता है। इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—ज्ञान आत्मा के ज्ञान गुण मे से आया, तो पर्याय को माना और गुरु से ज्ञान हुआ तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २४४—केवलज्ञान के कारण दिव्यध्वनि होती है इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—भाषावर्गणा से दिव्यध्वनि होती है तो पर्याय को माना। और केवलज्ञान के कारण दिव्यध्वनि होती है तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २४५—दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है। इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—केवलज्ञान आत्मा के ज्ञान गुण मे से होता है, तो पर्याय को माना। और दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २४६—चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथाख्यातचारित्र

होता है। इसमें गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - यथाख्यातचारित्र आत्मा के चारित्र गुण मे से आता है, तो पर्याय को माना और चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथा-ख्यातचारित्र होता है तो पर्याय को नही माना ।

प्रश्न २४७—यथाख्यातचारित्र होने के कारण चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ। इसमे गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—कर्माणवर्गणा मे से चारित्र मोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ तो पर्याय को माना। और यथाख्यातचारित्र होने के कारण चारित्र मोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २४८—बाल बच्चो से सुख मिलता है। इसमें गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) सुख आत्मा के आनन्दगुण मे से आता है तो पर्याय को माना। (२) बाल बच्चो से सुख मिलता है तो पर्याय को नही माना ।

प्रश्न २४६—केवली, श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है, इसमें गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—(१) क्षायिक सम्यक्त्व आत्मा के श्रद्धा गुण मे आता है तो पर्याय को माना। (२) केवली-श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५०—कुम्हार ने घडा बनाया, इसमे गुणों के कार्य को पर्याय कहते है कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—घडा मिट्टी से बना तो पर्याय को माना। और कुम्हार ने घडा बनाया तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५१—घड़ा बनने के कारण कुम्हार को राग आया, इसमे 'गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—राग चारित्रगुण मे से आया, तो पर्याय को माना और घडा बनने के कारण राग आया तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५२—बाई ने रोटी बनाई, इसमें गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) रोटी आटे से बनी तो पर्याय को माना। (२) बाई ने रोटी बनाई तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५३—रोटी बनी तो बाई को राग आया, इसमे 'गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) राग चारित्र गुण मे से आया तो पर्याय को माना। (२) रोटी बनी तो राग आया तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५४—श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया, इसमे 'गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) समयसार शास्त्र आहारवर्गणा से बना तो पर्याय को माना। (२) श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५५—सीमधर भगवान से कुन्दकुन्द भगवान को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुई, इसमे पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर—(१) कुन्दकुन्द भगवान को अपने ज्ञानगुण मे से विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुई तो पर्याय को माना। (२) सीमधर भगवान से कुन्दकुन्द भगवान को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुई तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २५६—सिनेमा देखकर ज्ञान हुआ, इसमे 'गुणो के कार्य को पर्याय कहते हैं कब माना और कब नही माना ?

उत्तर—ज्ञान गुण मे से ज्ञान आया तो पर्याय को माना। और सिनेमा मे से ज्ञान आया तो पर्याय को नही माना।

प्रश्न २६८—पर्याय की दूसरी परिभाषा क्या है ?

उत्तर—परि=समस्त प्रकार से। आय=लाभ, अर्थात् अपने में ही समस्त प्रकार से लाभ मानना, यह पर्याय की दूसरी परिभाषा है।

प्रश्न २६९—पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—परि=समस्त प्रकार से। ऐय=परिणमन, अर्थात् समस्त प्रकार से अपने मे परिणमन, इसे पर्याय कहते हैं।

प्रश्न २७०—परिणमन किसे कहते हैं ?

उत्तर—परि=समस्त प्रकार से। णमन=झुक जाना अर्थात् समस्त प्रकार से अपने मे झुक जाना, इसे परिणमन कहते हैं।

प्रश्न २७१—अवस्था किसे कहते हैं ?

उत्तर—अव=निश्चय। स्था=स्थिति करना, अर्थात् अपने मे ही निश्चय से स्थिति करना, ठहरना उसे अवस्था कहते हैं।

प्रश्न २७२—अखण्ड द्रव्य मे अंश कल्पना करने को क्या कहते हैं ?

उत्तर—पर्याय कहते है।

प्रश्न २७३—पर्याय के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या है ?

उत्तर—अश, भाग, प्रकार, भेद, छेद, उत्पाद-व्यय, क्रमवर्ती, व्यतिरेकी, अनित्य, विशेप, अनवस्थित आदि पर्याय के नामान्तर हैं।

प्रश्न २७४—'व्यतिरेकी' किसे कहते हैं ?

उत्तर—भिन्न-भिन्न को व्यतिरेकी कहते हैं।

प्रश्न २७५—व्यतिरेकी कितने प्रकार का है ?

उत्तर—चार प्रकार का है। (१) देश व्यतिरेक, (२) क्षेत्रव्यतिरेक, (३) काल व्यतिरेक, (४) भाव व्यतिरेक।

प्रश्न २७६—देश व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुण पर्याय के पिण्ड के भेद को देश 'व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न २७७—क्षेत्रव्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर—एक-एक प्रदेश क्षेत्र के भिन्नपने के भेद को 'क्षेत्र व्यतिरेक' कहते है।

प्रश्न २७८—काल व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर—पर्याय के भिन्नत्व के भेद को 'काल व्यतिरेक' कहते है।

प्रश्न २७९—भावव्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुण के भिन्नत्व के भेद को 'भाव व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न २८०—क्रमवर्ती किसे कहते है ?

उत्तर—एक, फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी, फिर पाँचवी इस प्रकार प्रवाह क्रम से जो वर्तन करे, उसे क्रमवर्ती कहते हैं।

प्रश्न २८१—पर्याय को उत्पाद-व्यय क्यो कहते है ?

उत्तर—पर्याय सदा उत्पन्न होती है और विनष्ट होती है, इसलिए पर्याय को उत्पाद-व्यय कहा है। कोई भी पर्याय गुण की भाँति सदैव नही रहती है।

प्रश्न २८२—उत्पाद किसे कहते है ?

उत्तर—द्रव्य मे नवीन पर्याय की उत्पत्ति को उत्पाद कहते हैं।

प्रश्न २८३—व्यय किसे कहते है ?

उत्तर—पूर्व पर्याय के नाश को व्यय कहते हैं।

प्रश्न २८४—ध्रौव्य किसे कहते है ?

उत्तर—उत्पाद और व्यय मे द्रव्य की सद्रशतारूप स्थायी रहने को ध्रौव्य कहते हैं।

प्रश्न २८५—नियमसार मे पर्याय किसे कहा है ?

उत्तर—परि समतान्त भेदमेति गच्छतीति पर्याय अर्थात् जो सर्व और से भेद को प्राप्त करे सो पर्याय है।

प्रश्न २८६—पर्याय तो अनित्य है। तब पर्याय सत् है या असत् ?

उत्तर—पर्याय एक समय पर्यन्त का सत् है। और द्रव्य गुण त्रिकाल सत् हैं। इसलिए द्रव्य गुण और पर्याय तीनो सत् है।

प्रश्न २८६—गुण अश है या अशी ?

उत्तर—(१) द्रव्य की अपेक्षा से गुण उस द्रव्य का अश है। (२) पर्याय की अपेक्षा गुण अशी है।

प्रश्न २८८—पर्याय किसका अंश है ?

उत्तर—(१) पर्याय गुण का एक समय पर्यन्त का अश है। (२) पर्याय द्रव्य का भी एक समय पर्यन्त का अश है।

प्रश्न २८९—अंश-अशी को थोड़े मे समझाइए ?

उत्तर—(१) जब द्रव्य को अशी कहा, तो गुण को अश कहा (२) जब गुण को अशी कहा तो पर्याय को अश कहा।

प्रश्न २९०—पाँच अजीव द्रव्य हैं वह जानते नहीं हैं। तो वे (अजीव) किसी के आधार के बिना कैसे व्यवस्थित रह सकते हैं ?

उत्तर—(१) पाँच अजीव द्रव्य अस्तित्वादि सामान्य गुण और अपने-अपने विशेष गुण सहित हैं। (२) पाचो अजीव द्रव्यो मे सत्पना लक्षण होने से उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्त हैं। उन्हे किसी प्रकार पर की आवश्यकता नही है, क्योकि अनादिनिधन वस्तुए भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा लिए स्वय परिणमती है, किसी की परिणमाई परिणमती नही हैं। क्योकि स्वय कायम रहकर बदलना प्रत्येक वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न २९१—पर्यायें किससे होती हैं ?

उत्तर— द्रव्य और गुणो से होती हैं।

प्रश्न २९२—द्रव्य और गुणो से पर्यायें होती हैं। तो इस अपेक्षा पर्याय के भेद कितने हैं ?

उत्तर—दो भेद हैं—(१) द्रव्य पर्याय, (२) गुणपर्याय।

प्रश्न २९३—गुण पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुण द्वारा पर्याय मे अनेकपने की प्रतिपत्ति, वह गुण-पर्याय है।

प्रश्न २९४—गुण पर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर— दो भेद है—(१) स्वभाव पर्याय (२) विभाव पर्याय।

प्रश्न २९५—स्वभावपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—गुण की जो शुद्ध पर्याय होती है उसे स्वभावपर्याय कहते है। जैसे—केवल ज्ञान, केवल दर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व आदि।

प्रश्न २९६—विभावपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—गुण द्वारा जिस पर्याय मे स्वपर हेतु हो, वह विभाव पर्याय है। जैसे मतिज्ञान आदि पर्याय।

प्रश्न २९७—द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—अनेक द्रव्यात्मक एकता की प्रतिपत्ति के कारण भूत-द्रव्य पर्याय है अर्थात् अनेक द्रव्यो मे जिससे एकपने का ज्ञान हो वह द्रव्य पर्याय हैं।

प्रश्न २९८—द्रव्यपर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर—दो भेद हैं। समानजातीय द्रव्यपर्याय और असमान-जातीय द्रव्य पर्याय।

प्रश्न २९९—समानजातीय द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—एक जाति के अनेक द्रव्यो मे जिससे एकपने का ज्ञान हो वह समानजातीय द्रव्य पर्याय है। जैसे—द्वि-अणुक, त्रिअणुक आदि स्कध।

प्रश्न ३००—समानजातीय द्रव्य पर्याय के कुछ नाम बताओ?

उत्तर—बिस्तरा, कम्बल, रोटी, हलवा, मेज, किताब, कुर्सी, कमीज, टोपी, तस्वीर, थाली, लोटा आदि समानजातीय द्रव्य पर्याय कही जाती हैं क्योकि एक जाति के अनेक द्रव्यो मे एकपने का ज्ञान होता है इसलिए इन्हे समानजातीय द्रव्य पर्याय कहते हैं।

प्रश्न ३०१—समानजातीय द्रव्यपर्याय मे चार बातें कौन-कौन सी आई?

उत्तर—(१) एक जाति होनी चाहिए। (२) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (३) अनेक द्रव्यो मे एकपने का कथन होना चाहिए (४) ज्ञान मे जैसा-जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा-वैसा ही ज्ञान मे आना चाहिए।

प्रश्न ३०२—मेरा बिस्तरबन्द है—इस वाक्य में समानजातीय द्रव्यपर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—बिस्तरबन्द—समानजातीय द्रव्यपर्याय है—बिस्तरबन्द मे (१) पुद्गल एक जाति के द्रव्य है। (२) अनेक परमाणु हैं। (३) मेरा बिस्तरबन्द है ऐसा कथन किया जाता है। (४) [अ] बिस्तरबन्द मे आहार वर्गणा के अनेक परमाणु हैं। एक-एक परमाणु का दूसरे परमाणुओ मे अत्यन्ताभाव है। [आ] बिस्तरबन्द स्कधरूप पर्याय मे प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का दूसरे परमाणुओ की वर्तमान पर्यायो मे अन्यान्योभाव हैं। [इ] बिस्तरबन्द के प्रत्येक परमाणु मे अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक-एक व्यजन पर्याय और अनन्त-अनन्त अर्थ पर्याय सहित विराज रहा है। [ई] जब बिस्तरबन्द मे परमाणुओ की एक पुदगल जाति होते हुए भी परस्पर मे कोई कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है। तब मुझ चेतन जीवतत्त्व के साथ उनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नही हो सकता है। ऐसा श्रद्धान ज्ञान वर्ते तो उपचरित असदभूत व्यवहारनय से मेरा बिस्तरबन्द है ऐसे कथन को समानजातीय द्रव्य पर्याय कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ३०३—मेरा कम्बल है, कम्बल पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०४—मै रोटी खाता हूं, रोटी पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०५—मैंने हलवा बनाया, हलवे पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०६—बढई ने मेज बनाई, मेज पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०७—मैने पुस्तक बनाई, पुस्तक पर समान जातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०८—बढ़ई ने कुर्सी बनाई, कुर्सी पर समान जातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०८ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३०९—दर्जी नें कमीज बनाई, कमीज पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर ससझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१०—दुकानदार ने टोपी बेची, टोपी पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३११—फोटोग्राफर ने फोटो खींची, फोटो पर समान-जातीय पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१२—ठठेरे ने थाली बनाई, थाली पर समानाजातीय पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१३—दुकानदार ने बक्सा बेचा, बक्सा पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१४—मेरा सोने का हार है, सोने के हार पर समान-जातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१५—मेरा एक हीरा है, हीरा पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१६—मेरा सूटकेश है, सूटकेश पर समानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३०२ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३१७—असमानजातीय द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर—अनेक जाति के अनेक द्रव्यो मे जिससे एकपने का ज्ञान हो वह असमान जातीय द्रव्य पर्याय है। जैसे मनुष्य देव आदि।

प्रश्न ३१८—असमानजातीय द्रव्य पर्यायों के कुछ नाम बताओ ?

उत्तर—(१) अरहत भगवान (२) देव (३) मनुष्य (४) तिर्यंच (५) नारकी (६) कुत्ता (७) चूहा (८) चीटी (९) पृथ्वी कायिक (१०) जल कायिक (११) स्त्री (१२) लडका; इन्हे असमानजातीय द्रव्य पर्याये कहते है, क्योकि इनमे अनेक जाति के अनेक द्रव्यो मे एकपने का ज्ञान होता है।

प्रश्न ३१९—असमानजातीय द्रव्य पर्याय मे चार बातें कौन-कौनसी होती हैं ?

उत्तर—(१) अनेक जाति होनी चाहिये। (२) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (३) अनेक द्रव्यो मे एकपने का कथन होना चाहिये (४) ज्ञान मे जैसा-जैसा वस्तु स्वरूप है वैसा-वैसा ही ज्ञान मे आना चाहिये।

प्रश्न ३२०—मैं कैलाशचन्द्र हूं, इस वाक्य मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—कैलाशचन्द्र असमानजातीय द्रव्य पर्याय है।। कैलाशचन्द्र मे (१) जीव पुद्गल यह अनेक जाति हुई। (२) जीव पुद्गल यह अनेक द्रव्य हुए। (३) जीव-पुद्गल अनेक द्रव्यो मे 'मैं' कैलाशचन्द्र हूँ। ऐसा कथन किया जाता है। (४) [अ] मैं एक ज्ञान-दर्शन

उपयोगमयी ज्ञायक जीवतत्त्व हूँ। सयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण शरीर भाषा मनरूप अनेक परमाणु यह अजीव तत्त्व हैं। [आ] कैलाशचद्र अजीवतत्त्व मे औदारिक तैजस कार्माण शरीर-भाषा मन मे प्रत्येक परमाणु का आपस मे अत्यन्ताभाव है और प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्यायो मे अन्योन्याभाव है [इ] औदारिक आदि शरीरो के प्रत्येक परमाणु मे अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक-एक व्यजन पर्याय व अनन्त-अनन्त अर्थ पर्याय सहित सयोग रूप रह रहा है। [ई] जब औदारिक आदिशरीरो के परमाणुओ मे एक पुद्गल जाति होते हुए भी परस्पर मे कर्त्ता-भोक्ता आदि का कोई सम्बन्ध नही है तब मुझ चेतन ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व के साथ कैलाशचन्द्र अजीवतत्त्व का सम्बन्ध कैसे हो सकता है। कभी भी नहीं हो सकता है, ऐसा जानने-मानते ही आस्रव-बन्धतत्त्व भागना प्रारम्भ हो जाता है और तुरन्त सवर-निर्जरा की प्राप्ति हो जाती है। तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से 'मैं कैलाशचन्द्र हूँ' ऐसे कथन को असमानजातीय द्रव्य पर्याय कहा जा सकता है। परन्तु ऐसा है नही।

प्रश्न ३२१—यह देव है, देव में असमानजातीय द्रव्य पर्याय को चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२२—मैं नारकी हू, नारकी मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२३—वह कुत्ता है, कुत्ता मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२४—मै मनुष्य हूं, मनुष्य मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२५—यह अरहत भगवान हैं, अरहंत भगवान मे असमान-जातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२६—यह बकरा है, बकरा मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२७—यह अग्निकायक जीव है, अग्निकायिक जीव मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२८—यह धर्मपत्नी हे, धर्मपत्नी मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३२९—यह बूढा है, बूढ़ा मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३०—यह खटमल है, खटमल मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३१—यह साँप है, साँप मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३२—यह भैंस है—भैंस मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३३—यह पंडितजी हैं—पडितजी मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३४—यह सिंह है—सिंह में असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३३५—यह प्रधानमंत्री हैं—प्रधानमन्त्री मे असमानजातीय द्रव्य पर्याय की चार बाते लगाकर समझाइये ?

उत्तर—प्रश्न ३२० के अनुमार उत्तर दो।

प्रश्न ३३६—समानजातीय असमानजातीय द्रव्य पर्याय का सच्चा ज्ञान किसको होता है और किसको नही ?

उत्तर—ज्ञानियो को ही होता है अज्ञानियो को नही होता है।

प्रश्न ३३७—समानजातीय द्रव्य पर्याय और असमानजातीय द्रव्य पर्याय का सच्चा ज्ञान ज्ञानियो को ही क्यो होता है ?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्यपर्याय मे ज्ञानी जानते हैं कि एक-एक परमाणु अपनी-अपनी एक व्यजनपर्याय और बाकी गुणो की अर्थ-पर्यायो सहित विराज रहा है। एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सम्वन्ध नही है। परन्तु लोक व्यवहार मे 'बिस्तरा आदि' बोलने मे आता है। (२) असमानजातीय द्रव्यपर्याय मे ज्ञानी जानता है कि आत्मा एक है और औदारिक, तैजस तथा कार्माण शरीर आदि मे जितने परमाणु हैं। वह सव प्रत्येक अलग-अलग एक व्यजनपर्याय और अनन्त अर्थ पर्यायें सहित विराज रहा है। वह प्रत्येक द्रव्य को अलग-अलग जानता है। तथापि लोक-व्यवहार मे 'मनुष्य-देव' आदि बोला जाता है। इसलिये ज्ञानियो को समानजातीय, असमानजातीय द्रव्य-पर्याय का सच्चा ज्ञान होता है।

प्रश्न ३३८—समानजातीय द्रव्य पर्याय और असमानजातीय द्रव्य पर्याय का सच्चा ज्ञान अज्ञानियो को क्यो नहीं होता है ?

उत्तर—वह (अज्ञानी) (१) पृथक्-पृथक् द्रव्यों को एक मानते हैं। (२) दोनो के मिलने से हुई है ऐसा मानते हैं। (३) एक-एक द्रव्य का सच्चा ज्ञान ना होने अर्थात् अपना ज्ञान ना होने से द्रव्यलिंगी आदि सब मिथ्यादृष्टियो का समानजातीय और असमानजातीय

द्रव्यपर्याय का सब ज्ञान झूठा है।

प्रश्न ३३९—शास्त्र के अनुसार द्रव्यलिंगी कहे कि एक-एक द्रव्य अलग-अलग है और एक-एक द्रव्य एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थ पर्यायें सहित विराज रहा है तो उसका ज्ञान सच्चा होगा या नही ?

उत्तर—अपनी आत्मा का ज्ञान ना होने से मिथ्यादृष्टियो का शास्त्र के अनुसार कहने पर भी सब ज्ञान मिथ्याज्ञान और सब चारित्र मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न ३४०—अपना ज्ञान हुए बिना मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान झूठा है। ऐसा कहाँ आया है ?

उत्तर - भगवान उमास्वामी ने तत्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय के ३२वे सूत्र मे कहा है कि "सद सतोर विशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्" अर्थ (१) सत्=विद्यमान वस्तु। (२) असत्=अविद्यमान वस्तु (३) अविशेषात्=इन दोनो का यथार्थ विवेक ना होने से (यदृच्छ) विपर्यय, उपलब्धे=अपनी मनमानी इच्छा अनुसार कल्पनाएँ करने से वह ज्ञान मिथ्याज्ञान है। (४) 'उन्मत्तवत्' शराब पिये हुए के समान मिथ्यादष्टि को कारणविपरीतता, स्वरूपविपरीतता और भेदा-भेद विपरीतता तीनो वर्तती हैं। इसलिए मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान झूठा है।

प्रश्न ३४१—मिथ्यादृष्टि का सर्व ज्ञान झूठा है तब उसे सच्चा करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर—सच्चे धर्म की यह परिपाटी है कि पहले जीव सम्यक्त्व प्रगट करता है पश्चात् व्रतरूप शुभभाव होते हैं। और सम्यक्त्व स्व-पर का श्रद्धान होने पर होता है। तथा स्व-पर का श्रद्धान द्रव्या-नुयोग का अभ्यास करने से होता है। इसलिए पहले जीव को द्रव्या-नुयोग के अनुसार श्रद्धा करके सम्यग्दृष्टि होना चाहिए, तब मिथ्या-दृष्टि का सब ज्ञान जो मिथ्यात्व अवस्था मे झूठा था तब सम्यक्त्व होने पर उसका सारा ज्ञान सच्चा हो जाता है।

प्रश्न ३४२—बिस्तरा किस-किस अपेक्षा क्या-क्या है ?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्यपर्याय है। (२) पहिले जीव के साथ सम्बन्ध होने से असमानजातीय द्रव्यपर्याय है। (३) आकार की अपेक्षा विचार किया जावे तो विभाव व्यजन पर्याय है। (४) रग की अपेक्षा विचार किया जावे तो विभाव अर्थपर्याय है।

प्रश्न ३४३—बिस्तरा समानजातीय द्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है ?

उत्तर—'बिस्तरा' मे आहारवर्गणा के जितने परमाणु हैं वे सब परमाणु एक-एक व्यजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्याये सहित विराज रहे हैं। इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। मै तो ज्ञायक भगवान हूँ ऐसा जिसको अपना ज्ञान हो। वह जीव 'बिस्तरा' को समानजातीय द्रव्यपर्याय कह सकता है, क्योकि उस भेद विज्ञान है।

प्रश्न ३४४—मनुष्य क्या है ?

उत्तर—असमानजातीय द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न ३४५—मनुष्य असमानजातीय द्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है और कौन कह सकता है ?

उत्तर—(१) 'मनुष्य' आत्मा ज्ञायक स्वभावी है। पर्याय मे मूर्खता है और मूर्खता एक समय की है। यह अपने ज्ञायक स्वभावी आत्मा का आश्रय ले, तो मूर्खता उसी समय दूर हो जाती है। (२) औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्माणशरीर भाषा और मन मे एक-एक परमाणु अपनी एक-एक व्यजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्यायो सहित विराज रहा है। आत्मा से इन सबका निश्चय व्यवहार से कोई सम्बन्ध नही है। (३) जो ऐसा जानता हो और अपनी आत्मा का अनुभव हो तो उसका कथन 'मनुष्य' असमानजातीय द्रव्यपर्याय है—कहा जावेगा।

प्रश्न ३४६—भाव पाहुड़ गाथा ११४ के

जातीय द्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर—स्त्री आदि पदार्थ के ऊपर से भेदज्ञानी का विचार—इसका उदाहरण इस प्रकार है कि जब स्त्री आदि इन्द्रिय गोचर हो (दिखाई दे) तब उसके विषय मे तत्त्व विचार करना, कि यह स्त्री है वह क्या है ? जीव नामक तत्त्व की (असमानजातीय) एक पर्याय है। इसका शरीर है वह तो पुद्गल तत्त्व की पर्याय है। यह हाव-भाव चेष्टा करती है वह इस जीव के विकार हुआ है यह आस्रवतत्व है और बाह्य चेष्टा पुद्गल की है। इस विकार से इस स्त्री को आत्मा के कर्म का बन्ध होता है। यह विकार इसके न हो तो 'आस्रव-बन्ध' इसके न हो। कदाचित मैं भी इसको देखकर विकार रूप परिणमन करूँ तो मेरे भी 'आस्रव-बध' हो। इसलिए मुझे विकार रूप न होना यह 'सवरतत्व' है। बन सके तो कुछ उपदेश देकर इसका विकार दूर करू (ऐसा विकल्प राग है) वह राग भी करने योग्य नही है—स्व सम्मुख ज्ञातापने मे धैर्य रखना योग्य है। इस प्रकार तत्व की भावना से अपना भाव अशुद्ध नही होता है। इसलिए जो दृष्टिगोचर पदार्थ (समानजातीय-असमानजातीय) हो, उनमे इस प्रकार तत्व की भावना रखना यह तत्व की भावना का उपदेश है।

प्रश्न ३४७—प्रवचनसार गाथा ९४ में असमानजातीय द्रव्य-पर्याय के विषय में भगवान कुन्द-कुन्द स्वामी ने क्या बताया है ?

उत्तर—(जे जीवा) जो अज्ञानी ससारी जीव (पज्जयेसु) मनुष्यादि असमानजातीय पर्यायो मे (णिरदा) लवलीन हैं, वे (परस-मयिग) पर समय मे रागयुक्त हैं (इति) ऐसा (णिद्दिठ्ठा) भगवन्त देव ने कहा है।

प्रश्न ३४८—प्रवचनसार गाथा ९४ की टीका मे भगवान अमृतचन्द्राचार्य ने असमानजातीय द्रव्यपर्याय के विषय मे क्या बताया है ?

उत्तर—'मैं मनुष्य हूँ, शरीरादि की समस्त क्रियाओ को मैं

करता हूँ, स्त्री-पुत्र धनादि के ग्रहण-त्याग का मै स्वामी हू' इत्यादि मानना सो मनुष्य व्यवहार (मनुष्यरूप प्रवृत्ति) है। जो मनुष्यादि असमानजातीय द्रव्य-पर्यायो समानजातीय द्रव्य पर्यायो मे लीन है; वे एकान्त दृष्टि वाले लोग मनुष्य-व्यवहार का आश्रय करते है। इसलिए रागी-द्वेषी होते हैं उन्हे नपुसक कहा है।

प्रश्न ३४९—प्रवचनसार गाथा १५४ में भगवान कुन्द कुन्द स्वामी ने असमानजातीय और समानजातीय द्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर—(जो) जो पुरुष (त) उस पूर्व कथित (सब्भाव णिबद्ध) द्रव्य के स्वरूपअस्तित्व कर सयुक्त और (तिहा समक्खाद) द्रव्य-गुण-पर्याय अथवा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य ऐसे तीन प्रकार कहे हुए (दव्व सहाव) द्रव्य के निज लक्षण को (सवियप्प) भेद सहित (जाणदि) जानता है। (सो) वह भेदविज्ञानी (अण्णदवि यम्हि) अपने से भिन्न अचेतन द्रव्यो मे (ण मुहदि) मोह को प्राप्त नही होता है।

प्रश्न ३५०—प्रवचनसार गाथा १५४ की टीका में असमान-जातीय समानजातीय द्रव्यपर्यायो के विषय मे भगवान अमृतचन्द्रा-चार्य ने क्या बताया है ?

उत्तर—मनुष्य—देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीय द्रव्यपर्यायो मे भी जीव का स्वरूप अस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूप अस्तित्व सर्वथा भिन्न-भिन्न है। सूक्ष्मता से देखने पर वहाँ जीव और पुद्गल का स्वरूप अस्तित्व अर्थात् अपने-अपने द्रव्य गुण-पर्याय और ध्रौव्य-उत्पाद-व्यय स्पष्टतया भिन्न-भिन्न जाना जा सकता है। स्व-पर का भेद विज्ञान करने के लिए जीव के इस स्वरूप अस्तित्व को पद-पद पर लक्ष्य मे लेना योग्य है। यथा—यह जानने मे आता हुआ चेतन द्रव्य-गुण पर्याय और चेतन ध्रौव्य-उत्पाद व्यय जिसका स्वभाव है ऐसा मैं (भगवान आत्मा) इस मात्र यही ही निकालने (पुद्गल से भिन्न) रहा और यह अचेतन द्रव्य-गुण पर्याय और अचेतन-ध्रौव्य-उत्पाद-व्यय जिसका स्वभाव है ऐसा पुद्गल मुझ

भगवान आत्मा से भिन्न रहा। इसलिए मुझे पर के प्रति मोह नही है। यह स्व पर का भेद है।

प्रश्न ३५१—यह नीबू का पेड़ है—इस वाक्य पर किस-किस अपेक्षा कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—(१) नीबू का पेड़—आसमान जातीय द्रव्यपर्याय है, कब ? जबकि ऐसा जाने नीबू का पेड मे—एक ज्ञान-दर्शन उपयोग-मयी ज्ञायक जीवतत्व है। जीव के सयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण शरीर रूप अनन्त-अनन्त पुद्गल परमाणु—यह अजीवतत्व है। वह अपने को भूलकर इन अनन्त पुद्गल परमाणुओ मे एकत्व बुद्धि से पागल है—यह पागलपन—आस्रव बन्धतत्व है। ऐसा जानने वाला ज्ञानी नीबू के पेड को असमानजातीय द्रव्यपर्याय कह सकता है।।(२) पेड़ से तोड़ने पर नीम्बू—समानजातीय द्रव्य-पर्याय है। कब ? जबकि ऐसा जाने (अ) नीम्बू मे आहारवर्गणा के अनेक परमाणु है। एक-एक परमाणु का दूसरे परमाणुओ मे अत्यन्ताभाव है और नीम्बू का स्कधरूप पर्याय मे प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का दूसरे परमाणुओ की वर्तमान पर्यायो मे अन्योन्याभाव है। (आ) प्रत्येक परमाणु मे अनन्त-अनन्त गुण है। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक एक विभाव-व्यजन पर्याय और अनन्त-अनन्त विभाव अर्थ पर्यायो सहित विराज रहा है। (इ) जब परमाणुओ की एक पुद्गल जाति होते हुए भी परस्पर मे किसी भी प्रकार का कर्त्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नही है। तब मुझ चेतन जीव तत्व के साथ नीम्बू का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नही हो सकता है। ऐसा ज्ञान वत तो ज्ञानी को कथन को नीम्बू पेड़ से तोडने पर समानजातीय द्रव्यपर्याय है ऐसा कहा जाता है। (३) गोल नीम्बू आकार की अपेक्षा विभाव व्यंजन पर्याय कहा जाता है। कब ? जबकि एसा जाने—गोल नीबू मे जितने परमाणु है। उतने एक-एक प्रदेशी विभाव व्यजनरूप अनत रूपी आकार है। अनन्त रूपी आकारो से मेरा किसी भी अपेक्षा किसी

भी प्रकार का कर्त्ता भोक्ता का सम्बन्ध नही है ऐसा जानकर अपने निज चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी एक आकार का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब गोल नीम्बू को विभाव व्यजन पर्याय कह सकता है। (४) खट्टा नीम्बू—रस की अपेक्षा विभाव अर्थ पर्याय है। कब ? जबकि ऐसा जाने कि नीम्बू मे जितने परमाणु हैं उतनी खट्टा रूप रस की विभाव अर्थ पर्यायें हैं। नीम्बू के खट्टा रूप रस की पर्यायो मे मेरा कोई सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर निज अरस स्वभावी ज्ञायक जीव तत्व का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब खट्टा नीम्बू को यह विभाव अर्थ पर्याय हैं ऐसा कह सकता है।

प्रश्न ३५२—'दाल का पौधा' पर किस-किस अपेक्षा, कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५३—महावीर भगवान मन्दिर मे विराज रहे हैं—किस किस अपेक्षा, कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५४—मेरी किताब—किस अपेक्षा; कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५५—गुरू का शब्द—किस-किस अपेक्षा, कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५६—मेरा मकान—किस-किस अपेक्षा कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५७—कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया—किस-किस अपेक्षा, कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५८—कुन्दकुन्द भगवान का फोटो—किस-किस अपेक्षा अपेक्षा कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३५९—महावीर भगवान को केवल ज्ञान हुआ—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६०—सिंह पर्याय में प्रथम औपशमिक सम्यक्त्व हुआ—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न—३६१—सम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६२—मेरा लोटा—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६३—बढई ने कुर्सी बनाई—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६४—अमरूद का पेड़—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौन सी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६५—श्री नियमसार शास्त्र—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६६—संज्ञी के मन होता है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६७—गति हेतुत्व का परिणमन—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६८—मैंने धोती उठाई—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३६९—आलू—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७०—अज्ञानियो को मिथ्यात्व रहता है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७१—अज्ञानी को कुमतिज्ञान होता है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७२—ज्ञानियो को पूजा का भाव हेयबुद्धि से होता है—है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७३—क्रोध का भाव—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७४—'मोक्ष हुआ' किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७५—वह नारकी है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७६—मेरी घड़ी है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७७—तीर्थंकर होने वालो को जन्म से अवधिज्ञान होता है—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७८—सौधर्म इन्द्र—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३७९—मूग का पौधा—किस-किस अपेक्षा से कौन-कौनसी पर्याय घट सकती है और कब ?

उत्तर—प्रश्न ३५१ के अनुसार उत्तर दो।

प्रश्न ३८०—"औपशमिक सम्यक्त्व" यह क्या है ? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—(१) औपशमिक सम्यक्त्व जीव द्रव्य के श्रद्धा गुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का श्रद्धा गुण है। (३) दर्शन मोहनीय का उपशम इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३८१—"सम्यग्ज्ञान" यह क्या है ? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर—(१) सम्यग्ज्ञान स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता आत्मा का ज्ञान गुण है। (३) ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम तथा शास्त्रगुरु इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३८२—"सम्यग्चारित्र" यह क्या है ? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है ?

उत्तर—(१) सम्यग्चारित्र जीव द्रव्य के चारित्र गुण की स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का चारित्र गुण है। (३)

इसका कर्ता चारित्र मोहनीय का क्षयोपशमादि तथा शुभभाव नही हैं।

प्रश्न ३८३—"तैजस शरीर" क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) तैजस शरीर समानजातीय द्रव्यपर्याय है। तथा (२) जीव के सम्बन्ध की अपेक्षा असमानजातीय द्रव्यपर्याय है। (३) इसका कर्ता तैजसवर्गणा है। (४) जीव तथा दूसरी वर्गणायें इसका कर्ता नही हैं।

प्रश्न ३८४—'सिद्ध दशा' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है?

उत्तर—(१) सिद्धदशा स्वभाव अर्थपर्याय और स्वभावव्यजन पर्याय है। (२) इसका कर्ता आत्मा है। (३) इसका कर्ता द्रव्यकर्म का अभाव नही है।

प्रश्न ३८५—कम्पन क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) विभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का योग गुण है। (३) इसका कर्ता नामकर्म का उदय और मन-वचन-काय का होना नही है।

प्रश्न ३८६—'वीर्य की पूर्णता' यह क्या है। इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का वीर्य गुण है। (३) इसका कर्ता अन्तरायकर्म का अभाव नही है।

प्रश्न ३८७—'यथाख्यातचारित्र' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का चारित्रगुण है। (३) चारित्रमोहनीय का क्षयादि इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३८८—'पाँच इन्द्रियों के भोग का भाव' क्या ह? इस कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) विभाव अर्थ पर्याय है। (२) जीव का चारित्रगुण इसका कर्ता है। (२)पांच इन्द्रियो का सयोग इनका कर्ता नही है।

प्रश्न ३८९—'फूल मे सुगन्ध' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) विभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता आहार वर्गणा का गधगुण है। (३) जीव तथा दूसरी वर्गणाये इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३९०—'बुखार' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) विभाव अर्थ पर्याये हैं। (२) इसका कर्ता आहार-वर्गणा का स्पर्श गुण है। (३) जीव तथा दूसरी वर्गणाये इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३९१—'खाँसी की आवाज' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है। तथा (२) जीव के सम्बन्ध की अपेक्षा असमानजातीय द्रव्य पर्याय है। (३) इसका कर्ता भाषा-वर्गणा है। (४) इसका कर्ता जीव और दूसरी वर्गणाये नहीं हैं।

प्रश्न ३९२—'परिणमन हेतुत्व' का परिणमन क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नही है?

उत्तर—(१) स्वभाव अर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता कालद्रव्य का परिणमनहेतुत्व गुण है। इसका कर्ता जीव तथा अन्य द्रव्य नही है।

प्रश्न ३९३—आठो कर्मों का उदय क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है। (२) जीव के सवध की अपेक्षा से असमानजातीय द्रव्य पर्याय है। (३) इसका कर्ता कार्माण-वर्गणा है। (४) इसका कर्ता जीव तथा दूसरी वर्गणाये

नही हैं।

प्रश्न ३९४—आठो कर्मों का अभाव क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है। तथा (२) जीव के सम्बन्ध की अपेक्षा से असमानजातीय द्रव्य पर्याय है (३) इसका कर्ता कार्माण वर्गणा है। इसका कर्ता जीव तथा दूसरी वर्गणाये नही हैं।

प्रश्न ३९५—घातीकर्मों का क्षयोपशम क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है। तथा (२) जीव के सम्बन्ध की अपेक्षा से असमानजातीय द्रव्य पर्याय है। (३) इसका कर्ता कार्माणवर्गणा है। (४) जीव तथा दूसरी वर्गणायें नही है।

प्रश्न ३९६—(१) मोहनीयकर्म का उपशम क्या है? (२) उसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है। (२) जीव के सबध की अपेक्षा से असमानजातीय द्रव्य पर्याय है। (३) इसका कर्ता कार्माणवर्गणा है। (४) इसका कर्ता जीव तथा दूसरी वर्गणाये नही हैं।

प्रश्न ३९७—'स्थितिहेतुत्व का परिणमन' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) स्वभावअर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता अधर्म द्रव्य का स्थितिहेतुत्व गुण है। (३) जीव तथा दूसरा द्रव्य इसका कर्ता नही है।

प्रश्न ३९८—द्रव्यसंग्रह मे पुद्गल की पर्यायें किसे-किसे कहा है?

उत्तर—द्रव्य सग्रह गा० १६ मे (१) शब्द, (२) बन्ध, (३) सूक्ष्म, (४) स्थूल, (५) सस्थान (आकार), (६) भेद (खड), (७) तम (अन्धकार), (८) छाया, (९) उद्योत, (१०) आताप आदि को पुद्गल की पर्यायें कहा है। और ये सब समानजातीय द्रव्य

पर्याय है। और जिसमें जीव का एक ही क्षेत्रावगाही सम्बन्ध है, वह असमानजातीय द्रव्य पर्याय है।

प्रश्न ३९९—'मतिज्ञान' क्या है? इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) एकदेश स्वभावअर्थ पर्याय है। (२) इसका कर्ता जीव का ज्ञानगुण है। (३) इसका कर्ता मतिज्ञानावरणीय का क्षयोपशम आदि नही है।

प्रश्न ४००—'समवशरण' क्या है? उसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) विभाव व्यजन पर्याय है। (२) इसका कर्ता आहारवर्गणा का प्रदेशत्वगुण है। (३) इन्द्र तथा अन्य वर्गणाये इसके कर्ता नही है।

प्रश्न ४०१—'मेघगर्जना' क्या है? उसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर—(१) समानजातीय द्रव्य पर्याय है, (२) इसका कर्ता भाषा वर्गणा है। (३) जीव तथा दूसरी वर्गणाये इसका कर्ता नही हैं।

प्रश्न ४०२—ज्ञानगुण की पर्यायो के नाम बताओ?

उत्तर—आठ हैं। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्ययज्ञान, केवलज्ञान यह ५ सम्यक् पर्याये है। कुमति, कुश्रुत, कुअवधि यह तीन मिथ्या पर्याये है।

प्रश्न ४०३—इन ज्ञान गुण की ८ पर्यायों के जानने से ज्ञानी अज्ञानी को क्या-क्या लाभ या नुकसान हैं?

उत्तर—(१) त्रिकाल जिसमे ज्ञान गुण है, उस अभेद आत्मा का आश्रय लेकर मिथ्या पर्यायो का अभाव करके सम्यक् पर्यायो को उत्पन्न करना, यह प्रथम इनको जानने का लाभ पात्र जीवो को होता है। (२) ज्ञानी अपने ज्ञानस्वरूप अभेद का आश्रय बढाकर केवलज्ञान

प्राप्त करता है। (३) मिथ्यादृष्टि आठ ज्ञान की पर्यायो को जानकर शास्त्र अभिनिवेश करता है। जो अनन्त ससार का कारण है।

प्रश्न ४०४—दर्शनगुण की पर्यायें कितनी हैं और कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर—चार है। चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।

प्रश्न ४०५—इन चार पर्यायो को जानकर पात्र जीव क्या करता है ? ज्ञानी क्या करता है और अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर—चार पर्यायो से लक्ष हटाकर अपने दर्शन रूप अभेद स्वभाव की दृष्टि कर सच्चा क्षयोपशम प्राप्त करता है। (५) ज्ञानी अभेद दर्शन स्वभाव का आश्रय लेकर पर्याय मे केवलदर्शन की प्राप्ति करता है। (३) अज्ञानी इन चार पर्यायो को जानकर शास्त्र अभिनिवेश मे पागल बना रहता है।

प्रश्न ४०६—चारित्रगुण का परिणमन कितने प्रकार का है ?

उत्तर—शुद्ध और अशुद्ध दो प्रकार का है। तथा अशुद्ध के शुभ और अशुभ दो प्रकार हैं।

प्रश्न ४०७—चारित्रगुण के परिणमन को जानने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर—(१) पर्याय मे अशुद्ध परिणमन है। (२) स्वभाव मे शुद्ध और अशुद्ध का भेद नही है ऐसा जानकर अभेद स्वभाव का आश्रय लेकर अशुद्ध परिणमन का अभाव और शुद्ध परिणमन की प्राप्ति इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न ४०८—स्पर्श क्या है ?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य का विशेष गुण है।

प्रश्न ४०९—स्पर्श गुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—हल्का-भारी, ठण्डा गरम, रूखा-चिकना, कडा-नरम आठ पर्याये हैं।

प्रश्न ४१०—स्पर्शगुण की आठ पर्यायो के जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—यह आठ पर्यायें पुद्गल के स्पर्श गुण की हैं। अनादि से अज्ञानी हल्का-भारी, मुझे गर्मी-ठण्डी का बुखार आदि खोटी मान्यता

से अज्ञानी पागल हो रहा था। तब सतगुरु ने कहा तू तो अस्पर्श स्वभावी भगवान आत्मा है। हल्का-भारी आदि पुद्गल के स्पर्श गुण की पर्यायें हैं, ऐसा जानकर अस्पर्श स्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले, तो स्पर्श की आठ पर्यायो से सम्बन्ध नही है। यह अनुभव होना यह स्पर्श की आठ पर्यायो को जानने का लाभ है?

प्रश्न ४११—रस क्या है?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य का विशेष गुण है।

प्रश्न ४१२—रसगुण की कितनी पर्यायें हैं?

उत्तर—पाँच है—खट्टा, मीठा, कडुवा, कषायला और चरपरा।

प्रश्न ४१३—रस गुण की पांच पर्यायों को जानने से क्या लाभ है?

उत्तर—अज्ञानी जीव अनादि से खट्टे-मीठे को अपना स्वाद मान रहा था। तो सतगुरु ने कहा तू तो अरस स्वभावी भगवान आत्मा है और खट्टा-मीठा आदि पुद्गल के रस गुण की पर्याये हैं तेरा इनसे सर्वथा सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अरस स्वभावी भगवान आत्मा की ओर दृष्टि दे, तो रस की पाच पर्यायो को जाना कहा जावेगा।

प्रश्न ४१४—गंध क्या है?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य का विशेष गुण है।

प्रश्न ४१५—गंधगुण की कितनी पर्यायें है?

उत्तर—दो हैं। सुगन्ध और दुर्गन्ध।

प्रश्न ४१६—गंधगुण की दो पर्यायो को जानने का क्या लाभ है?

उत्तर—मैं अगन्ध स्वभावी भगवान हू। सुगन्ध-दुर्गन्ध पुद्गल के गध गुण की पर्याये हैं। ऐसा जानकर अगध स्वभावी भगवान का आश्रय ले, तो धर्म की शुरूआत होकर फिर क्रम से वृद्धि होकर, निर्वाण का पात्र बने।

प्रश्न ४१७—वर्ण क्या है?

उत्तर—पुद्गल द्रव्य का विशेष गुण है।

प्रश्न ४१८—वर्ण गुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर—पाँच है। काला, पीला, नीला, लाल, सफेद।

प्रश्न ४१९—वर्णगुण की पाँच पर्यायों के जानने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर—मैं अवर्ण स्वभावी भगवान आत्मा हू। काला-पीला आदि पुद्गल के वर्ण गुण की पर्यायें हैं। इससे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है। ऐसा जानकर अपने अवर्ण स्वभाव का आश्रय ले, तो वर्ण गुण की पर्यायो से भेद ज्ञान हुआ, कहा जावेगा।

प्रश्न ४२०—शब्द क्या है ?

उत्तर—भाषा वर्गणा का कार्य है। और समान जातीय द्रव्य पर्याय है और जीव के साथ की अपेक्षा विचारा जावे तो असमान-जातीय द्रव्य पर्याय है।

प्रश्न ४२१—शब्द कितने प्रकार का है ?

उत्तर—सात प्रकार का है। षडज ऋषभ, गधार, मध्यम, पचम, धैवत और निषाद।

प्रश्न ४२२—सात प्रकार के शब्द को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर—सात प्रकार के शब्दो से मेरा कोई सम्बन्ध नही है। मैं अशब्द स्वभावी भगवान आत्मा हू। ऐसा जानकर अपना आश्रय ले, तो शान्ति प्राप्त हो और कर्ण इन्द्रियो के विषयो की एकत्वबुद्धि का अभाव हो।

प्रश्न ४२३—समयसार की ४९वीं गाथा मे क्या कहा है ?

उत्तर—'जीव चेतना गुण, शब्द-रस-रूप-गध-व्यक्ति विहीन है।
निर्दिष्ट नही सस्थान उसका, ग्रहण है नहिं लिग से ॥४९॥'

अर्थ—हे भव्य, तू जीव को रसरहित, रूपरहित, गध रहित, इन्द्रियगोचर नही, शब्द रहित है ऐसा जान। वह चेतनागुण द्वारा दृष्टि मे आता है किसी पर चिन्हो से, किसी के आकार से दृष्टि मे नही आ सकता है ऐसा कहा है।

प्रश्न ४२४—गा० ४६ में स्पर्शादि से रहित क्यों कहा है ?

उत्तर—स्पर्श-रसादि की २७ पर्यायो मे जीव पागल है उससे दृष्टि हटाकर अपने स्वभाव पर दृष्टि देवे इसलिए कहा है।

प्रश्न ४२५—गाथा ४६ की टीका मे स्पर्श-रस आदि के कितने-कितने वोल लिये हैं और उनमें क्या-क्या समझाया है ?

उत्तर—रस, रूप, गध, स्पर्श और शब्द, प्रत्येक के छह-छह वोलो से इनका निषेध करके आत्मा को अरस, अरूप, अगध, अस्पर्श अशब्द बताया है। क्योकि अज्ञानी २७ पर्यायो मे पागल है। उसका पागलपन मिटे और शान्ति प्राप्त हो यह समझाया है।

प्रश्न ३२६—गा० ४६ की टीका मे छह-छह वोलों से अलग किया है उसका एक का नमूना बताओ ताकि सब समझ मे आ सके ?

उत्तर—(१) पुद्गल द्रव्य से अलग किया है (२) पुद्गल द्रव्य के गुण से अलग किया है (३) पुद्गल द्रव्य की पर्याय द्रव्येन्द्रिय के आलम्बन से अलग किया है (४) क्षयोपशम रूप ज्ञान से अलग किया है (५) अखडपने सबको सर्वथा जाननेवाला स्वभाव होने पर मात्र रस को जाने इससे अलग किया है। (६) रस सम्बन्धी ज्ञान होने पर भी रसरूप नही होता है। इस प्रकार आत्मा को इन सबसे पृथक् बताकर चेतना गुण के द्वारा ही अनुभव मे आता है ऐसा बताया है। इसलिए हे आत्मा तू "एक टन्कोत्कीर्ण परमार्थ स्वरूप का आश्रय ले, तो शान्ति प्रगटे।"

प्रश्न ४२७—क्रियावती शक्ति क्या है ?

उत्तर—जीव और पुदगल द्रव्य का विशेष गुण है।

प्रश्न ४२८—क्रियावती शक्ति का परिणमन कितने प्रकार का है ?

उत्तर—दो प्रकार का है। गमनरूप और स्थिररूप।

प्रश्न ४२९—क्रियावती शक्ति को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर—(१) अज्ञानी अनादि से यह मानता था कि मैं शरीर को चलाता हू और शरीर मुझे चलाता है। (२) गुरुगम के बिना शास्त्र

पढा तो कहने लगा धर्मद्रव्य जीव-पुद्गल को चलाता है और अधर्म द्रव्य ठहराता है। (३) सच्चे सत्गुरु का समागम हुआ तो जाना कि आत्मा मे और प्रत्येक परमाणु मे क्रियावती शक्ति गुण है। यह दोनो अपनी-अपनी योग्यता से चलते हैं और ठहरते हैं। धर्म-अधर्म तो निमित्तमात्र है ऐसा जानकर अपनी ओर दृष्टि दे तो क्रियावती शक्ति को जाना।

प्रश्न ४३०—वैभाविक शक्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर—यह एक विशेष भाव वाला गुण है। जिस गुण के कारण परद्रव्य के सम्बन्ध पूर्वक स्वय अपनी योग्यता से अशुद्ध पर्याय होती है।

प्रश्न ४३१—वैभाविक गुण कितने द्रव्यो मे हैं ?

उत्तर—जीव और पुद्गल दो द्रव्यो मे ही है बाकी चार द्रव्यो मे नही है।

प्रश्न ४३२—वैभाविकशक्ति गुण की शुद्ध पर्याय कब प्रगट होती है ?

उत्तर—सिद्धदशा मे इस गुण की शुद्ध स्वाभाविक दशा प्रगट होती है।

प्रश्न ४३३—प्रत्येक द्रव्य की पर्याय कितनी बड़ी होती है ?

उत्तर—जितना बडा जो द्रव्य है उतनी ही बडी उस द्रव्य की पर्याय होती है। क्योकि प्रत्येक पर्याय द्रव्य के सम्पूर्ण भाग मे एक समय रूप होती है।

प्रश्न ४३४—प्रत्येक पर्याय की स्थिति कितनी देर की होती है ?

उत्तर—कोई भी पर्याय हो सबकी स्थिति एक-एक समय मात्र ही होती है।

प्रश्न ४३५—प्रत्येक गुण मे कितनी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर—तीन काल के जितने समय हैं उतनी-उतनी ही पर्याय प्रत्येक गुण मे होती है।

प्रश्न ४ ६—एक गुण मे एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का

उत्पाद और स्वयं ध्रौव्य इन तीनो मे कितना समय लगता है ?

उत्तर—मिथ्यात्व का अभाव, सम्यक्त्व की उत्पत्ति और श्रद्धा गुण ध्रौव्य, यह एक समय मे ही होता है। ऐसा ही प्रत्येक गुण मे अनादिअनन्त होता है। ऐसा वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न ४३७—उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य का एक ही समय है या भिन्न-भिन्न समय है ?

उत्तर—तीनो एक ही समय मे एक साथ वर्तते है।

प्रश्न ४३८—अज्ञान दूर होकर सच्चा ज्ञान होने मे कितना काल लगता है ?

उत्तर—एक समय ही लगता है। मिथ्याज्ञान का व्यय, सम्यग्ज्ञान का उत्पाद और ज्ञान गुण ध्रौव्य है।

प्रश्न ४३९—अनादिअनन्त कौन है ?

उत्तर—प्रत्येक द्रव्य और उनके गुण अनादिअनन्त होते हैं।

प्रश्न ४४०—प्रत्येक द्रव्य और गुण अनादिअनन्त हैं। इसको जानने से क्या नुकसान और क्या लाभ हैं ?

उत्तर—(१) पर द्रव्य और उनके गुण अनादिअनन्त हैं। उनका आश्रय माने तो चारो गतियो मे घूमकर निगोद की प्राप्ति होती है। (२) अपना द्रव्य और गुण अनादिअनन्त है। उसका आश्रय ले तो मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ४४१—सादिअनन्त कौन है ?

उत्तर—क्षायिक पर्याय सादिअनन्त है।

प्रश्न ४४२—पर्याय तो कोई भी हो, एक समय मात्र की होती है। आपने क्षायिक पर्याय को "सादिअनन्त" क्यो कहा ?

उत्तर—वह बदलने पर भी जैसी की तैसी रहती है, वह की वह नही "जैसी की तैसी" अर्थात् शुद्ध-शुद्ध रहने से सादिअनन्त कहा है।

प्रश्न ४४३—क्षायिक पर्याय सादिअनन्त है इसको जानने से क्या

लाभ है ?

उत्तर—अपने द्रव्य-गुण अभेद अनादिअनन्त स्वभाव का आश्रय लेकर क्षायिक पर्याय प्रगट करने योग्य है। ऐसा जानकर क्षायिक पर्याय प्रगट करे, यह लाभ है।

प्रश्न ४४४—अनादिसांत क्या है ?

उत्तर—जो जीव अनादिअनन्त अपने स्वभाव का आश्रय लेता है। उस जीव का ससार जो अनादि से है उसको सात कर देता है इसलिए ससार पर्याय को अनादिसात कहा है।

प्रश्न ४४५—सादिसात क्या है ?

उत्तर—मोक्षमार्ग अर्थात् साधकदशा।

प्रश्न ४४६—मोक्षमार्ग सादिसांत है। इसको जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—(१) ज्ञानी जीव साधकदशा का अभाव करके साध्यदशा जो सादिअनन्त है उसको प्रगट करते है। (२) अज्ञानी पात्र जीव अपने स्वभाव का आश्रय लेकर सादिसांत मोक्षमार्ग प्रगट करे यह जानने का लाभ है।

प्रश्न ४४७—उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य जानने के लिए प्रवचनसार की किस-किस गाथा का विशेष रूप से रहस्य जानना चाहिये ?

उत्तर—प्रवचनसार गा० ९९, १०० तथा १०१ का रहस्य जानना चाहिये।

प्रश्न ४४८—प्रवचनसार की ९९वीं गाथा का क्या रहस्य है—थोड़े मे बताइये ?

उत्तर—सब द्रव्य सत् हैं। उत्पाद-व्यय-ध्रुव सहित परिणाम प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है। ऐसे स्वभाव मे निरन्तर वर्तता हुआ होने से द्रव्य भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य वाला है ऐसा गाथा मे सिद्ध किया है। टीका मे पाच बाते की है। (१) द्रव्य मे अभेद रूप से अनादिअनन्त प्रवाह की एकता बताई और [illegible]

वह परिणाम हैं यह बताया है। (२) प्रवाह क्रम मे प्रवर्तता परिणाम परस्पर व्यतिरेक बताया। (३) सम्पूर्ण रूप से द्रव्य के त्रिकाली परिणामो को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप सिद्ध किया। द्रष्टान्त मे द्रव्य के सब प्रदेशो को क्षेत्र अपेक्षा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य बताया। (४) एक ही परिणाम मे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यपना बताया है, द्रष्टान्त मे एक-एक प्रदेश मे क्षेत्र अपेक्षा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यपना बताया है। (५) उत्पाद व्यय-ध्रौव्य परिणाम के प्रवाह मे द्रव्य सदा वर्तता है यह वस्तु का स्वभाव है। यह सिद्ध किया है।

प्रश्न ४४९—प्रवचनसार की १००वीं गाथा में क्या बताया है?

उत्तर—उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य एक दूसरे के बिना होता नही है परन्तु एक ही साथ तीनो होते हैं। जैसे—आत्मा मे सम्यक्त्व का उत्पाद, मिथ्यात्व के व्यय बिना नही होता है। मिथ्यात्व का नाश सम्यक्त्व के उत्पाद बिना होता नही। और सम्यक्त्व का उत्पाद तथा मिथ्यात्व का व्यय यह दोनो आत्मा की ध्रुवता बिना होते नही है। इस प्रकार प्रत्येक वस्तु मे ओर उसके गुणो मे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य तीनो एक ही साथ होते हैं यह बताया है।

प्रश्न ४५०—प्रवचनसार गा १०१ मे क्या बताया है?

उत्तर—(१) उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य किसके है? उत्तर-पर्याय के है। (२) पर्याय किसमे होती है? उत्तर-द्रव्य मे होती है इस प्रकार सब को एक द्रव्य मे ही बताया है बाहर नही।

प्रश्न ४५१—बाई ने रोटी बनाई—इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और इससे क्या लाभ रहा यह बताओ?

उत्तर—रोटी का उत्पाद, लोई का व्यय, आहारवर्गणा ध्रौव्य है तो बाई ने रोटी बनाई यह बुद्धि उड गई। तथा प्रत्येक कार्य ऐसे ही होता है, होता रहा है, और होता रहेगा ऐसा मानते ही दृष्टि स्वभाव पर जाये तो धर्म की प्राप्ति होना, इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न ४५२—कुम्हार ने घड़ा बनाया, इसमे उत्पाद-व्यय और

ध्रौव्य लगाओ तथा क्या लाभ रहा ?

उत्तर—घडे का उत्पाद, पिण्ड का व्यय, आहारवर्गणा के स्कन्ध मिट्टी ध्रौव्य है। कुम्हार चाक कीली डण्डे से दृष्टि हट गई।

प्रश्न ४५३—केवलज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—केवलज्ञान का उत्पाद, भावश्रुतज्ञान का व्यय, आत्मा का ज्ञान गुण ध्रौव्य है। केवलज्ञानावरणीय के अभाव से हुआ, यह दृष्टि हट गई।

प्रश्न ४५४—मैंने बिस्तरा बिछाया, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—बिस्तरा बिछने का उत्पाद, तह किये हुए का व्यय, आहारवर्गणा रूप बिस्तरा ध्रौव्य है। जोव ने या अन्य किसो वर्गणा ने बिछाया, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४५५—मुझे आंख से ज्ञान हुआ, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—ज्ञान पर्याय का उत्पाद, पहली ज्ञान पर्याय का व्यय, आत्मा का ज्ञान गुण ध्रौव्य है। आँख से ज्ञान हुआ ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४५६—दर्शनमोहनीय के उदय से मिथ्यात्व होता है, इसमें उत्पाव-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—मिथ्यात्व का उत्पाद, मिथ्यात्व रूप पहली पर्याय का व्यय, आत्मा का श्रद्धा गुण ध्रौव्य है। दर्शनमोहनोय के उदय से हुआ, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४५७—कर्म चक्कर कटाता है। इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—चक्कर काटने का उत्पाद, पहली चक्कर काटने की पर्याय का व्यय, आत्मा का चारित्र गुण ध्रौव्य है। कर्म चक्कर

कटाता है, ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४५८—मैंने हाथ जोडे, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—हाथ जोडे का उत्पाद, पहली स्थिरता रूप पर्याय का व्यय, आहारवर्गणा की क्रियावती शक्ति गुण ध्रौव्य है। जीव ने हाथ जोडे, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४५९—घड़ी देखकर ज्ञान हुआ, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—ज्ञान का उत्पाद, ज्ञान की पूर्व पर्याय का व्यय, आत्मा का ज्ञान गुण ध्रौव्य है। घडी से ज्ञान हुआ यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६०—भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्त्व हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—सम्यक्त्व का उत्पाद, मिथ्यात्व का व्यय, आत्मा का श्रद्धा गुण ध्रौव्य है। भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्त्व हुआ, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६१—मैंने रोटी खाई, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—रोटी खाई का उत्पाद, पहली पर्याय का व्यय, आहार-वर्गणा के स्कध ध्रौव्य है। जीव ने रोटी खाई, ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६२—धर्म द्रव्य ने मुझे चलाया। इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—मेरे चलने का उत्पाद, स्थिर रूप पर्याय का व्यय, आत्मा की क्रियावती शक्ति गुण ध्रौव्य है। धर्मद्रव्य ने तथा शरीर ने मुझे चलाया, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६३—निमित्त-नैमित्तिक सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ। इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—सम्यग्ज्ञान का उत्पाद, मिथ्याज्ञान का व्यय, आत्मा का ज्ञान गुण ध्रौव्य है। सुनकर ज्ञान हुआ, यह बुद्धि उड़ गई।

प्रश्न ४६४—मैंने पानी गरम किया। इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—गरम का उत्पाद, ठण्डे का व्यय, आहारवर्गणा रूप पानी ध्रौव्य है। जीव और आग ने पानी गरम किया, ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६५—श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार शास्त्र बनाया। इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—समयसार शास्त्र बना उत्पाद, पहली पर्याय का व्यय, आहारवर्गणारूप पत्र ध्रौव्य है। श्री कुन्दकुन्द भगवान ने बनाया, ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६६—मैंने पुस्तक उठाई, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर—पुस्तक उठने का उत्पाद, स्थिररूप पर्याय का व्यय, आहारवर्गणारूप कागज की क्रियाशक्ति गुण ध्रौव्य है। जीव ने उठाई ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६७—अधर्म द्रव्य ने मुझे ठहराया, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर—मेरे ठहरने का उत्पाद, चलने की पर्याय का व्यय, जीव की क्रियावती शक्ति ध्रौव्य है। अधर्म द्रव्य और शरीर ने मुझे ठहराया, ऐसी बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६८—बढई ने रथ बनाया, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर—रथ बनने का उत्पाद; पहली पर्याय का व्यय, आहारवर्गणा रूप लकड़ी ध्रौव्य है। बढई ने रथ बनाया, यह बुद्धि उड गई।

प्रश्न ४६९—अन्तराय कर्म के क्षयोपशम से वीर्य में क्षयोपशम उत्पन्न हुआ, इसमे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ ... ?

उत्तर—क्षयोपशम का उत्पाद, पहली पर्याय का व्यय, आत्मा का वीर्यगुण ध्रौव्य है। अन्तराय कर्म के क्षयोपशम से दृष्टि हट गई।

अवश्य जानने योग्य बातें

प्रश्न—४७०—जिस जीव को अपना कल्याण करना हो, उसे क्या-क्या जानना जरूरी है ?

उत्तर—जिस जीव को मिथ्यात्व का अभाव करके सम्यग्दर्शन प्राप्त करना हो और सम्यग्दर्शन प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करना हो उसे सच्चे कारण-कार्य का ज्ञान करने के लिए आठ बातो का निर्णय करना चाहिए।

प्रश्न ४७१—जिससे सम्यग्दर्शन हो फिर मोक्ष हो। ऐसे सच्चे कारण-कार्य का ज्ञान करने के लिए आठ बातें कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर—(१) बन्ध किसे कहते हैं ? (२) जीव और पुद्गल के निश्चय और व्यवहार के बन्ध का ज्ञान। (३) इन्द्रिय ज्ञान की मर्यादा क्या है ? (४) विकारी और अविकारी पर्यायो की स्वतन्त्रता का ज्ञान (५) विकारी पर्याय को पराश्रित क्यो कहा ? (६) जब विकारी पर्याय स्वतन्त्र है तो शास्त्रो मे स्व-पर प्रत्ययो को क्यो कहा जाता हैं ? (७) प्रत्येक स्कंध मे हर एक परमाणु अपना-अपना स्वतन्त्र कार्य करता है। उसकी स्वतत्रता का ज्ञान (८) अर्थपर्याय और व्यजन पर्याय के विषयो मे मिथ्यामान्यता क्या-क्या हैं इस प्रकार सच्चे कारण कार्यादिक का ज्ञान होने से मिथ्यात्व का अभाव और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर साथ ही केवलज्ञान मे जैसा वस्तु का स्वभाव है वैसा ही दृष्टि मे आ जाता है।

(१) **प्रश्न ४७२—जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से मोक्ष हो। ऐसी आठ बातो मे से बंध किसे कहते हैं ?**

उत्तर—जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओ मे एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को वन्ध कहते है।

प्रश्न ४७३—बंध की परिभाषा स्पष्ट समझ मे नहीं आई ?

उत्तर—(१) सम्ब्रन्ध विशेष होना चाहिए। (२) अनेक चीज होनी चाहिए। (३) अनेक चीजो मे एकपने का कथन होना चाहिए (४) परन्तु ज्ञान मे प्रत्येक वस्तु की स्वतन्त्रता आनी चाहिए। जैसे—हल्वा कहा तो। (१) हल्वा सम्बन्ध विशेष है (२) हल्वे मे अनेक परमाणु है यह अनेक चीजें हुई (३) कथन मे आया कि यह हल्वा है (४) हल्वे मे जितने परमाणु हैं वह अलग-अलग हैं एक का दूसरे से सम्बन्ध नही है। इससे प्रत्येक वस्तु की स्वतन्त्रता ज्ञान मे आनी चाहिए। तभी बन्ध का सच्चा ज्ञान कहा जा सकता है।

प्रश्न ४७४—दूध और ककड़ सम्बन्ध विशेष हैं या नहीं ?

उत्तर—(१) दूध और ककड को सम्बन्ध विशेष नहीं कह सकते, क्योकि दोनो अलग-अलग ज्ञान मे आते हैं। (२) दूध और पानी को सम्बन्ध विशेष कहेगे, क्योंकि दूध और पानी अनेक चीजो मे एकपने का ज्ञान कराता है। इसलिए इसे सम्बन्ध विशेष कहेगे।

प्रश्न ४७५—दूध और पानी के मेल को सम्बन्धविशेष कब कहा जा सकेगा ?

उत्तर—दूध और पानी मे प्रत्येक परमाणु अपने-अपने गुण पर्याय सहित वर्त रहे है। एक का दूसरे मे अभाव है। तथा एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का दूसरे परमाणुओ की वर्तमान पर्यायो मे अन्योन्याभाव है। ऐसा जिसको ज्ञान वर्तता हो, वही दूध और पानी के मेल को सम्बन्ध विशेष कह सकता है, दूसरा नही।

प्रश्न ४७६—छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं। यह सम्बन्ध विशेष है या नही ?

उत्तर—बिल्कुल नही, क्योकि छह द्रव्यो के समूह मे सम्बन्ध विशेष नही है क्योकि अनेक चीजे तो है परन्तु एकपने का ज्ञान नहीं होता है इसलिए छह द्रव्यो के समूह को विश्व कहते हैं इसमे सम्बन्ध विशेष नही है।

प्रश्न ४७७—सम्बन्ध विशेष जिन्हे कहा जा सकता है। उनके कुछ नाम गिनाओ ?

उत्तर—रोटी, मेज, दरी, फोटो, डब्बा, लालटेन, किताब, घडी आदि अनेक चीजे है। परन्तु कहने मे एक आती है और ज्ञानी जानते हैं प्रत्येक रोटी आदि मे परमाणुओ का स्वरूप अलग-अलग है इसलिए यह सम्बन्ध विशेष के नाम से कहे जाते है।

प्रश्न ४७८—बंध का सच्चा ज्ञान किसको होता है और किसको नहीं होता है ?

उत्तर—एक मात्र ज्ञानियो को होता है द्रव्यलिंगी मुनि आदि अज्ञानियो को नही होता है।

(२) **प्रश्न ४७९—जिससे सम्यग्दर्शन हो फिर क्रम से मोक्ष हो। ऐसे आठ बोलों में से दूसरे बोल का क्या नाम है ?**

उत्तर—"जीव और पुदगल के निश्चय व्यवहार के बन्ध का ज्ञान" यह दूसरे बोल का नाम है ?

प्रश्न ४८०—जीव मे निश्चयबध क्या है ?

उत्तर—आत्मा मे राग-द्वेषादि का बन्ध होना यह जीव का निश्चय बन्ध है।

प्रश्न ४८१—आत्मा और राग द्वेषादि में बंध की परिभाषा कैसे घटेगी ?

उत्तर—(१) रागी जीव यह सम्बन्ध विशेष है। (२) एक आत्मा है दूसरा राग-द्वेष है यह दो चीजे हुई। (३) आत्मा और राग-द्वेष मे एकपने का कथन होता है। तथा (४) ज्ञानी दोनो का स्वरूप पृथक्-पृथक् जानते है, क्योकि राग-द्वेषादि का स्वरूप बन्धस्वरूप और आत्मा का स्वरूप अबन्धस्वरूप चैतन्य स्वभावी जानते हैं इसलिए आत्मा और राग-द्वेषादि मे बन्ध की परिभाषा घटित होती है।

प्रश्न ४८२—जीव के निश्चयबंध को जानने से ज्ञानियो को क्या लाभ है ?

उत्तर—ज्ञानी तो चौथे गुणस्थान से दोनो को पृथक्-पृथक् जानते हैं और अपने चैतन्य स्वभावी आत्मा मे स्थिरता करके मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

प्रश्न ४८३—जीव के निश्चयबंध को जानने से अज्ञानी पात्र जीवों को क्या लाभ है ?

उत्तर—अज्ञानी अनादि से एक-एक समय करके राग-द्वेषादिरूप ही अपने को जानता था। जब उसने गुरु से सुना, राग-द्वेषादि वन्ध-स्वरूप पृथक् हैं और भगवान आत्मा अबन्धस्वभावी पृथक हैं। तो अपनी प्रज्ञारूपी छैनी को अपनी आत्मा के सन्मुख करके धर्म की प्राप्ति कर लेता है और फिर वह भी ज्ञानी की तरह मोक्ष को प्राप्त लेता है यह जीव के निश्चयवन्ध को जानने का लाभ है।

प्रश्न ४८४—जीव का व्यवहार बंध क्या है ?

उत्तर—जीव और द्रव्यकर्म-नोकर्म के सम्बन्ध को जीव का व्यवहार बध कहा जाता है।

प्रश्न ४८५—जीव और द्रव्यकर्म-नोकर्म मे बध की परिभाषा कैसे घटती है ?

उत्तर—जीव एक पदार्थ है—द्रव्यकर्म-नोकर्म दूसरे पदार्थ है। मोटे रूप से एक कहने मे आते हैं। परन्तु ज्ञानी पृथक्-पृथक् जानते हैं इसलिए वन्ध की परिभाषा घटती है।

प्रश्न ४८६—जीव से द्रव्यकर्म-नोकर्म तो बिलकुल पृथक् हैं। आपने इसे सम्बन्ध विशेष बध की परिभाषा मे कैसे लगा दिया ?

उत्तर—मोटे रूप से आत्मा और द्रव्यकर्म-नोकर्म रूप शरीर अलग देखने मे नही आते हैं एक दिखते हैं। इसलिए वन्ध की परि-भाषा घटती है।

प्रश्न ४८७—जीव के व्यवहार बन्ध को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर—जीव की पर्याय मे राग-द्वेषादि होते है उसमे द्रव्यकर्म

नोकर्म निमित्त होता है। भगवान अबन्धस्वभावी मे निमित्तपना नही है। इसलिए पात्र जीव अबन्ध स्वभावी की दृष्टि करके क्रम से लीनता करके सिद्धदशा प्राप्त कर लेता है। जिससे द्रव्यकर्म-नोकर्म का सम्बन्ध कभी भी नही होता है, यह व्यवहार बन्ध को जानने का लाभ है।

प्रश्न ४८८—जीव और द्रव्यकर्म के व्यवहार बन्ध को जरा स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर—शास्त्रो मे योग के कम्पन से प्रकृति और प्रदेश का तथा कषाय से स्थिति और अनुभाग का बन्ध कहा जाता है।

प्रश्न ४८९—योग के कम्पन से प्रकृति और प्रदेश का बंध होता है इसमें क्या जानना चाहिए ?

उत्तर—जीव मे योगरूप कम्पन हुआ, वह अपने उपादान से हुआ और प्रकृति-प्रदेश अपने उपादान से आया। योगगुण का कम्पन निमित्त है तो प्रकृति-प्रदेश नैमित्तिक है और योगगुण का कम्पन नैमित्तिक है तो प्रदेश-प्रकृति निमित्त है। ऐसा सहज ही निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, एक दूसरे के कारण कोई नही है।

प्रश्न ४९०—पात्र जीव क्या जानता है ?

उत्तर—(अ) योग गुण मे कम्पन हुआ, इसलिए प्रदेश-प्रकृति आया ऐसा नही है। (आ) प्रकृति-प्रदेश हुआ, तो जीव मे कम्पन हुआ ऐसा नही है, क्योकि दोनो स्वतन्त्र हैं।

प्रश्न ४९१—अज्ञानी क्या मानता है ?

उत्तर—योगगुण मे कम्पन होने से प्रकृति-प्रदेश आता है और प्रकृति-प्रदेश होने से कम्पन होता है। अज्ञानी ऐसा मानता है यह बुद्धि निगोद का कारण है।

प्रश्न ४९२—मिथ्यातव राग-द्वेषादि से स्थिति और अनुभाग होता है। इसमे क्या जानना चाहिए ?

उत्तर—(अ) जीव मे मिथ्यात्व राग-द्वेषादिभाव जीव की

विभावअर्थ पर्यायें हैं। यह जीव के अशुद्ध उपादान से है और कर्म की स्थिति और अनुभाग अपने उपादान से है। (आ) जीव के श्रद्धा-गुण मे विभाव रूप परिणमन अपने उपादान से है और दर्शनमोहनीय का उदय अपने उपादान से है। (इ) जीव के चारित्रगुण मे विभाव-रूप परिणमन जीव के अशुद्ध उपादान से है और चारित्र मोहनीय का उदय अपने उपादान से है। (ई) श्रद्धागुण के विभाव परिणमन मे और दर्शनमोहनीय के उदय मे निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है एक दूसरे के कारण नही है। (उ) चारित्र गुण के विभावरूप परिणमन मे और चारित्र मोहनीय के उदय मे निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है एक दूसरे के कारण नही है।

प्रश्न ४६३—कैसी बुद्धि छोड़नी है ?

उत्तर—जीव के कषायभावो से अनुभाग-स्थिति का बध हुआ। और जीव के योगगुण के कम्पन से प्रकृति-प्रदेश आया यह अनादि-काल की खोटी मान्यता छोडनी है और दोनो स्वतन्त्र अपने-अपने कारण से हैं। यह जानकर अपने अवन्धस्वभावी भगवान का आश्रय लेना, पात्र जीव का कर्त्तव्य है।

प्रश्न ४६४—अनुभाग और स्थिति बध क्या बताता है ?

उत्तर—जीव ने कषायभाव किया—यह बताता है, कराता नही है।

प्रश्न ४६५—प्रकृति और प्रदेश बन्ध क्या बताता है ?

उत्तर—योगगुण मे कम्पन है यह बताता है, कराता नही है।

प्रश्न ४६६—द्रव्यकर्म और नोकर्म क्या बताता है ?

उत्तर—जीव मे मूर्खता बताता है कराता नही है। जैसे—हमारी गर्दन टेढी हो, तो शीशा यह बताता है कि गर्दन टेढी है, परन्तु शीशा कराता नही है, उसी प्रकार द्रव्यकर्म, नोकर्म यह बताता है कि अभी सिद्धदशा नही है, ससार दशा है परन्तु द्रव्यकर्म-नोकर्म कराता नही है।

प्रश्न ४९७—पुद्गल का निश्चय बंध क्या है ?

उत्तर—एक परमाणु मे विशिष्ट प्रकार की पर्याय होती है वह पुद्गल का निश्चयबन्ध है।

प्रश्न ४९८—पुदगल परमाणु का निश्चयबन्ध समझ मे नहीं आया ?

उत्तर—पुद्गल के स्पर्शगुण की स्निग्ध या रुक्ष पर्याय मे दो अश है; चार अश है, छह अश हैं, वह स्पर्श गुण की स्निग्ध, रुक्ष पर्याय मे दो अधिक अश का होना यह परमाणु का निश्चयबध है।

प्रश्न ४९९—पुद्गल का व्यवहारबन्ध क्या है ?

उत्तर—(१) औदारिकशरीर, (२) कार्माणशरीर, (३) तैजस शरीर यह सब पुद्गल का व्यवहार बध है।

प्रश्न ५००—परमाणु मे निश्चयबन्ध की परिभाषा कैसे घटी ?

उत्तर—परमाणु मे स्निग्ध और रुक्ष मे दो अश, चार अश, यह दूसरी चीज है। कहने मे एक आता है। ज्ञानी अलग-अलग जानते हैं इस प्रकार बध की परिभापा घट जाती है। चार अश आदि को भी चीज कहने मे आता है।

प्रश्न ५०१—औदारिक, कार्माण, तैजसशरीर मे बन्ध की परिभाषा कैसे घटी ?

उत्तर—औदारिक आदि शरीर अनेक पुद्गलो का स्कध है यह अनेक है। कहने मे एक आता है। ज्ञानी प्रत्येक परमाणु को पृथक् पृथक् जानते हैं इसलिए बध की परिभापा घट गई।

प्रश्न ५०२—आत्मा बन्ध और मोक्ष मे अकेला है ऐसा कोई शास्त्र का दृष्टान्त है ?

उत्तर—श्री प्रवचनसार के परिशिष्ट मे ४५वे नय मे वताया है कि "निश्चयनय से आत्मा अकेला ही बद्ध और मुक्त होता है। जैसे—बध और मोक्ष के योग्य स्निग्ध या रुक्षत्व परिणमित होता हुआ अकेला परमाणु ही बद्ध और मुक्त होता है उसी प्रकार" विचारिए—इसमे

बताया है कि आत्मा अपने आप बधता है और अपने आप मुक्त होता है यह निश्चयनय का कथन है। परमाणु भी अपनी स्पर्श गुण की स्निग्ध और रुक्षत्व के कारण दो से ज्यादा अश होने पर बधता है और दो से कमी होने पर छुटता है।

प्रश्न ५०३—जीव और पुद्‌गल के व्यवहारनय के विषय मे कोई शास्त्र का आधार बताइये ?

उत्तर—श्री प्रवचनसार के परिशिष्ट मे ४४वे नय मे बताया है कि "व्यवहारनय से आत्मा बध और मोक्ष मे पुद्‌गल के साथ द्वैत को प्राप्त होता है—जैसे परमाणु के बध मे वह परमाणु अन्य परमाणु के साथ सयोग के पाने रूप द्वैत को प्राप्त होता है और परमाणु के मोक्ष मे वह परमाणु अन्य परमाणु से पृथक होने पर द्वैत को पाता है उसी प्रकार" ऐसा व्यवहारनय से जीव और पुद्‌गल के लिए कथन किया है।

प्रश्न ५०४—जीवबंध, पुदगलबध और उभयबंध के विषय मे कहीं और कुछ स्पष्ट कहा है तो बताओ ?

उत्तर—प्रवचनसार गा० १७७ मे तथा टीका मे लिखा है कि (१) "कर्मों का जो स्निग्धता-रुक्षतारूप स्पर्श विशेषो के साथ एकत्व परिणाम है सो केवल पुद्‌गलबध है। (२) जीव का औपाधिक मोह राग-द्वेषरूप पर्यायो के साथ जो एकत्वपरिणाम है सो केवल जीवबध है। (३) जीव तथा कर्म पुद्‌गलो के परस्पर परिणाम के निमित्त-मात्र से जो विशिष्टतर परस्पर अवगाह है सो उभयबध है। अर्थात् जीव और कर्म पुदगल एक दूसरे के परिणाम मे निमित्त मात्र होवें ऐसा जो (विशिष्ट प्रकार का खास प्रकार का) उनका एक क्षेत्रा-वगाह सम्बन्ध है सो वह पुद्‌गल जीवात्मक बध है।"

प्रश्न ५०५—जब एक परमाणु का दूसरे परमाणु से निश्चय बंध नहीं है तब जीव के साथ पुद्‌गल का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ?

उत्तर—कभी नही हो सकता है, क्योकि पुदगल एक जाति के

होते हुए भी उनमे निश्चयवध नही है। तो फिर जीव का पुद्गलो के साथ वध कैसे हो सकता है ? कभी भी नही हो सकता है।

प्रश्न ५०६—जीव और पुद्गल के बन्ध के विषय मे क्या बात याद रखना चाहिए ?

उत्तर—(१) जीव और पुद्गल के वध को व्यवहार वध कहा है वह दोनो स्वतन्त्ररूप से अपने-अपने उपादान से है एक दूसरे के कारण नही है। (२) आत्मा और कर्म के साथ वध होता है यह ज्ञान कराने के लिए सच्ची बात है। (३) आत्मा कर्म से वधता है यह श्रद्धा छोड़नी है। (४) मेरे मे जो रागद्वेप होता है यह निश्चय वध है। जब तक जीव अपने अवध स्वभावी भगवान आत्मा का और रागद्वेप मेरे मे मेरी मूर्खता से एक समय का है ऐसा नही जानेगा—तब तक दूसरे के दोप निकालता रहेगा और ससार परिभ्रमण मिटेगा नही।

प्रश्न ५०७—ससार के अभाव के लिए क्या करना ?

उत्तर—मैं अनादिअनन्त चैतन्यस्वभावी भगवान हूँ। मेरी एक समय की पर्याय मे मूर्खता मेरे अपराध से है। ऐसा जानकर अपनी ज्ञान की पर्याय को अपनी ओर सन्मुख करे, तो मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष का पथिक वने। यह दूसरे बोल का सार है।

प्रश्न ५०८—जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से मोक्ष हो ऐसे आठ बोलो मे से तीसरा बोल क्या है ?

उत्तर—'इन्द्रिय ज्ञान की मर्यादा क्या है' यह तीसरा बोल है।

प्रश्न ५०९—क्या इन्द्रियो से ज्ञान नही होता है ?

उत्तर—कभी भी नही होता है क्योकि ज्ञान तो ज्ञान गुण मे से आता है इन्द्रियो से नही।

प्रश्न ५१०—क्या इन्द्रिय ज्ञान से तात्त्विक निर्णय नहीं होता है ?

उत्तर—कभी नही होता है। इसलिए इन्द्रियसुख की तरह इन्द्रिय ज्ञान भी तुच्छ है। अतीन्द्रियसुख और अतीन्द्रिय ज्ञान ही उपादेय

है। अत अतीन्द्रियज्ञान से ही तात्विक निर्णय होता है।

प्रश्न ५११—तात्त्विक निर्णय मे इन्द्रियां निमित्त नहीं है, तो कौन निमित्त है ?

उत्तर—आगम निमित्त है। अत अपने आत्मा का आश्रय लेकर अपना निर्णय करे तो उपचार से आगम को निमित्त कहा जाता है इन्द्रियो को नही।

प्रश्न ५१२—इन्द्रियज्ञान दु खरूप और हेय है ऐसा कहाँ लिखा है ?

उत्तर—प्रवचनसार गा० ५५ की टीका मे लिखा है कि "आत्मा पदार्थ को स्वय जानने के लिए असमर्थ होने से उपात्त (इन्द्रिय मन इत्यादि उपात्त परपदार्थ है) और अनुपात्त (प्रकाश इत्यादि अनुपात्त परपदार्थ है) परपदार्थरूप सामग्री को ढूंढने की व्यग्रता से अत्यन्त चचल-तरल-अस्थिर वर्तता हुआ, अनन्तशक्ति से च्युत होने से अत्यन्त विकल्प वर्तता हुआ (घबराया हुआ) महा मोह-मल्ल के जीवित होने से, परपरिणति का (परको परणमित करने का) अभिप्राय करने पर भी पद-पद पर (पर्याय, पर्याय मे) ठगाता हुआ, परमार्थत अज्ञान मे गिने जाने योग्य हैं, इसलिए वह हेय है।

(४) प्रश्न ५१३ जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से मोक्ष हो ऐसे आठ बोलो मे से—चौथा बोल क्या है ?

उत्तर—विकारी और अविकारी पर्यायो की स्वतन्त्रता का ज्ञान, यह चौथा बोल है।

प्रश्न ५१४—विकारी, अविकारी पर्यायो की स्वतन्त्रता के ज्ञान से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—विकारी पर्याय और अविकारी पर्याय चाहे जीव की हो या अजीव की हो, वह अपने-अपने मे स्वतन्त्ररूप से होती है। उनका कर्ता द्रव्य स्वय ही है। दूसरा अन्य कोई कर्ता नही है।

प्रश्न ५१५—क्या विकारी पर्याय जीव, पुद्‌गल की स्वतन्त्र है ?

उत्तर—हाँ, दोनो की स्वतन्त्र है। यदि जीव यह जाने कि विकार मेरी गलती से ही है। गलती रहित स्वभाव का आश्रय लेकर गलती का अभाव कर सकता है। और यह जाने कि गलती पर ने कराई है तो कभी भी दूर नही कर सकता है। इसलिए जीव विकार करने मे भी स्वतन्त्र है और मिटाने मे भी स्वतन्त्र है।

प्रश्न ५१६—विकारी, अविकारी पर्याय स्वतन्त्र है ऐसा श्री समयसार मे कहीं आया हे ?

उत्तर—श्री समयसार जयसेनाचार्य कृत मूरत से प्रकाशित गा० १०२, पृष्ठ ९८ मे लिखा है कि "···जो शुभ और अशुभभाव करता है उस भाव का स्वतन्त्र रूप से स्पष्टपने कर्ता होता ह और उस आत्मा का वह शुभ व अशुभ परिणाम भावकर्म होता है क्योंकि वह भाव आत्मा द्वारा किया गया है।"

प्रश्न ५१७—विकारी, अविकारी पर्यायें स्वतन्त्र हैं। ऐसा कहीं श्रीप्रवचनसार मे भी लिखा है या नहीं ?

उत्तर—श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार श्री जयसेनाचार्य कृत गा० १२२ मे लिखा है कि "जो क्रिया जीव ने स्वाधीनता से शुद्ध या अशुद्ध उपादान कारण रूप से प्राप्त की है वह क्रिया जीव का कर्म है यह सम्मत है। यहाँ कर्म शब्द से जीव से अभिन्न चैतन्य कर्म को लेना चाहिए। इसी को भावकर्म या निश्चयकर्म भी कहते हैं······ इसी प्रकार पुद्‌गल भी जीव के समान निश्चय से अपने परिणामो का ही कर्ता है।"

प्रश्न ५१८—कैसी श्रद्धा करनी चाहिए ?

उत्तर—प्रत्येक जीव और पुद्‌गल की पर्याय विकारी हो या अविकारी हो वह स्वतन्त्र रूप से होती है। ऐसी श्रद्धा करनी चाहिए।

प्रश्न ५१६—कैसी श्रद्धा छोड़नी चाहिए ?

उत्तर—जीव और पुद्गल की पर्याय एक दूसरे से होती है। ऐसी खोटी श्रद्धा छोडनी चाहिए।

प्रश्न ५२०—जीव से विकारी पर्यायें स्वतन्त्र होती हैं इसको जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—(१) विकारी पर्याय अशुद्ध निश्चयनय का विषय है, तो शुद्ध निश्चय का आश्रय लेकर अभाव कर सकता है। (२) विकारी पर्याय पर्यायार्थिकनय का विषय है, तो द्रव्यार्थिकनय का आश्रय लेकर अभाव कर सकता है। (३) विकारी पर्याय पराश्रितो व्यवहार है, तो स्वाश्रितो निश्चय का आश्रय लेकर अभाव कर सकता है। (४) विकारी पर्याय औदयिकभाव है, तो पारिणामिक भाव का आश्रय लेकर अभाव कर सकता है। (५) विकारी पर्याय अशुद्ध पारिणामिक भाव है तो परम शुद्ध पारिणामिक भाव का आश्रय लेकर उसका अभाव कर सकता है। इसलिए विकारी, पर्यायें स्वतन्त्र हैं।

(५) **प्रश्न ५२१—जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से मोक्ष हो। ऐसे आठ बोलो मे से पाँचवाँ बोल क्या है ?**

उत्तर—"विकारी पर्याय को पराश्रित क्यो कहा है" यह पाँचवे बोल का नाम है।

प्रश्न ५२२—विकारी पर्यायें स्वतन्त्र हैं तो शास्त्रो मे विकारी पर्यायो को पराश्रित क्यो कहा है ?

उत्तर—विकारी पर्याय स्वतन्त्र होते हुए भी विकार मे पर का निमित्त होता है इसलिए विकारी पर्यायो को पराश्रित कहा है। पराश्रित कहने से 'पर से हुआ है' ऐसा अर्थ मिथ्या है।

प्रश्न ५२३—विकारी पर्याय को पराश्रित कहा है। यह किस शास्त्र मे कहा है ?

उत्तर—परमात्मप्रकाश १७४ वें श्लोक पृष्ठ ३१७ मे लिखा है कि "यह प्रत्यक्ष भूत स्वसम्वेदन ज्ञानकर प्रत्यक्ष जो आत्मा, वही शुद्ध निश्चय कर अनन्त चतुष्टय स्वरूप, क्षुधादि १८ दोष रहित निर्दोष परमात्मा है तथा वह व्यवहारनय कर अनादि कर्म बन्ध के विशेष से पराधीन हुआ दूसरे का जाप करता है।"

प्रश्न ५२४—विकारी पर्याय पराश्रित है। इस विषय मे श्री समयसार मे कहीं कुछ कहा है?

उत्तर—"इससे करो नहि राग वा, ससर्ग, उभय कुशील का।
इस कुशील के ससर्ग मे है, नाश तुझ स्वातन्त्र्य का ॥४७॥

अर्थ—इसलिए इन दोनो कुशीलो के साथ राग मत करो, अथवा ससर्ग भी मत करो, क्योकि कुशील के साथ ससर्ग और राग करने से स्वाधीनता का नाश होता है।

प्रश्न ५२५—क्या श्रद्धा करनी और क्या श्रद्धा छोडनी चाहिए?

उत्तर—(१) पर के आश्रय मे स्वाधीनता नष्ट होती है। इसने अपना आश्रय छोडा है, तो पर के साथ सम्बन्ध जोडा है, यह कहने मे आता है। वास्तव मे ऐसा है नही ऐसी श्रद्धा करनी। (२) पर के आश्रय से कुछ भी होता है ऐसी खोटी मान्यता छोडनी है क्योकि जिनेन्द्र भगवान इससे सहमत नही हैं।

प्रश्न ५२६—जिनेन्द्र भगवान किससे सहमत नहीं है?

उत्तर—दो द्रव्य की क्रियाओ को एक द्रव्य करता है इससे सहमत नही है।

(६) प्रश्न ५२७—जिससे सम्यग्दर्शन हो, फिर क्रम से मोक्ष हो ऐसे आठ बोलों में से छठा बोल क्या है?

उत्तर—"जब विकारी पर्याये स्वतन्त्र है तो शास्त्रो मे स्व-पर प्रत्ययो को क्यो कहा है" यह छठा नाम है।

प्रश्न ५२८—विकारी पर्यायें स्वतन्त्र हैं तो स्व-पर प्रत्यय क्यों कहे गये हैं?

उत्तर—उपादान और निमित्त का ज्ञान कराने के लिए स्व-पर प्रत्यय कहे गये है। क्योकि जहाँ उपादान होता है वहाँ निमित्त होता ही है ऐसा वस्तु स्वभाव है।

प्रश्न ५२९—स्व-पर प्रत्यय से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जहाँ पर दो कारण बताने मे आवे तव स्व-पर प्रत्यय कहा जाता है। जैसे—जीव-पुद्गल चले तो धर्मद्रव्य को निमित्त कहा जाता है। जीव-पुद्गल मे क्रियावती शक्ति का गमन रूप परिणमन स्व और धर्म द्रव्य के गतिहेतुत्व का परिणमन पर, इस प्रकार स्व-पर प्रत्यय कहे जाते है।

प्रश्न ५३०—स्व-पर प्रत्यय के लिए कोई शास्त्राधार दीजिए ?

उत्तर—श्री प्रवचनसार जयसेनाचार्य की गा० ९ की टीका मे लिखा है। कि "जैसे स्फटिकमणि विशेष निर्मल है परन्तु जपा पुष्पादि लाल-काले श्वेत उपाधिवश से लालश्वेत वर्ण रूप होता है।" इसमें बताया है स्फटिक निर्मल होने पर भी लाल-काला स्वतन्त्र परिणमन से हुआ है पर से नही। लेकिन पर निमित्त होता है, उसी प्रकार आत्मा स्वभाव से शुद्ध होने पर भी उसकी पर्याय मे विकार है और कर्म निमित्त है परन्तु विकार कर्म के कारण नही हैं। (इसके लिए विशेष तौर से प्रवचनसार गा० १२६ की टीका सहित देखो)।

प्रश्न ५३१—व्यवहार मे पर की बात क्यों कहने मे आई ?

उत्तर—पर का आश्रय कहने मे आता है यह व्यवहार कथन है। पर कराता है, ऐसी अनादि की खोटी मान्यता छोडकर, अपना आश्रय लेकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति कर क्रम से निर्वाण होना, यह जानने का लाभ है।

प्रश्न ५३२—श्री पंचास्तिकाय गा० ६२ मे क्या बताया है ?

उत्तर—सर्व द्रव्यो की प्रत्येक पर्यायो मे छहकारक एक साथ वर्तते हैं। इसलिए आत्मा और पुदगल शुद्धदशा मे या अशुद्धदशा में

स्वय छहो कारक रूप परिणमन करते है। दूसरे निमित्त कारको की अपेक्षा नही रखते हैं।

प्रश्न ५३३—यह छठा विभाग क्यो किया ?

उत्तर—अज्ञानी अनादि से एक-एक समय करके पर के साथ का सच्चा सम्बन्ध मानता है। उस झूठी मान्यता को छुडाने के लिए और राग का भी आश्रय छोडकर अपने त्रिकाली आत्मा का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे इसलिए छठा विभाग किया है।

(७) प्रश्न ५३४—जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से निर्वाण हो ऐसे आठ बोलो मे से सातवें बोल का क्या नाम है ?

उत्तर—"प्रत्येक स्कध मे हर एक परमाणु अपना-अपना स्वतन्त्र कार्य करता है" उसका ज्ञान कराने के लिए सातवाँ बोल है।

प्रश्न ५३५—पुद्गल के कितने भेद हैं ?

उत्तर—परमाणु और स्कध यह दो भेद हैं।

प्रश्न ५३६—स्कध कितने परमाणुओ को कहते हैं ?

उत्तर—दो से लेकर अनन्तानन्त परमाणुओ तक सब स्कध कहलाते हैं।

प्रश्न ५३७—क्या स्कंध स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है ?

उत्तर—नही है। परमाणु ही स्वतन्त्र द्रव्य है।

प्रश्न ५३८—स्कंध स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है परमाणु ही स्वतन्त्र द्रव्य हैं इसके लिए कोई शास्त्राधार है ?

उत्तर—(१) नियमसार गाथा २० मे लिखा है कि "परमाणु वह पुद्गल स्वभाव है और स्कध वह विभाव पुदगल है" (२) नियमसार गा० २१ से २४ तक मे लिखा है कि यह विभाव पुदगल के स्वरूप का कथन है। (३) नियमसार गा० २९ की टीका मे लिखा है कि शुद्ध निश्चयनय से स्वभाव शुद्ध पर्यायात्मक परमाणु को ही "पुद्गल द्रव्य" ऐसा नाम होता है अन्य स्कध पुद्गलो को व्यवहार-नय से विभाव पर्यायात्मक पुद्गलपना उपचार द्वारा सिद्ध होता है।

परमाणु को निश्चय द्रव्य कहा है और स्कंध को व्यवहार से पुदगल कहा है।

प्रश्न ५३६—स्कंध स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है परमाणु ही स्वतन्त्र द्रव्य है इसके लिए श्री पचास्तिकाय मे कहाँ बताया है ?

उत्तर—(१) पचास्तिकाय गा० ७६ मे "बादर और सूक्ष्म रूप से परिणत स्कधो को 'पुदगल' ऐसा व्यवहार है।" (२) पचास्तिकाय गा० ८१ मे लिखा है कि "सर्वत्र परमाणु मे रस-वर्ण-स्कध स्पर्श सहभावी गुण होते हैं और वे गुण उसमे क्रमवती निज पर्यायो सहित वर्तते हैं।" और स्निग्ध-रूक्षत्व के कारण बन्ध होने से अनेक परमाणुओ की एकत्व परिणति रूप, स्कध के भीतर रहा हो तथापि स्वभाव को न छोडता हुआ, सख्या को प्राप्त होने से (अर्थात् परिपूर्ण एक की भाति पृथक् गिनती मे आने से) अकेला ही द्रव्य है।

इसमे बताया है कि स्कध मे भी प्रत्येक परमाणु स्वय परिपूर्ण हैं, स्वतन्त्र हैं। पर की सहायता से रहित और अपने से ही अपने गुण पर्यायो मे स्थित है।

प्रश्न ५४०—स्कध स्वतन्त्र द्रव्य है इसके लिए श्री समयसार में कहीं कुछ बताया है ?

उत्तर—श्री समयसार गा० २७ मे लिखा है कि "जैसे इस लोक मे सोने और चांदी को गलाकर एक कर देने से एक पिण्ड का व्यवहार होता है, उसी प्रकार आत्मा और शरीर की परस्पर एक क्षेत्र मे रहने की अवस्था होने से एकपने का व्यवहार होता है। यो व्यवहार मे ही आत्मा और शरीर का एकपना है। परन्तु निश्चय से देखा जावे तो जैसे पीलापन आदि और सफेदी आदि जिसका स्वभाव ऐसे सोने और चाँदी मे अत्यन्त भिन्नता होने से उनमे एक पदार्थपने की असिद्धि है। इसलिए अनेकत्व ही है।" व्यवहारनय जीव और शरीर को एक कहता है किन्तु निश्चयनय से एक पदार्थपना नही है।

प्रश्न ५४१—क्या प्रत्येक स्कंध मे प्रत्येक परमाणु अलग-

अलग हैं ?

उत्तर—स्कध मे जितने परमाणु है उनमे प्रत्येक परमाणु पूर्ण रूप से अपना ही कार्य करता है दूसरे का बिल्कुल नही करता। ऐसा ही केवली के ज्ञान मे आया है और ऐसा ही ज्ञानी जानते हैं।

(८) प्रश्न ५४२—जिससे सम्यग्दर्शन हो और फिर क्रम से मोक्ष हो ऐसे आठ बोलो मे से आठवें बोल का क्या नाम है ?

उत्तर—"अर्थपर्याय और व्यजनपर्याय के विषय मे मिथ्या मान्यता क्या है" वह आठवां बोल है।

प्रश्न ५४३—पर्याय कितने समय की है ?

उत्तर—व्यजनपर्याय हो या अर्थपर्याय हो, चाहे वह स्वभाव रूप हो या विभावरूप हो सब एक-एक समय की ही होती है, ज्यादा समय की कोई भी पर्याय नही होती है

प्रश्न ५४४—श्री पंचास्तिकाय जयसेनाचार्य गा० १६ मे लिखा है कि "अर्थपर्यायें अत्यन्त सूक्ष्म, क्षण-क्षण मे होकर नष्ट होने वाली हैं जो वचन के गोचर नहीं हैं। व्यंजन पर्याय जो देर तक रहे और स्थूल होती है, अल्पज्ञानी को भी दृष्टिगोचर होती है वह व्यंजन-पर्याय है" फिर व्यंजनपर्याय एक समय की होती है यह बात झूठी साबित हुई ?

उत्तर—अरे भाई, व्यजनपर्याय भी एक ही समय की होती है ? परन्तु समय-समय की होकर, वैसी की वैसी होने से, देर तक रहे स्थूल होती है। अल्पज्ञानी को भी दृष्टिगोचर होती है यह कहा जाता है, वास्तव मे ऐसा हैं नही।

प्रश्न ५४५—शास्त्रो मे दर्शनमोहनीय कर्म की सत्तर कोड़ाकोड़ी स्थिति बतलाई, वहाँ एक-एक समय की पर्याय कहाँ रही ?

उत्तर—शास्त्रो मे जो दर्शनमोहनीय की सत्तर कोडाकोडी सागर की स्थिति बताई है। उसका मतलब यह है कि वह स्कध कब तक रहेगा अर्थात् एक-एक समय बदलकर सत्तर कोडाकोडी सागर तक

रहेगा यह तात्पर्य है।

प्रश्न ५४६—एक-एक समय का एक-एक भव है, ऐसा शास्त्रों मे कहाँ बताया है ?

उत्तर—भाव पाहुड गाथा ३२ की टीका मे लिखा है कि" .... जो आयु का उदय समय-समय करि घटे है सो समय-समय का मरण है ये आविचिका मरण है।"

इसमे बताया है जीव समय-समय मे मरता है क्योकि पर्याय एक एक समय की होती है। वास्तव मे एक-एक समय का एक-एक भव है क्योकि सूक्ष्म ऋतुसूत्र नय की अपेक्षा गति कितनी देर तक चलेगी यह बात भाव पाहुड मे बताई है। इसलिए "जैसी मति, वैसी गति" होती है और 'जैसी गति, वैसी मति' होती है।

प्रश्न ५४७—'जैसीमति-वैसीगति' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जीव जिस समय जैसा भाव करता है, वह उस समय वह ही है यह तात्पर्य है। जैसे—मनुष्य भव होने पर घर मे ज्यादा आदमी है वहाँ आँख लाल-पीली ना करे और जरा फूँफाँ ना करे तो लोग बिगड जावे, ऐसा जानकर जो जीव फूँफाँ करता है वह उस समय साँप ही है।

प्रश्न ५४८—'जैसी गति वैसी मति' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जैसे—कोई जीव साँप बन गया, तो वहाँ वह एक-एक समय करके फूँफाँ ही करता रहेगा अर्थात वैसा का वैसा करता रहने की अपेक्षा 'जैसी गति, वैसी मति, कहा जाता है। परन्तु सब जगह पर्याय एक ही समय की होती है ऐसा जानना।

प्रश्न ५४९—शब्द तो स्कधो की पर्याय है उसमे एक समय की बात किस प्रकार है ?

उत्तर—जब तक परमाणु रहता है तब तक उसका शब्दरूप परिणमन नही है। स्कधरूप पर्याय मे अपनी योग्यता से शब्द रूप पर्याय होती है। शब्दरूप स्कध मे एक-एक परमाणु अलग-अलग रूप से स्वतन्त्र परिणमन कर रहा है।

प्रश्न ५५०—जीव के विकारी भावो के विषय मे और द्रव्य कर्म के उदय आदि के विषय में क्या जानना चाहिए ?

उत्तर—जीव मे एक-एक समय मे जो विकारी भाव होता है। वैसा-वैसा अपनी योग्यता से पुद्गलो मे भी समय-समय परिणमन होता है। जैसे जीव मे क्षयोपशम भाव हुआ तो द्रव्यकर्म मे भी क्षयोपशम भाव एक समय पर्यन्त स्वतत्र होता है।

प्रश्न ५५१—जब जीव में भावकर्म हुआ तब द्रव्यकर्म होता है ऐसा कहीं लिखा है ?

उत्तर—(१) आत्मावलोकन मे लिखा है कि "भाववेदनीय, भाव-आयु, भावगोत्र उसके सामने द्रव्यवेदनीय, द्रव्यआयु, द्रव्य-नाम, द्रव्य गोत्र होता है।"

(२) प्रवचनसार गा० १६ की टीका के अन्त मे लिखा है कि "द्रव्य तथा भाव घाति कर्मों को नष्ट करके स्वयमेव आविर्भूत हुआ।"

प्रश्न ५५२—जब जीव में भावकर्म होता है तब द्रव्यकर्म स्वयमेव अपनी योग्यता से होता है इससे हमे क्या लाभ है ?

उत्तर—(१) एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही है। (२) प्रत्येक द्रव्य मे अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण मे हर समय एक पर्याय का व्यय और दूसरी पर्याय की उत्पत्ति, गुण वैसा का वैसा रहता है। ऐसा प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण मे अनादि से हुआ है, वर्तमान मे हो रहा है और भविष्य मे ऐसा ही होता रहेगा। ऐसा सब द्रव्यो मे द्रव्य-गुण पर्यायस्वरूप पारमेश्वरी व्यवस्था है, इसे तीर्थंकर देव आदि कोई भी हेर-फेर नही कर सकते है ऐसा जानकर अपने त्रिकाली भगवान की दृष्टि करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रम से मोक्ष का पथिक बनना प्रत्येक पात्र जीव का परम कर्तव्य है।

— समाप्तम —

जय महावीर